65	Bhagavatam (Chaturth)	भागवतम् (चतुर्थ)

ने छि का य भे ने नुँ व ह्र र म नो नु ञ्च ग टि पां ति का र हुं का यँ ञ्च जि पि
व ति र म न ञ श्रा रि यि झ न र पा र वा षि तु च ञ्चा ॐ शि ट ने ठ यँ ग हुं
छि व सै ख छ ल प ए श्रा ले द्दि ञ्जुं कृ टे यै ल वु ह्न त कु रु मृ र न ट तुं
दी ग ता
बो ख

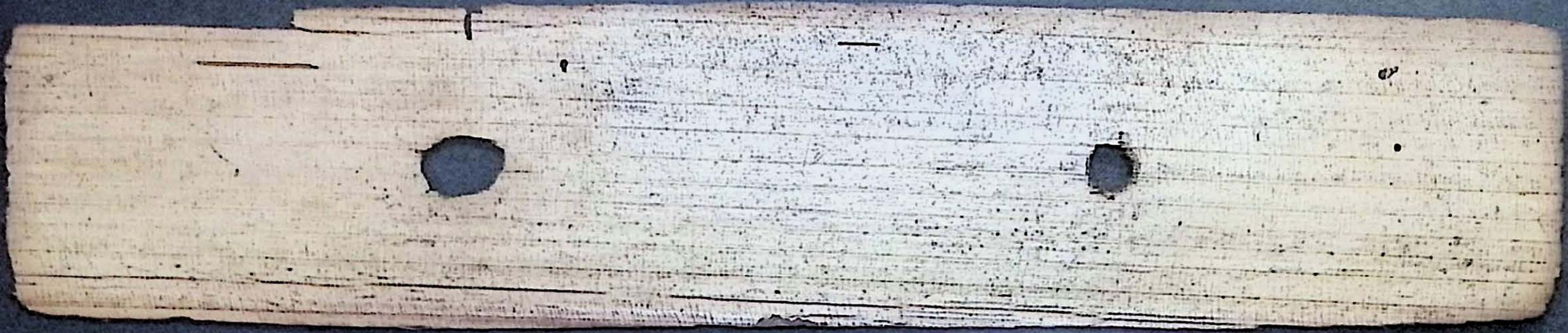

ഹരിഃ ശ്രീ ഗണപതയെ നമഃ [illegible]
[illegible]

[illegible]

[illegible]

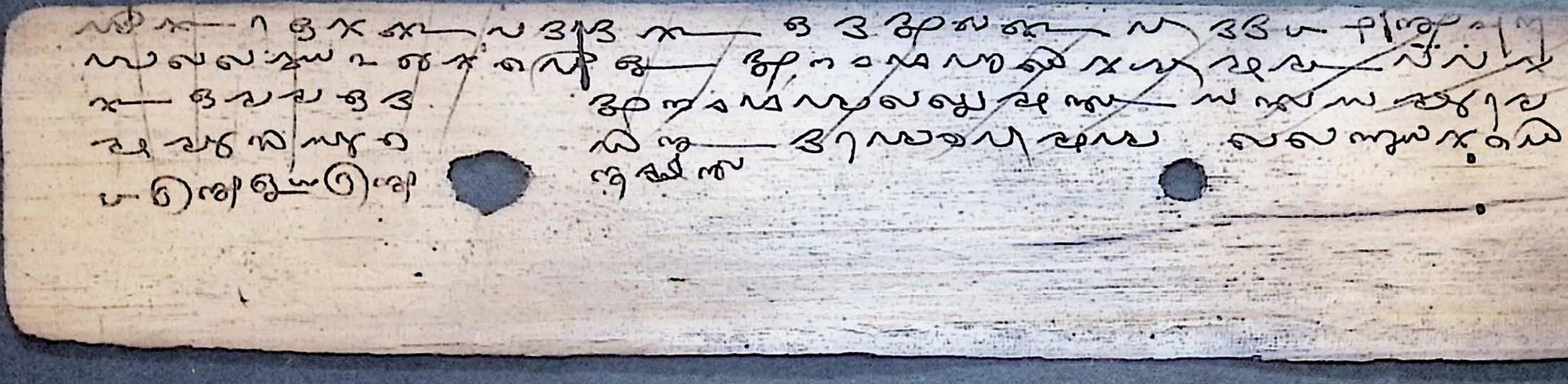

स दा म द्य मे त त्प्र धा नँ प्र य का।१२।त्व म प्यँ ब मो।प २५ ॥
मे व व्याधि शा सौ॥ बद्धे क्षो श भो जँ ब ती भो ज ने जे भ वा षा।।न म ण्ण भ ५ खा द्य पा
रँ।१३।श्र ने न स्त वे नो द रा दँ बि के शं प रँ भ ति मा त ष तो ये ण म क्षि
म्ह तौ नि र्भ यास्त्त ल स सँ ल भ से द्द कदं भो ज म च्छे स मा सी नमी रं ॥
१४। शै वँ भु जँ ग प्र या सं स मा सँ ॥ प्र बँ पो दि तिजो न रा द्ध व पु ष्पासिं हे न
नि स्सा रि त सो यँ वि स व स: ड्डा तोऽ स्ग र स्ता ता ग भी भा वो रा व पा: ते ना ती व स दा ग त्र यभि
दं ष्टु ष्टे व सँ त्ता पि तं त्रा त स्त द्ध घ हे त वे द रा र पा त स्री रा म ना मा ह रि:॥

ग्रामपातारमेतादृशं मे। इदानीमिदानीष्टति मेमभविनीत्यहासः सताव
पीडितोस्मि॥ कपद्माममाभ्रूभ्रूतो भीतिरेषा न मस्तेगतीनांगते नीलक(ण्ठ)॥ ६॥
स्त्रमर्यादमेवा ष्मा बालदृष्टं हरणहतास्त्रसमीक्ष्या स्मिमी तः॥ मृ
तोतावदस्यातवै वप्रसादाम्भवानीपते निर्णयो हं भवानि॥ ७॥ जराग्र
स्त गर्भाधिवासा दि दुःखान्यसह्यानि जन्माजगन्नाथ वो न॥ भवत्संविना
मेगतिर्मे वशंभो दयालो न जागर्ति किं वादयाते॥ ८॥ शिवायेति शब्दो नमःपूर्व
एव स्फुटं मुक्तिकृन्मृत्युहा तत्ववाची॥ महे

स्यं ठं भावयेयं ॥४॥ यदा यातनादेहसन्देहवाहीभवेदात्मदेहेन मोहोमहालो।
तदाकाराराीतां शुसंकाशंमीरास्मरारेवपुस्तेनमस्ते स्मरा॥५॥ यदा पारम
कायमस्थानम भिर्जनैर्वाविहीनं गमिष्यामि मार्गं॥ तदा तन्निरूढं
ह्यतार्थं वमार्गं म्महादेवमह्यम्मनोरं पय क्ष॥६॥ यदा रौरवेह
स्मरन्नेव भीत्या वजन्नेकमोहं गमिष्यामि घो रे॥ तदा मामेहोत्त
तकिंतारयिष्यस्यनाथं पराधीनमह्वेन्दुमौले॥७॥ यत्याखेतमचायतात्तंस्वच्छ
राकैः शताताम वाम्भे त्ता दाक्षिण्यभारात्त्र॥ तव्याप्यहि मांपार्वतीवल्लभानाः

हरिः यदा कुरूणा भव पाणा भी ष णा मे भविष्यत्यु पा ते क्ष ता न स्य द्रु ताः॥ तदा मन्म
न स्व त्प दा भौ रूह स्थ क प ञ्चि स्व लं स्या भ्र म स्ते स्त्र रौ भो॥१॥ यदा दु र्भि वा र
व्य यो हं रा या नो लु ठ ञ्चि ष्ट न ञ्चि स्स्ट ता व्य ता का णि:॥ तदा ज न्हु का न्या
6 ञ्जं ष्टा तं चे ज टाम ण्ड ल म्म न्म नो मद्धि रं स्यात्॥२॥ यदा पु च भि न्नां द पो
म त्स का रो रु दाम थ्य स्य हा की ट री य न्द्र रोति॥ तदा दे व दें वे रा
7 गौ री रा रौं भो न म स्ते रि वा यै त्य ज सं ब वा णि॥३॥ यदा प श्य ता म्मा म सौ वे ति ना स्मा
न यं स्वा स ए वे ति वा बौ भ वे यु:॥ त. दा भू ति क्ष षं भ जं गा व न द्धं प्र रा रे भ व त्तं

रा कै खरां य न मुः॥मा ती एड यें न मः॥ न्य्र ख स्प क ऐठ रा र चां प ह स्तंति पु
त्रमी ङ्गं व र दं व रे रायं॥रा नै स्व रं भू त ग तो र्द तं तं न मा म्य ह ङ्कुः
स्व वि ना रा ना   यं॥ रा नि स्त वं स मा तं॥सी रा मा यं न मः॥
ति वा ः पा द न्न्न क   क्षि का ग॥म यी म ध्ये तु का   त्री पु रीं ना भि द्वीर
क ती व सा सि द्ध द   ये मा या पु री यो गि नः॥ जि हा मू ल मु दा ह . र वि म ध्ये रा
ना सा ग्र वा रा ता सी ता वं ङ्क ह्म प दं व दं त्रि म न यो यो ध्या पु री म स्त के।॥
ति प्र त्ये ता ङ्गं त ब्रन्ये ग क ती ति कि म ङ्कुं तं। न व द्वा रे व पुः क्रं भे जीव जं भ ः प पूरि ते॥

मन्दु वारे शुचि रत्ना ता पुत्वा हारो जितें च्छिय:॥ तद्दर्भिक्का सुमे र्भ्मि दमभ्य च्च
द्विजस त्त मे:॥ पूज पि तार्ग्घ्य पा द्यो रव स्त्रा त्रं य: प्रपत:प ठेत्॥ चिन्ति ता नि च स
र्वा णि स म्ब ग्या क्ति न सं श य:॥ पुत्र का मो ल भे त्पु त्रं धा न का मो ध
नं ल भे त्॥ शत्रे स्व र भ य भ्रा स्ति ल क्ष्मी मा पु स्व कि न्दू ति॥ जमो
र्क्षु पु त्रा य शमे स्व रा य बी हा र व र्णां ज न मे च का य॥ सु ता रं र्ह रस्य
ष्म म का म मा शु प त्न प्र दो मे भ व स्तु र्य पु त्र॥ स्ती स्तु र्य पु त्रा य नम:

थ माभा ज न म र कृत्य रा नै स्व रँ। रा नि नी त्व भ्य न्ड जा त स्व स्था नँ ग
पः॥ स्व स्था न ह्र त तों ग त्वा प्रा प्त का मो भ व तद्वा॥ को एः य नै स्व रो भ न्द्व श्व
न न्द न ः॥ मा र्त्तो   (ड ज स्त्त या सौ रिः पा तँ गि ब्र ड ना य काः॥
ज्ञ र क मी च न्नी)   ल व स्त्रो अ न द्व तिः॥ द्वा द शे   ता नि ना
स त्था स य ः प   छेऱ॥ द्वा द शा ष्ट म त न्म स्थो.पे   का द स
रा नै स्व र भ प ब्रा स्ति ल द्मी मा यु स्व वि न्द ति॥ स प्र ज न्म ह्य तं प
त्ता दे व न श्य ति॥ वि प म स्था पि भ ग वा न्द्र स्र पी त स्त्त स्य

सगतोपिका ॥ कपः पुनः सद्द यायुक्तः ऊचि स्नाबासमाद्रि तः ॥ त्र
मुम्भ्रुच्य प्रतिमाँ लोहजाम्म म ॥ माषेद नति नैम्मि सँदद्या ओ हैं च
मोगाँ वा द्द पे तापि मामुहि स्य द्वि जा त ये ॥ महि ने ३ बि शे षे
नेन प ग येत ॥ पु ज यि बा ज पेत सों जँ भू त्वा दै व छ तो ज
(6) पीडाभवै वाहैं करि ष्यामि कदाच न ॥ गोचरे जन्मत न्न वा द
स्वपि ॥ त्य द्या मिस त तं चास्य पीडाँ वान्य ग्र हे स्य च ॥ अ्रने नैव प्रका
डा मक कँ ज गा भे वेत्ता व र द्व य तु सं प्राप्य राजा द श र थ स्त दा ॥ मे

ह्रीं क्लीं हूं फट् रोमास पार्थिवं॥ शनिरुवाच॥ तुष्टोहं तव राजेन्द्र स्तोत्रेणानेन
वरं ब्रूहि प्रदास्यामि मनसा यदभीप्सितं॥ दशरथ उवाच॥ ~~अद्य प्रभृ~~
पीडा कार्या न क स्यचित्॥ देवासुरमनुष्याणां पशुपक्ष
शनिरुवाच॥ ग्रह णा ह्य ग्रहा ज्ञेया ग्रहाः पीडाकरा स्मृताः॥
रोस्माभिस्तुष्टोहं तु ददामि ते॥ देवासुरमनुष्याणां सिद्धविद्याध
पशुपक्षिमृगा वृक्षाः पीडामोक्ष्यसि सर्वदा॥ त्वया प्रोक्तमिदं स्तोत्रं यः प
ठः॥ एककालं द्विकालं वा पीडां मुञ्चामि तस्य वै॥ मृत्युस्थानगतो वा

दे हा य नि त्यं योग र ता य च ॥ ज्ञा ब्द ष्टे न म स्तो स्त का स्य पा त्म ज स
श्रो द दासि राज्य च्च स्थ वै ह र सि द्ध गा त ॥ दे वा सु र म न्व्या स्व सि द्ध वि
गा ॥ च या व लोकि ता स्स बैं दे न्य मा शु ब ज ति ते ॥ ब मा रा ओ य
ज्ञा ष यः स स तार काः ॥ रा ज्य भे षा न व श्री ह त व ट्ट प्या व लो
शा स्व न ग र ग्रा मा ही पा स्व भि र य स्त ध्या वं या व लोकि ता स्स बैं न
स्न न तः ॥ प्र सा दं कु रु मे सौ रे व रा स्थौ य न व स्त वः ॥ त्व मे वं स्तु य से सौ
न व रा वै स्व र ॥ त्वं स्तु त स्त दा सौ रि ब्र ह रा जो म हा ब लः ॥ श ब वी ह

पकलोमुख नंमोस्तु ते॥ स्तुप्य प्रचन नमस्ते स्तु भास्करे भयदायिने॥ उग्रघो
रहैं नमस्ते स्तु संवर्तक नमो नमः॥ कालाग्नि रुद्र रूपाय कृता[illegible]यन
मो नमः॥ नमो मद्भगते तुभ्यं बिरिञ्चशाय नमो नमः॥ [illegible]प भास्वध

ध्या ता न र स्व ती द्धे वी ग ण ना यं वि का य कं ॥ रा जा दृ श र य स्ता नं सौ र रि द म
था क रे ला ॥ द रा र य उ वा च ॥ न मः कृ ष्णा य का ला य शि ति क ण्ठ नि भा य च ॥ न मो नी
ल म घ्न स्वा य नी लो त्प ल नि भा य च ॥ न मो नि र्मां स दे हा य दी र्घ स्म श्रु
२ ज टा य च ॥ न मो वि शा ल ने त्रा य शु क्रो द र भ या न क ॥ न मः पु रु ष
गा त्रा य स्थू ल रो मा न मो न मः ॥ न मो नि त्यं दु घा ति य खा ट ता य ते न
मः ॥ न मो दी र्घा य रु का य का ल दं ष्ट्रा य ते न मः ॥ न म स्ते क्रो ध रू दा य रि री ता
य ते न मः ॥ न मो घो रा य रौ द्रा य भी ष णा य क रा लि ने ॥ न म स्ते स र्व ता

ब्रू हि प्र दा स्या मि म न सा य द भी प्सि तं । द श र थे उ वा च ॥ रो हि णी श क टं भि त्वा न
ग न्त व्य त्व या श ने ॥ स रि तः सा ग राः स र्वे या व द्व न्द्रा र्क मे दि नी ॥ या चि तं त्व म या
॥ सौ रे बा न्य मि का ... म्य हं व रं ॥ श्री चे द व्या स उ वा च ॥ ए व मु क्त्वा द श र थ
स्प त वा न ग्र तो ... स्य वै ॥ ए व म स्त्वि ति सं प्री तो ... व रं त स्मै प्र द त्त
वा न्व ॥ की र्ति रे षा ... त्व दी या च त्रै लो क्ये तु भ वि ष्य ... ति ॥ प्रा प्य चै वं व रं रा
जा कृ त ता र्थो भ व त्त दा ॥ द्वा द शा ब्दं तु दु र्भि क्षं का र्त्त वि ष्ण भ वि ष्यति ॥ ए वं च रं
तु सौ प्रा प्य ह र्ष रो मा ञ्च पा र्थि वः ॥ र थो प स्थे ध नु स्था प्य न्य स्त्वा चै व कृ तां ज लिः

टकाटकोचलै॥ यआज्ञततदाकारोद्वितीयजुवभास्वरः॥ आकर्णाप्रणीचापंस्तुसं
हाराखनियोजितं॥ संवृत्यतरसातस्यैोराज्ञोदशरथोरथे॥ क्षत्रिकाशेशनिसिंहत्वाप्रवि
२ शथकिलरोहिणीं॥ दृष्ट्वादशरथंवाग्रेस्थितंसमुकुटीमुखं॥ सैधारास्त्रिश
२ निर्दृष्ट्वासुरासुर भयंकरं॥ हसित्वाततार्णेयासौ रिरिदंवचर्वाम
ब्रवीत्॥ राजैरव रउवाच॥ साहसक्ष्वराजे द्रुमयादृष्टन्नक
स्यचित्॥ देवासुरमनुष्याश्वसिद्धविद्याधरोरगाः॥ मयार्क्तोकितायाजद्
मेस्मतानुवन्तिते॥ तुष्टोहबवराजेन्द्रतपसापौरुषेणाचवरं

मुखाद्विजाः'' समाधाने किमस्यासि ब्रूत मे द्विजसत्तमाः'' प्रज्ञानी परिरद्धा येत
रिमवभिक्षेडातः प्रजाः'' तच्छुत्वा मुनयः सर्वे प्रोचुरस्य बलम्महत्'' ऋषयः ऊचुः''
इदं योगमसाध्य तु ब्रह्मराक्षादिभिः सदा'' एवं संचिन्त्य मनः सासाहस
परमम्महत्'' स मादाय धनुर्दिव्यं दिव्यायुध समन्वितं'' एयमा
रुह्य वेगेन गतो बदन्तमहाडलं'' सयादयोजनं लक्षं सूर्यस्यो परि सं
स्थितं रोहिणीपृष्ठतस्याप्य राजा दशरथस्तदा'' रथस्तु कांचने दिव्यो मणिरत्न
विभूषितेः'' हंसवर्णैरुपैर्युक्ते महावेगे समाश्रिते'' दीप्यमानो महारत्नैः किर

श्री ग तो सा य न म ः र घु वं श इ ति स्या तो रा जा द शं र थः पु रा ॥ च त्रा व र्ति स व
र्वे यः स म ही पा धि पो ब भौ ॥ श्री ति का ते श ने यी त्रा ब्दे च ज्ञै नी पि म हि स्रः ॥ शै
हि णी श क टं भि त्वा श नि र्या स्य ति सां प्र तं ॥ इ सं श क ट भे दे च द्वा
1 द श सु र भ यं करं द्वा द शा ब्दं तु दु र्भि क्षं भ वि ष्य ति सु दा रु णं ॥
6 द्दे श स्थ न ग र ग्रा मा भ य भी ता स्स म न्त तः ॥ व्र ज न्ति सं र्व लो का
स्तु त्य य भे ता त्स न्न गा मे ॥ ए व मु क्त स्त दा वा क्य मं ब्रि भिः स ह पा र्थि वः ॥ च
क ल्प तु मु ग इ ग्र पो र त्रा ण प दा दि कं ॥ प प्र च्छ प य तो भू ब्रो स जा व सि ष्ठ

चन्द्रार्द्धाङ्कितशेखरे स्मरहरे गंगाधरे शंकरे सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे ने
त्रोत्थवैश्वानरे॥ दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे मोक्षार्थं कु
रुचित्तवृत्तिमच लामन्यैस्तु किं कर्मभिः॥१४॥ इति श्रीमत्शंकराचा
र्यविरचितं श्रप राधक्षमनस्तोत्रं समाप्तं॥

कायजं वा स्रवणनयनजं वा मानसं वापराधं॥ विहितमविहितं वा सर्व्वमेतत्त
क्षमस्व जय जय करुणाब्धे श्रीमहादेव देव॥१२॥ किं दानेन धनेन वाजिकरिभिः प्रा
प्तेन राज्येन किं किं वा पुत्रकलत्रमित्रपशुभिर्देहेन गेहेन किं। ज्ञात्वात
त्क्षणभंगुरं सपदि रे त्याज्यम्मनो दूरतः स्वात्मार्थं गुरुवाक्यतो भज
भज श्रीपार्वतीवल्लभं॥१३॥ आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौव
नं प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः। लक्ष्मीस्तोयतरंगभंगचप
ला विद्युच्चलं जीवितं तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना॥१४॥

नेख प न ज ल वि धौ ना ह्द तँ गौं ग तो यँ प्र जा र्थ वा का दा वि द्व ह्र त र ग ठ ना स्व … उ वि ह्ली द लानि
ना नी ता प म मा ला स र सि वि क सि ता गँ ध प्र पै स्व द र्थं दा त व्यो मे । ९ ॥ ध्या नं चि त्ते शि वा ख्यं
प्र चु र त र ध जँ द्वे … व द्र तँ द्वि जे भ्यो ह व्य ते ल दा सं ख्यं ह्र त व ह व द ने ना पि
तँ वी ज मं चैः ॥ श्री … द्व पृं गौं ग ती रे ७ त प ऽ च र … सौ र द्र ज्ञ प्ये न दे
वँ द्व त चो मे ॥ १० … द्रु धै र्म्म धा ज्य प्र तो र्द ट श त … स हि तं स्वा पि तं वे वं
लिं गं नो लि सं च ह्न ना दैः का न का वि र चि तै र्द्व व सौ र्न प्र स्न नैः ॥ ध्र पैः क र्पू र यु तो र्ब्दि
जि ध र स यु तै र्नै व भ दो प हा रैः दा त व्यो ॥ ११ ॥ क र व र त्ता स रो ज्ञो क तं वा क र्म्म जं

नो श कं स्मा र्त कर्म प्रति प द ग ह नं प्र त्यवा या क्रा ला र्यं शौ ते वा ती क थं मो द्दि ज कु ल वि
हितं ब्रह्म मा र्गे स्व सा र्थं न्ना तो ध र्मो वि चा र ॐ अव सा म न न यो कौ नि द ध्या सि त व्य ॐ द्वा त्ववः
८ श्रीस्थि त्वा स्था ने स रो जे प्र शा व म प म स त्कं भि ते ब्र ह्म रं ध्रे स्वा त्ते त्वौ त्त प्र लीने
२ प्रकटि त ग ह ने ब्यो ति र्व्र पे प रा स्वो ॥ लिं गं ते ब्र ह्म वा चं स क ल स त्र न तं
नै व द्दृ ष्टुं ः क दा चित् द्वा त्त व्यो मे ।७॥ न द्वो निः शं क शू न्य स्वि ग ण शा वि र हि तो
३ ड्ढ् सा गो हां ध का रो ना सा ग्रे न्य स्त दृ ष्टि र्वि ह त भ व भ यो नै व दृ ष्टः क दा चि त्स द्वा त्व व्यो मे ॥ ब्या
प्या व स्थ या तौ वि ग त क लि म लं शं क र न्न म रा भि द्वा त्त व्यो मे ८॥ स्मा त्वा प्र सू प वा

नों रा कं्प वैंढ्ढ पेंभो भ व ग्ठ ाा ज नि ता ज सं वो भा तु द त्रि॥ नारो गो थ्य डुः रखं डु द न प र
व रा॰ राँ का र भ्र रम रामि दक क्यो मे प रा धः शि व शि व रा व भो खी मु ढो दे वरीं
भो॥३॥ पौ ढो हँ यौ व न रथ्यो वि प य वि पथ रैः पं च भि र्म म सँ वौ द प्वो न
छो वि वे काः सु त ध न यु व ति स्वा दु सो स्वे नि षत्त ः॥ शे वाे वि ना द्य ती
तु म म ह द य म हो मा न ग बो धि रू ढं द्व न यो॥ ॥४॥ वा ढ्ढ वे वे दे पा
राँ षि ना ति ग ति म ति स्या धि दै वा वि ता पैः पा पे रो गै र्वि यो गै र्व व सि त्त व पु षः पौ
ढ ढी नैं व दी नं॥ मि थ्या मो हगि ला पै र्षं म ति म म म नो धूर्ज टे धी न शू न्यं द्वा सं प्यो॥

सी ग रो शा प न मः॥ व द्दे दे व मु मा प तिं सु र गु रुं व द्दे ज ग त्का र णं व द्दे प न्न
ग भू ष णं शा शि ध रं व दे प शू नां प तिं॥ वं द्दे सूर्य्य श शां क व ह्नि न य नं व द मु
कुं द प्रि यं व द्दे भ क्त ज ना स्र यं च व र दं व दे शि वं शं क रं॥१॥ ग्रा दौ क
१ र्म प्र सं गा त्का ल प ति क ल्ह षं मा तृ कु क्षौ स्थि त स्य ता न्म्र चा मे ध्य म
ध्ये व्य थ य ति नि त रां जा ठ रो जा त वे दाः॥ यद्य द्वा ता त्र डुः खं वि पं
२ ग ति बि ष मे श क्य ते के न व क्तुं क्ष त ब्यो मे प रा धः शि व शि व शि व भो. सी म हा
दे व शं भो श॥ बा ल्ये डुः खा ति रे को म ल लु लि त व पुः स्त न्य पा ने पि पा सः

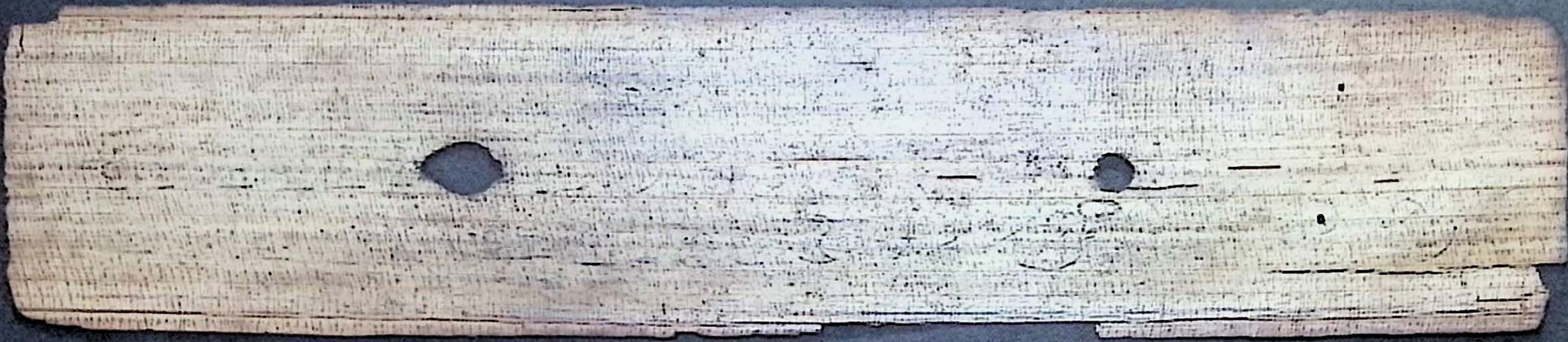

तौ राम लक्ष्मणौ॥ सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा॥ गच्छमनोदधे
रक्षाकरा मः पातु स लक्ष्मणः॥ [illegible]

न [illegible] त [illegible] य न [illegible]

सलंवपुः॥ एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत्॥ स चिरायुः सुखी पुत्री विनयी वि
जयी भवेत्॥ पाताळभूतलव्योमचारिणः छद्मचारिणः॥ न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रा
मनामभिः॥ रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति च स्मरन्॥ नरो न लिप्यते पापैर्भु
क्तिं मुक्तिं च विन्दति॥ जगज्जैत्रैकमंत्रेण रा·मनामाभिरक्षितं॥ यः प
ठेत्प्रातस्तत्पायकरस्थाः सर्वसिद्धयः॥ वज्रपञ्जरनामेतं यो राम
कवचं स्मरेत्॥ अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमंगलं॥ आदिष्टवान्यथा स्वप्ने रा
मरक्षामिमां हरिः॥ तथा लिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः॥ तस्त्रौं स

तु कण्ठं भरतवन्दितः॥ स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः॥ करौ सीतापतिः
पातु हृदयं जामदग्न्यजित्॥ वक्षः पातु कबन्धारि स्तनौ गीर्वाणरात्रुहा मध्यं
पातु खरध्वंसी ना भिं जाम्बवदाश्रयः॥ सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी ह
नुमत्प्रभुः॥ गुह्यं जि तेन्द्रियः पातु विजितामाघृण निधिः॥ पश्चिमं पातु
नाकुस्याहज्याढुः खविनाशनः॥ ऊरू रघूद्वहः पातु रक्षःकुलविना
ताकृत॥ दूरोजानुरिरः पातु भक्तानामभयंकरः जानुनी सेतुकृत्पातु जंघे दशमुखा
न्तकः॥ गुल्फौ गुणनिधिः पातु काकुत्स्थः पातु चाङ्गुलीः॥ पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामो

श्रीगणेशायनमः इन्दीवरश्यामं नमामि यतान्धनुर्द्धरं नीलजटावबद्धं पाखद्भुपलक्ष्मणा
वैदेहिपद्मलोचनान्वितं पृथमाणं पुण्यतोस्मि रामं ॥ श्यावनीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनं जान
कीलक्ष्मणोपेतं ज टामकुटमण्डितं ॥ सासितूणधनुर्बाणपाणिं
नक्तञ्चरान्तकं खलीलयाजगत्रातुमाविर्भूतमजं विभुं ॥ रामरक्षां
पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदीजेतुमिक्षास्सेयस्पै ततमयं सर्वमंपन
तः शिरो मे राघवः पातुफालं दशरथात्मजः कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वा
मित्रप्रियः स्रुती घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥ जिह्वां विद्यानिधिः पा

श्री गणेशाय नमः॥ ॐ नमः सिद्धं अ आ इ ई [illegible] उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः।
क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष
स ह ळ क्षः॥

न्चेह कपिता निगटतान्मनुष्यो भक्तिं परां परमहंसगतो लभेत ॥ ॐ इति श्रीभागवते महा
पुराणे पारमहंस्यां संहितायामष्टादशसाहस्रिकायां एकादशस्कन्धे एकत्रिंशो ह्याऽयः ॐ
२ एकादशस्कन्धस्समा प्तः ॥ अपरिषिते त्वालेख्ये च पलक्षि यो यद्यदस्ति दुर्लिखितं ॥ तत्
ता हकातरपांबुनिधे मा तः सम्व्यमुखिलवागथिपे ॥ मातृकादोषतो वापि लि
श्र खितं ह्रीबतोपि वा ॥ न्ह्नातिरितो गन्धस्योसंशोध्य सारं विरअुसा ॥ शुभमस्तु

१०१

अर्जुनः प्रेयसख्यस्य कृष्णस्य विरहातुरः॥ आत्मानं सान्त्वयामास कृष्णगीतैः सदुक्तिभिः
वन्धूनां नष्टगोत्राणामर्जुनः सांपरायिकौ॥ हतानां कारयामास यथावदनुपूर्वशः॥ द्वार
कां हरिणा त्यक्तां समु द्रोप्लावयत्क्षणात्॥ वर्जयित्वा महाराज श्रीमद्भगवदालयं
नित्यं सन्निहितस्तत्र भगवान्मधुसूदनः॥ स्मृत्याशेषाशु भहरं सर्वमंगलमंगल
म्॥ स्त्रीबालवृद्धानादा य हतशेषान्धनंजयः॥ इन्द्रप्र स्थं समावेश्य वज्रं तत्रा
भ्यषेचयत्॥ श्रुत्वा सु हृद्वधं राजन्नर्जुनात्ते पितामहाः॥ त्वां तु वंशधरं कृत्वा जग्मु
सर्वे महापथं॥ य एतद्देवदेवस्य विष्णोः कर्माणि जन्म च॥ कीर्त्तयेछ्रद्धया मर्त्यः सर्वपापैः
प्रमुच्यते॥ इत्थं हरेर्भगवतो रुचिरावतारवीर्याणि बालचरितानि च शान्तमानि॥ अन्य

ऽ स्था य क्ष ह्य स्व प द वीं पु राँ॥ प्र य तः कीर्ति ये ह भ क स्ता मे वा मो त्य नु त्त मौ॥ दा रु कौ द्वा र वा
मे त्य व सु के वो ग्र सो न याः॥ प ति त्वा च र णा वा खे न्य षि ब्व त क्ष ब्य वि च्यु तः॥ कृ प्य पा मा स
नि ध नं हृ ष्यो नाँ कृ त्स यो नृ प॥ त कु वौ द्वि ग्न द द या न वा स्यो क वि म्न किं ताः॥
त त्र स्म त्व रि ता ज ग्मु ः कृ ध्या वि स्ने प वि ड ला॥ तो र ते व्य स वो य त्र ज्ञा त यो ब्र
ब ध्या न नं॥ दे व की रो हि णी चै व व सु दे व स्त पा सु तौ॥ क्ष ह्य रा मा द प त्य स्स त्स्यो
का र्ती वि ज ड्डु स्म ति प्रा णा व स्था व वि ज ड्डु स्त त्र भ ग व द्वि र हा तु राः॥ उ प व्र ह्य प ती
स्तौं सौं स्वि ता मा रु रु ड्ड स्ति पः॥ रा म प त्न स्व त द्दे ह म्ड प ञ्च त्या ब्धि मा कि श क॥ व सु दे व प
त्न स्त र गा उँ प घु ह्य दीव्ह रे स्नु षाः॥ कृ ष्य प त्नो वि रा न्न ह्मी बु ग्मि म एया द्या स्त द्व त्म काः

वि द्या॥ कि रो न ज्ञा ने न ल भे त शा न्तिं प ण्या ति शा या मु डु पे प न बु ष्टे॥ सी रु कः॥ इ ति बु प
ति स्न ते वै र पो ग रु ड नां श्के नः॥ स्व मु त्प पा त रा जे ब्द सा ख द्धु जं उ द्दी क्ष तः॥ त म ब ग कृष्ठि
आ नि वि ष्णु प्र ह र णा — नि चु॥ ते ना ति वि स्मि ता त्मा नं स्तू त मा हु ज ना र्दन॥ ग कु द्वा र व
तौ स्न त शा ती ना ग्नि धु — न स्मि यः॥ सं क र्ष णा स्य नि र्याणं — बं न्धु ब्यो बु द्धि म द रां॥
द्वा र का या श्च न स्ये चं — भ व त भि स्चु स ब न्धु भिः॥ म या त्य — तां य डु पु री स मु द्रः
मा व यि ष्य ति॥ खं खं प — रि ग्र हं स र्व मा दा य पि त रो च नः॥ अ र्जु ने ना बि ता स्ता वे द्न्द्र
प्र स्थ न भि ष्य प॥ वं तु म द्ध म्मी मा स्या य ब्रा न नि षु ड पे क्ष कः॥ म न्मा या र चि ता मे तां वि ना यो
प रा मं त्र ज॥ इ त्यु क्त स्तं प रि क्रा म्य न म स्कृ त्य पु नः पु नः॥ त त्र पा दौ री ष्यु पा द्वे धा य डु म्भ नाः

त स्म रु ज हि वे क स्ड एड पा प्मा न म्र ग लुध्वा कं॥ य पा पु न र हं त्वे व ज क यं स द ति क मं॥ य स्या

ल यो ग व रि त ज वि द्रु विरिं स्व त द्रा द यः स्स म त यः प त यो गि रा यें॥ व मा य यापिं हि त द्द घ्र य ण त

ट उ ः कि —त स्य ते व य म स तृ ग त यो ग्ट णी मः॥ भ ग वा श्च॥ मा भै र्ज र त्व मु ति ष्ठ का

म ता ष क्र तो हि मे॥ या हि त म द न गा त स्व र्गे स क्र ति नां प दं॥ इ त्या दि धे भ गव

ता क्र प्ते न का रा री रि ता॥ उः प रि क म्य त ज त्वा वि मा नु दि वं य यौ॥ द्रा रु कः क्र स्य प द

वी मा श्रि क श्रा धि ग म्य तौ॥ दा रु तु न सि का मो द — मो उ या भि म रवं य यो॥ त ज उ ति ग मद्रु

ति मा य धौ र्द त स स्व त्य म्र ने क्र ना के त नं प तिं॥ स्ने ह म्रु ता त्मा नि प पा त पा द यो र पा द त क्र त्य स

वा प —नो च नः॥ अ प रय त स्ते च र णौ बु जं प्र बो द्व वृ ः प्र न प्ता त म सि प्र

निष्टा॥ दिशो न जाने न लभे च शान्तिं यथा निशायामुडुपे प्रनष्टे॥ सीरुकः॥ इति ब्रुव
ति सूते वै रथो गरुडलाञ्छनः॥ खमुत्पपात राजेन्द्र साश्वध्वज उदीक्षतः॥ तमन्वगच्छद्दि
व्यानि विष्णुप्रहरणा — नि च॥ तेनातिविस्मितात्मानं सूतमाह जनार्द्दनः॥ गच्छ द्वारव
तीं सूत ज्ञातीनां निध — नं मिथः॥ संकर्षणस्य निर्व्याणं — बन्धुभ्यो ब्रूहि मद्दशां॥
द्वारकायां च न स्थेयं — भवद्भिस्त्व सबन्धुभिः॥ मया त्य — क्तां यदुपुरीं समुद्रः
प्लावयिष्यति॥ स्वं स्वं प — रिग्रहं सर्वमादाय पितरौ च नः॥ अर्जुनेनाविताः सर्वे इन्द्र
प्रस्थं गमिष्यथ॥ त्वं तु मद्धर्म्ममास्थाय ज्ञाननिष्ठ उपेक्षकः॥ मन्मायारचितामेतां विज्ञायो
पशमं व्रज॥ इत्युक्तस्तं परिक्रम्य नमस्कृत्य पुनः पुनः॥ तत्पादौ शीर्ष्ण्युपाधाय दुर्म्मनाः

विश्वमडवपावकः॥ सीकसाँकंघनश्यामं तप्तहाटकवर्द्धसा॥ कौश्यीवरयुग्मेन परिवीतं
सुमंगलं॥ सुन्दरस्मितवक्त्राब्जं नीलकुन्तलमुण्डितं॥ पुण्डरीकाभिरामाक्षं स्फुरन्मकरकुण्ड
लं॥ कटिसूत्रब्रह्मसू त्रकिरीटकटकाङ्गदैः॥ हारनूपुरमुद्राभिः कौस्तुभेन विराजितं
वनमालापरीतांग मूर्त्तिमत्त्रिर्निजायुधैः॥ कृतोरो दक्षिणं पाकमासीनं पंक
जातपाणौ॥ सुसनावशोषु पेः स्वपदकृते षु लुब्धकोजरः॥ मृग स्याकारचरणं क्षिव्याधमृ
गतां कथा॥ चतुर्भुजं तं पुरुषं दृष्ट्वा सकृतकिल्बिषः॥ भीतः प्रपात शिरसा पादयोर
सुरद्विषः॥ अजानता कृतमिदं पापेन मधुसूदन॥ क्षन्तुमर्हसि पापस्य उत्तमश्लोक मे नघ॥ य
स्यानुस्मरणं नृणामज्ञानध्वान्तनाशनं॥ वदन्ति तस्य ते विष्णो मया साधु कृतं प्रभो॥

ल्पा ह्यभवन्परिघा मुष्टिना दृताः॥ जघ्नुर्द्विषस्तैः कृष्णेन वार्यमाणास्तं च ते॥ प्रत्य
नीकम्मन्यमाना बलभद्रं स्वमोहिताः॥ हन्तुं कृतधियो राजन्नापन्ना आततायिनः॥ अथ ता
वपि संक्रुद्धावुद्यम्य कुरुनन्दन॥ एरकामुष्टिपरिघौ चरन्तौ जघ्नतुर्युधि॥ ब्रह्मशा
पोपसृष्टानां कृष्णमायावृतात्मनां॥ स्पर्द्धाक्रोधः क्षयं निन्ये वैणवोग्निर्यथा व
नं॥ एवं नष्टेषु सर्वेषु कुलेषु स्वेषु केशवः॥ अवतारितो भुवो भार इति मे
नेवशेषितः॥ रामः समुद्रवेलायां योगमास्थाय पौरुषं॥ तत्याज लोकमानुष्यं संयो
ज्यात्मानमात्मनि॥ रामनिर्याणमालोक्य भगवान्देवकीसुतः॥ निषसाद धरोपस्थे तू
ष्णीमासाद्य पिप्पलं॥ बिभ्रच्चतुर्भुजं रूपं भ्राजिष्णुः प्रभया स्वया॥ दिशो वितिमिराः कुर्व

ता ह प ता का र प कु ञ रा र्व भिः रव रो कृ गो भि म्मीहि षे र्न्न रै र पि॥ भि प स्स मे त्या स्स त रै स्व ड्ड मी
दाव्या इ क्क रै ह्वतधि रि व द्वि पा व ने॥ प्र घु स्म सो बो यु धि रू ढ मास रा व क्रा र भे जा वु नि र द्द सात्य
की॥ सु भ द्र सँब्या मत्रि तौ ⁘ सु चा रुग दो सुभि चा सु र पौ स मी य ङः॥ अ न्ये च ये वै नि रा ठो न्मुका
द्द यं स ह स्व्रि क त जि . त भा नु मु स्याः॥ मन्यो न्य मा सा द्य मदा न्ध का रि ता ज ह्यु म्सु कुन्देन
वि गोठि ता भृ शं॥ क श . हि दृ ह्प्यं ध क नोज सा त्व ता मद्ध य्य का मा क्षु र स्तू र से नाः व
सर्जि ताः कु क्रु राः क्स . प स्व भि प स्स व हु स्स वि स्रज्य सौ द दंः॥ पु त्रा श्र यु द्यव पि ट भि श्री त
भि स्व स्वं स्त्री य दो ठि त्र पि ट य मां द्व वैः॥ भि त्रा णि भि त्रै स्सु द्द द्द स्सु द्द भि र्व्री ती स्व्र ठ न ज्ञा त य ए व सू ढाः॥
दा रे षु ठी य मा ने षु भ ञ्य मा ने षु ध न्व सु॥ दा स्त्रे षु द्धी य मा णे षु मु त्किभि ज्ञौ ह्नु रे र काः॥ ता व

माहिताः॥ देवताः पूजयिष्याम स्नापनालेपनार्हणैः॥ ब्राह्मणांस्तु महाभागान् कृतस्व
स्त्ययना वयं॥ गोभूहिरण्यवासोभिर्गजाश्वरथवेश्मभिः॥ विधिरेष ह्यरिष्टघ्नो मंगलाय
नमुत्तमं॥ देवद्वि जगवां पूजा भूतेषु परमा दया॥ इति सर्वे समाकर्ण्य यदु
वृद्धा मधुद्विष ः॥ तथेति नौभिरुत्तीर्य प्रभासं प्रययू रथैः॥ तस्मिन्भग
वतादिष्टं यदुदेवे न यादवाः॥ चक्रुः परमया भक्त्या सर्वश्रेयोपबृंहितं॥ त
तस्तस्मिन्महापानंप पुर्मैरेयकं मधु॥ दिष्टविभ्रंशितधियो यद्द्रवैर्भ्रश्यते मतिः॥ म
हापानाभिमत्तानां वीराणां दृप्तचेतसां॥ कृष्णमायाविमूढानां संघर्षः सुमहानभूत्॥ युयु
धुः क्रोधसंरब्धा वेलायामाततायिनः॥ धनुर्भिरसिभिर्भल्लैर्गदाभिस्तोमरर्ष्टिभिः॥ प

नितो ह्यपः॥ ७ राजा॥ ततो महाभागवत उद्धवे निर्गते वनं॥ द्वारवत्यां किमकरोद्भगवान्भूतभा
वनः॥ ब्रह्मशापोपसंसृष्टे स्वकुले यादवर्षभः॥ प्रेयसीं सर्वनेत्राणां तनुं स कथमत्यजत्॥ पु
त्याकृष्टं नयनमब ला यत्र लग्नं न शेकुः कर्णाविष्टं न सरति ततो यत्सतामात्मल
ग्नं॥ यच्छ्रीर्वाचां जनय ति रतिं कीर्त्यमानं कवीनां दृष्ट्वा जि ष्णोर्युधि रथगतं यच्च त
ताम्य मीयुः॥ ऋषिः दिवि भुव्यन्तरिक्षे च महोत्पातान् समुत्थितान्॥ दृष्ट्वासी
नान् सुधर्म्मायां कृ ष्णः प्राह यदून् इदं॥ श्रीभगवान्॥ एते घोरा महोत्पाता द्वार्वत्यां ना
ताहेतवः॥ मुहूर्त्तमपि न स्थेयमत्र नो यदुपुङ्गवाः॥ स्त्रियो बालाश्च वृद्धाश्च शंखोद्धारं व्रज
न्त्वितः॥ वयं प्रभासं यास्यामो यत्र प्रत्यक् सरस्वती॥ तत्राभिषिच्य शुचय उपोष्य सुस

ए न

श्रीशुकः॥ स एवमुक्तो हरिमेधसोद्धवः प्रदक्षिणं तं परिसृत्य पादयोः॥ शिरो निधायाश्रुक
लाभिरार्द्रधीर्न्यषिञ्चदद्वन्द्वपरोप्युपक्रमे॥ सुदुस्त्यजस्नेहवियोगकातरो न शक्नुवंस्तं परि
हातुमातुरः॥ कृछ्रं य यौ मूर्द्धनि भर्तृपादुके बिभ्रन्नमस्कृत्य ययौ पुनः पुनः॥ ततस्त
मन्तर्हृदि सन्निवेश्य गतो महाभागवतो विशालां॥ यथोपदि ष्टां जगदेकबंधुना तप
समास्थाय हरेरगा त्पदं॥ य एतदानंदसमुद्रसंभृ तं ज्ञानामृतं भागवता
य भाषितं॥ कृष्णेन यो गेश्वरसेविताङ्घ्रिणा सछ्रद्धयासेव्य जगद्विमुच्यते॥ भवभय
मपहर्त्तुं ज्ञानविज्ञानसारं निगमकृदुपजह्रे भृंगवद्वेदसारं॥ अमृतमुदधितश्चापाययद्
भृत्यवर्गान्पुरुषमृषभमाद्यं कृष्णसंज्ञं नतोस्मि॥ इति श्रीभागवते एकादशस्कंधे एकोन

मू लं को ऽयं स मी या क र स म —— त्व दी यं॥ हृ कण्ठ ख मे रु हृ ढ स्त्रे ह पा शो दा या र्ह हृत्युंध

का सा त्वि तो षु॥ प्र सा रि त स्पृष्टि वि हृ द्ध ये त्व या स्व मा य या त्वात्म स्तु बो ध ठे ति ना॥ न मो स्तु ते म

हा यो गि भ्व प्र प न्न म — नु शा धि मां॥ य पा त्व च्च र णां भो ज र ति स्या द न पा यि नी

भ ग वा न्॥ ग को द्धे व — म या दि षो ब द प्या ख्य म्म मा र मं — त न्म त्या द ती र्थ दे स्ना

नो प ख —— शा नै — स्तु वि ः॥ ई द्द या ख क न्दा या वि — धू ता शे ष क ल्म षः॥ व

सा नो व ल्भ लं दा सो — व न्य कु सु ख नि स्पृ हः॥ नि ति क्तु ई न्द्र मा ज्ञा णां स्तु शी ल सं य ते न्द्रि

यः॥ शा न्त स मा हि त धि या ज्ञा न वि ज्ञा न सं यु तः॥ म तो नु सि द्धि तं य ते बि धि ना म नु भा व य॥ म

प्या वे शि त वा क्च वि तो म द्ध र्म नि र तो भ व॥ अ ति व्र ज्य ग ती स्ति स्रो मा मे ष्य सि त तः प रं॥

शिक्ष्यते॥ ज्ञानेन कर्म्मणा योगेन वार्त्तया दण्डधारणैः॥ यावानर्थो नृणां तात तावांश्चैवं चतुर्व्विधः
मर्त्यो यदा त्यक्तसमस्तकर्म्मा निवेदितात्मा विचिकीर्षितो मे॥ तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानो मयात्मभूयाय च
कल्पते सौ॥ श्रीशुकः स एवमादर्शितयोगमार्गस्तदोत्तमश्लोकवचो निशम्य॥
बद्धाञ्जलिः प्रीत्युप रुद्धकण्ठो न किंचिदूचेऽश्रुपरि प्लुताक्षः॥ विष्टभ्य चित्तं
प्रणया वघूर्ण्णं धैर्य्येण राजन्बहुमन्य मानः॥ कृताञ्जलिः प्राह
यदुप्रवीरं शीर्ष्णा स्पृशंस्तच्चरणारविन्दं॥ उद्धव उवाच॥ विद्रावितो मोहमहान्धकारो
य आश्रितो मे तव सन्निधानात्॥ विभावसोः किन्नु समीपगस्य शीतं तमो भीः प्रभवन्त्यजा
द्य॥ प्रत्यर्पितो मे भवतानुकम्पिना भृत्याय विज्ञानमयः प्रदीपः॥ हित्वा कृतज्ञस्तव पाद

मू लं को ज्यं स मी या क र स — व दी पं ॥ वृ कण ख मे स्र दृ ढ स्नं ह पा शो दा रा ई वृत्यं व

का सा त्व ते षु ॥ प्र सा रि त स्र प्र वि वृ द्ध ये त्व या स्व मा य याथात्म स्रु बो ध ढे त ना ॥ न मो स्त ते म

हा यो गि न्व प्र प न्न म — नु शा वि मो ॥ य पा त्व च्च र णां भो रु ज र ति स्या द न पा पि नी

ग ग वा स ॥ ग को द्धे व — म या दि षो क द र्या ख्य म्म मा र मं — त त्र म त्या द ती र्थि दे स्ना

नो प ख — रा नै — स्र वि ॥ ई क्ष या क क्र न न्दा या वि — धू ता शे ष क ल्म षः ॥ व

सा ना व ल्प लं वा सो — व न्ध कृ ख नि स्र ह ॥ ति ति क्ष ई न्द्र मा त्रा णां स्र शी ल सौ य ते द्वि

पः ॥ त्या क स मा हि त धि या ज्ञा न वि ज्ञा न सं य त ॥ म तो नु रि वि तं य ते वि वि क्त म नु भा व य ॥ म

त्या वे दि त वा क्य वि तो म द्ध म्मि नि र तो भ व ॥ श्री ति व ज्य ग ती स्त स्रो मा मे ष्य सि त तः प रं ॥

ण तद्विजाय मह्योक्त पुरुषोन पृष्टसंशयः॥ एवंविवितात्तव प्रश्नम्मयोक्तमपिधारयन्॥ सनातनं ब्रह्म
गुह्यं परं ब्रह्माधिगच्छति॥ यण तन्ममभक्तेषु संप्रदद्यात्सुपुष्कलं॥ तस्माहं ब्रह्मदायस्य ददाम्या
म्यात्मानमात्मनः॥ यण तत्समधीयानः पवित्रं परमं शुचिः॥ स पूयेताहरहर्मां ज्ञान
दीपेन दर्शयन्॥ यण तच्छ्रद्धया नित्यमव्यग्रः शृण्वपानु रः॥ मयि भक्तिं परां कु
र्वं कर्मभिर्न स बध्य ते॥ अप्युद्धव त्वया ब्रह्म सखे सम पधारितं॥ अपि ते विग
तो मोहः शोकश्चासौ मनोभवः॥ नैतत्त्वया दांभिकाय नास्तिकाय शठाय च॥ अशुश्रूषो
रभक्ताय दुर्विनीताय दीयतां॥ एतैर्दोषैर्विहीनाय ब्रह्मण्याय प्रियाय च॥ साधवे शुचये ब्रूयाद्भ
क्तिस्याच्छूद्रयोषितां॥ नैतद्विज्ञाय जिज्ञासोर्ज्ञातव्यमवशिष्यते॥ पीत्वा पीयूषममृतं पातव्यं नाव

कारावि यत्रिठिः ॥ विसृज्य स्मयमामस्यां दृशं बीलाद्य दैहि कीं ॥ प्रणामेद्दण्डवत्तभूमावाखचण्डाल
गोखरं ॥ यावत्सर्वेषु भूतेषु मत्र्भावो नोपजायते ॥ तावदेवमुपासीत वाग्मनःकायवृत्तिभिः ॥ सर्वं
क ब्रह्मामकंजस्य क्षिद्यया   गमनीषया ॥ परिपश्यनुपरमेत्रसर्वेतो मुताबन्धनः ॥ ग्रयंहिस
दे र्वकल्पानां सद्ध्रीचीनो म   तो ममं ॥ मत्र्भावस्सर्वभूतेषु मनोवा   क्कायवृत्तिभिः ॥ नह्यंगोप
क्रमद्धंसो मद्धर्मिस्योद्धवा   एवपि ॥ मयाव्यवसितं संम्यग्निर्गुणत्वा   दनाशिषः ॥ योयोमयि
परोधर्म्मः कल्पते निष्कला   यचेत्र ॥ तदायासो निरर्थ स्यात्लक्रष्यादेरिव सत्तम ॥ एषा बुद्धिमतां
बुद्धिर्मनीषा च मनीषिणां ॥ यसत्यमनृतेनेह मर्त्येनाप्नोति मामृतं ॥ एष तेभिहितः कृत्स्नो ब्रह्मवादस्य
संग्रहः ॥ समासव्यासविधिना देवानामपि दुर्गमः ॥ अभीक्ष्णशस्तेगदितं ज्ञानं विस्पष्टयुक्तिमत् ॥

त्ततेवणांदिव्याभ्रममधर्म्मान्वर्त्तुनिर्म्मलाव॥ पाक्छ्छयाचरम्मत्यौंम्टत्तुभ्रजपतिद्धुर्जपं॥ कुर्य्या
त्सवीणाधर्म्माणामदर्प्पिरानकैस्मरव॥ मय्यर्प्पितमनश्चितोमद्धर्म्मात्ममनौरतिः॥ द्वेराव
पुण्यावसंत्स्ययेतम त्रमतैस्साधुभिश्चिताव॥ देवासुरमनुष्येषुमत्तनेनताचरेता
श्चिव॥ पृथ्यक्कसत्रेण कामहौंवर्त्तयेत्सुमहोत्सकं॥ का रयेत्तगीतनृत्ताद्येमहारा
जविक्षतिभिः॥ मामेव सर्वभूतेषुबहिरन्तरपावृतं॥ ईक्षेतात्मनिचात्मानंयथाख
ममलाशयः॥ इतिस र्वाणिभूतानिमद्भावेनमहाद्युते॥ सभाजयन्मन्यमानोज्ञानंके
वलमाश्रुयात्॥ ब्राह्मणेपुक्कसेस्तेनेब्रह्मण्येर्केस्फुलिंगके॥ अक्रूरेक्रूरकेचैवसमद्दक्पं
डितोमतः॥ नरेष्वभीक्ष्णंमद्भावंपुंसोभावयतोचिरात्॥ स्पर्द्धासूयातिरस्कारासाह

कु
प्र

ख र यो ग क र्म भि स्व भा व या मी वि हा ता न मा नि नः॥ किं वि त्र म च्यु त त वै त द रो ष वं श्री
स से प व न्य रा र णो पु य दा भ द स्तं॥ यो रो च य त स ह म्र गे स्व य मी ख रा णां सी म त कि री
ट त ट पीडि त पा द पी ठः॥ तं वा रि व ला भ द यि ते ख र मा सि ता नां स वी र्य द सु
क्ष त वि द्वि ष्ट जे न पो नु॥ वो वा भ जे त कि म पि वि स्व त ये नु वृ त्ये किं वा भ वे
नु त व पा द र जो जु षा भ्रः॥ नै वो प यां त्य प वि तिं क व य स्त वे रा ब ला य षा
पि क्ष त म्ह छ म्त द स्म र क्तः॥ यो स र्व हि स्व नु श्व ता म शु भं वि धू व ज्ञा चा ध्वि चे त व पु
षा स्व ग तिं ब्य न क्ति॥ स्री रु कः॥ उ ष्ट वे ना त्य नु र ता चे त सा प्र ष्टो ग गा ग श्री ड न क स्व रा ज्ञि
नि॥ छ हो त मू र्ति न य ई स रे स्व रो ज गा द स प्रे म म नो ह र स्मि तः॥ भ ग वा ज॥ उ

योगेश्वरानुवृत्त्या वा हन्यादशुभदान्बुधः॥ केचिद्देहमिमं धीराः सुकल्पं वयसि स्थिरं॥ विधा
य विविधोपायैरथ युंजंति सिद्धये॥ नहि तत्कुशलादृत्यं तदायासो ह्यपार्थकः॥ अंतवत्त्वाच्छरी
रस्य फलस्येव वनस्पतेः॥ योगं निषेवतो नित्यं कायश्चेत्कल्पतामियात्॥ तच्छ्रद्दध्यान्न म
तिमान्योगमुत्सृज्य मत्परः॥ योगचर्यामिमां योगी विचरन्मदपाश्रयः॥ नान्त
रायैर्विहन्येत निस्पृहः स्वसुखानुभूः॥ ४६॥ इति श्रीभागवते एकादशस्कंधे कृष्णोद्धवसंवादे ऽष्टाविंशोऽध्या
यः॥ २८॥ उद्धव उ॥ सुदुस्तरामिमां मन्ये योगचर्यामनात्मनः॥ यथांजसा पुमान्सिद्ध्येत्तन्मे
ब्रूह्यंजसाच्युत॥ प्रायशः पुंडरीकाक्ष युंजंतो योगिनो मनः॥ विषीदंत्यसमाधानान्मनोनिग्र
हकर्शिताः॥ अथात आनंददुघं पदांबुजं हंसाः श्रयेरन्नरविंदलोचन॥ सुखं नु विश्वे

गृहीतं कणक विच्चमज्ञानमात्मन्यविवितमंगः॥ निवर्तिते तन्न पनरीक्षयेव नगृह्यते ना
(पि विसृज्य ज्ञामा॥ यथापि भानोरुदयो नृचक्षुषां तमो निहन्याद्भुतु संविधत्ते॥ एवं समीयानि
पुण्यसन्ततीर्मेहन्यात मिसत्त्वपरूपकस्य बुद्धेः॥ एषत्व यज्ज्योतिरजोपमेयो महानुभ
क तिस्सकलानुभूतिः एकोऽद्वितीयो वचसां विरामो ये नेशितावागसवश्चर
ग्र जिः॥ एतावानामसम्बो हो यद्विकल्पस्तु केवलेः॥ आयुष्मन् तेरवमालानमवलंबो
नयस्यहि॥ यन्नामके जिमि र्थाहं पयवलीमबाधितं॥ यत्रैनाप्यसवादो पं दृ पं यदि
तमानिनां॥ योगिनोपवायोगस्य युक्ततः कायक्लिष्टैः॥ ङपसमैर्वि ~~हन्येततनायं विहितोवि धिः~~
योगधारणायाकांक्षिदुपसगीर्ष्विनिर्हेतुः॥ कांक्षितमानुध्यानेन नामसंकीर्तनादिभिः

परं॥ तथापि संगः परिव[illegible]र्जनीयो गुणेषु मायारचितेषु तावत्॥ मद्भक्तियोगेन दृढेन तावद्रज
निरंस्येत मनःकषायं॥ यथामयोसाधुचिकित्सितो नृणां पुनः पुनः संतुदति प्ररोहन्॥ एवम्म
नोपक्वकषायकर्म कुयोगिनं विध्यति सर्वसंगं॥ कुयोगिनो ये विहितांतरायैर्मनु
ष्यभूतैस्त्रिदशोप सृष्टैः॥ ते प्राक्तनाभ्यासबलेन भू यो युंजंति योगं न तु क
र्मतंत्रं॥ करोति कर्म क्रियते च जंतुः केनाप्यसौ चोदित आनिपातात्॥ न तत्र विद्वा
न्प्रकृतौ स्थितोपि निवृ त्ततृष्णः स्वसुखानुभूत्या॥ तिष्ठंतमासीनमुत व्रजंतं शयानमु
क्षंतमदंतमन्नं॥ स्वभावमन्यत्किमपीहमानमात्मानमात्मस्थमतिर्न वेद॥ यदि स्म पश्यत्यसदिंद्रि
यार्थं नानानुमानेन विरुद्धमन्यत्॥ न मन्यते वस्तुतया मनीषी स्वाप्नं यथोत्थाय तिरोदधानं॥ पूर्वं

तेण कादशस्कन्धे समर्पितं श्लोकद्वयं॥ भगवान्॥ परस्वभावकर्म्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत्॥ विश्व
मेकात्मकं पश्यन् प्रकृत्या पुरुषेण च॥ परस्वभावकर्म्माणि यः प्रशंसति निन्दति॥ स आशु भ्रश्य
ते स्वार्थादसत्यभिनि वेशतः॥ तैजसे निद्रयापन्ने पिण्डस्थो नष्टचेतनः॥ मायां प्रा
प्नोति मृत्युं वा तद्वन्ना नार्थदृक् पुमान्॥ किं भद्रं किमभ द्रं वा द्वैतस्यावस्तुनः कियत्
वाचोदितं तदनृतम्म नसा ध्यातमेव च॥ छायाप्रत्याह्वया भासा ह्यसन्तोऽप्यर्थकारि
णः॥ एवं देहादयो भावा यच्छन्त्यामृत्युतो भयं॥ आत्मैव तदिदं विश्वं सृज्यते सृजति
प्रभुः॥ त्रायते त्राति विश्वात्मा ह्रियते हरतीश्वरः॥ तस्मान्न ह्यात्मनोऽन्यस्मादन्यो भावो निरूपितः॥
निरूपितेयं त्रिविधा निर्मूला भातिरात्मनि॥ इदं गुणमयं विद्धि त्रिविधम्मायया कृतं॥ एत

दा यत्र श्रद्धा मां तत्र चार्चयेत् ॥ सर्वभूतेष्वात्मनि च सर्वात्माहमवस्थितः ॥ एवं क्रियायोगपथैः
पुमान्वैदिकतांत्रिकैः ॥ अर्चन्नुभयतः सिद्धिं मत्तो विंदत्यभीप्सितां ॥ मदर्चां संप्रतिष्ठाप्य मंदि
क रं कारयेद्दृढं ॥ पुष्पोद्यानानि रम्याणि पूजायात्रोत्सवाश्रिता ॥ पूजादीनां प्रवाहार्थं महा
कृ पर्वस्वथान्वहं ॥ क्षेत्रापणपुरग्रामान्दत्वा मत्सार्ष्टितामियात् ॥ प्रतिष्ठया सार्वभौमं
सद्मना भुवनत्रयं पूजादिना ब्रह्मलोकं त्रिभिर्मत्साम्यतामियात् ॥ मामेव नैरपे
क्ष्येण भक्तियोगेन विंदति ॥ भक्तियोगं स लभते एवं यः पूजयेत मां ॥ यः स्वदत्तां
परैर्दत्तां हरेत सुरविप्रयोः ॥ वृत्तिं स जायते विड्भुग्वर्षाणामयुतायुतं ॥ कर्तुश्च सार
थेर्हेतोरनुमोदितुरेव च ॥ कर्मणां भागिनः प्रेत्य भूयो भूयसि तत्फलं ॥ इति श्रीभागव

विद्वान्यद्दितं ज्ञानविज्ञाननैपुणं॥ ननंदति न च स्तौति लोके चरति सूर्यवत्॥ प्रत्यक्षेणानुमा
नेन निगमेनात्मसंविदा॥ आद्यन्तवदसज्ज्ञात्वा निःसंगो विचरेदिह॥ उद्धवः॥ नैवात्मनो न देह
स्य संसृतिर्दृष्टृदृश्य योः॥ अनात्मस्वदृशोरीश कस्येयमुपलभ्यते॥ आत्माव्ययो गु
णः शुद्धः स्वयंज्योतिर नावृतः॥ अग्निवद्दारुवदचिद्देहः कस्येह संसृतिः॥ भ
गवान्॥ यावद्देहेन्द्रि यप्राणैरात्मनः सन्निकर्षणं संसारः फलवांस्तावद
पार्थोप्यविवेकिनः॥ अ र्थेप्यविद्यमानेपि संसृतिर्न निवर्तते॥ ध्यायतो विषयानस्य
स्वप्नेनर्थागमो यथा॥ यथाह्यप्रतिबुद्धस्य प्रस्वापो बह्वनर्थभृत्॥ स एव प्रतिबुद्धस्य न वै
मोहाय कल्पते॥ शोकहर्षभयक्रोधलोभमोहस्पृहादयः॥ अहंकारस्य दृश्यन्ते जन्म मृ

ष्ठत्वाभिमानः॥ देहेन्द्रियप्राणमनोऽभिमानो जीवोऽन्तरात्मा गुणकर्म्ममूर्त्तिः॥ सूत्रं महान्
नित्युरुधेव गीतः संसार आधावति कालतन्त्रः॥ अमूलमेतद्बहुरूपरूपम्मनो
वचः प्राणशरीर कर्म्म॥ ज्ञानासिनोपासनया शितेन च्छित्वा मुनिर्गां विचर
त्यतृष्णः॥ ज्ञानं विवे को निगमस्तपश्च प्रत्यक्षमैति ह्यमथानुमानं॥ आद्य
न्तयोरस्य यदेव केवलं कालश्च हेतुश्च तदेव म ध्ये॥ यथा हिरण्यं स्वकृ
तं पुरस्तात्पश्चाच्च सर्व्वस्य हिरण्मयस्य॥ तदेव मध्ये व्यवहार्य्यमाणं नानापदे
शैरहमस्य तद्वत्॥ विज्ञानमेतत्त्र्यवस्थमंग गुणत्रयं कारणकार्य्यकर्तृ॥ समन्वयेन
व्यतिरेकतश्च येनैव तुर्य्येण तदेव सत्यं॥ न यत्पुरस्तादुत यन्न पश्चान्मध्येव

हविषा वाहुतेन तु॥ प्रास्याज्यभागावाबोरौ दत्वा चाज्यप्लुतं हविः॥ जुहूयाज्जनमैत्रेण पोड
शाचीवदानतः॥ धर्म्मादिभ्यो यथान्यायमग्नेः स्विष्टकृतं बुधः॥ अभ्यर्च्य पनमस्कृत्य पार्षदेभ्यो
बलिं हरेत्॥ सलमं तं जपेत् ब्रह्मस्मरनारायणात्मकं॥ दत्वाचमननमुक्तिपूर्व
पुक्रसनायकात्पपेत् मुखवासं सुरभिमत्तांबूलाद्यत्त थाईयतः॥ उपगायद्गृ
णान्नृत्यवककर्म्माणि निनप्नमम॥ मतकयायथवयञ्ज त्वक्तुहृतंजलिकोभवेत्
स्तवैरुच्चावचैस्तोत्रैः पौराणैः प्राकृतैरपि॥ स्तुत्वा प्रसीद भगवन्निति वदेत्तदण्डकः
शिरसा पादयोः कृत्वा बाहुभ्यां परिरभ्य च॥ पपन्नं पाहि मामीशभीतं मृत्युग्रहार्णवात्॥ इति
शेषाम्मया दत्तां शिरस्याधाय सादरं॥ उद्वासयेच्चेदुद्वास्य ज्योतिर्ज्योतिषि तत्पुनः॥ अग्न्यादिषु य

गंधपुष्पमनसोऽक्षनं॥ धूपदीपोपहाराद्यान्नेत्रद्धयार्वकः॥ ७५ लपायससस्रं पिषिराकुल्या
पूपमोदकाबः॥ संयावदधिसूपाँखनैवेद्यंसतिकाप्येत॥ न्त्रच्यंगोत्रईनादर्यदर्तधावार्गंपे
७१ चनं॥ अब्रहंगीत वृतानिपर्वतायचितपावहं॥ विधिनाविहितेकुण्डेमेखलाव
क त्तैवेदिकैः॥ कुण्डे वास्वप्राण्डलेवापमेखलाविस्तु योजिते॥ अग्निमाधाय
न्य पूरितसमूहेत्पा णानोदित॥ परिस्तीर्यापपश्यु वेदबाधायपूयाविधि॥
प्रोक्षणविराज्यदु व्याणप्रोक्षणावावहेतमाँ॥ तप्तजाँबूनदप्रख्यशंखचक्र
गदांबुजैः॥ पुस्ताक्षसूत्रधृगंजंशांक्षसँपमकिंअत्रकवासस॥ स्फुरत्किरीटकटककर्णि
सत्राँगदायुतं॥ श्रीवत्सवक्षसंभ्राजत्कौस्तुभंवनमालिनं॥ ध्यायेद्ब्रह्मचंदारूणा

न प्रकल्पयेत्॥ धर्म्मादिभि स्वनवभिः कल्पयित्वासनमामम॥ पद्ममष्टदलं पत्र कर्णिका
केसरोज्ज्वलं॥ उभाभ्यां वेदतत्त्वाभ्याम्मध्ये हृम यासद्धृयें॥ सुदरीं पाशांकुशं गदासीपुधनुठ
लाक॰ मुसलं कौस्तुभं मानां सीवत्सश्चानुपूजयेत्॥ नन्दं सुनन्दं गरुडं प्रचण्डं चण्ड
मेव च॥ महाबलं बलं चैव कुमुदं कुमुदेक्षणं॥ दुर्गां विनायकं व्याणीं विश्वक्से
नं क्षत्रवृन्द सुरराज्ञास्वे स्वेस्थाने त्वभिमुखाव पूजयेत्पु कपाटिभिः॥ चन्द्रनागी
रकार्द्धरकं कुमावा रुवासितैः॥ सान्नैन्नापयेन्मंत्रैर्निर्मत्स बाविभवे सति॥ स्वर्णबर्म्म
कुवाचेन महापुरुषविद्यया॥ पौरुषेणापि सूक्तेन सामनीराचनादिभिः॥ वस्त्रोपवीताभर
णपुष्पस्रग्गन्धलेपनैः॥ श्रीनं कुर्वीत सपेम महाभक्तो मायचोचितं॥ पाद्यमाचमनीयं च

१८ क क

कुस तिले स तिलादिभिः ॥ सद्ध्यो प हृ तं प्रे पुंभ तो न म म वा यीपि ॥ गंन्धो धू प सु म नु सो
दी पो भा द्यं श्च किं पु नः ॥ रुचि संहृ त सं भा. र प्राग्दर्भैः कसितासनः ॥ आसीनः प्राग्मुखो वा दे दे
वीयां ब ध सम्मुखः ॥ कृत न्या सो म द ख्यां स्य पाणि नाभि स्तरो त्सु धीः ॥ क ल शी प्रो क्षणी
य द्य प्या व द्रु प सा धु पे त ॥ त द त्र भि र्द्दे व प ज नं कृत्वा तपा मा न में व च ॥ प्रो क्ष
पा त्राणि त्री एव हृ भि स्नै सैं द्र व्यैं स्व साध ये त ॥ पा द्यार्घ्या च म नी पा र्घ स्त्रीणि पा त्राणि
दैविरा कः ॥ हृ दा शी ह्या चाविरा र व पा गा य त्या चाभि मं त्र ये त ॥ पिं डे वा पूर्व्वे सं स्थि ते हृ
त प त्य स्यां प रा म्म म ॥ आ पूरी जी व क नौं ध्या ये ब्रह्मा दा से सि द्ध भा वि तां ॥ त या म भू त या पिं डे व्या म सं
पू ज्य त व्म य ॥ आ वा ह्या वा दि षु स्था प्य न्य सां गं म्यां प्र पू ज ये त ॥ पा द्यो प स्पर्शा र्ह णा दी न्य प चा रा

द्र च ण भ्ति पु त्तौ र्द्वैन स्व ण्ड रु म्मा म मा य या॥ पू र्वं स्न नं प्र कु वी त धौ त द र्त्तोग ॥ रुड द्द वे
डभं यै र पि च स्त्रा न म्मं त्रै र्म्मैत ग्र ठ. णा दिं भिः॥ सं न्ध्यो पा स्त्या द्द का म्मा णा के द सं चो दि. ना नि मे॥
प्र ऑ तैः का त्ता येत स म्य   क्ष सं कु त्यं क म्मि पा च नीं॥ रौ ला दा रु मयी नौ ही ले स्या ले प्या च से
कं तीं॥ म नो म यी म णि   म यी प्रति मा षृ वि धा स्मृ ता॥ च ला   च लेति द्वि वि धा प्रति ष्ठा जी
वृ म क्षि रं ड द्वा सां वाह   ने न स्त्रा स्थि रा या मुक्ष वा द्वी ने॥ न   स्थि रा यो वि कल्प स्यात स्य
णि ड ले त्तु म वे त्र द्व यं   स्न प नं त्व पि ने प्या पा मन्या न्र प रि मा र्ग नं॥ द्र व्यैः प्र सि द्वै र्म्मि वा
वः प्रति मा दि षु मा यि न ॥ ने ता स्य च य पा ब्रु ल क्षै र्ह दि मा वे न चे व हि॥ स्त्रा वा लं का र ता पे
वु म च्चा या गै त डु क्क व॥ स्य पि ह्र ने ा त्व वि न्या रो वे द्या वा ज्य पु त्तं ह वि॥ स्र र्यै वा म्य र्ह पां पे

दृदति मुनयो मुहूर्त्तिरोयस ब्रूणाँ॥ नारको भगवान्यास श्राचार्यो गिरसस्तुतः॥ मेस्त
तं जो मुखांभाजा यसाठ गणवानगुः॥ पुत्रेभ्यो भृगुमुख्येभ्यो देवेभ्यो च भगवान्भवः॥ ताते दे सर्वत
णानांमा समाणाश्च … सुम्मतं॥ स्ने य सा मुत मम्मन्ये स्त्रीस्वधाणाश्च मानदः॥ एतत्प्रक
मलपत्राक कर्म्म … बंन्धविमोचनं॥ भक्ताय वानु … रक्ताय ब्रूहि विस्तरे
स्वर॥ भगवान्व॥ न … द्यन्तो न सपारस्य कर्म्मकाण्डस्य … वोद्धुव॥ संक्षिप्य वणी
पिष्यामि यथावद … नुपूर्वशः॥ वैदिकस्तान्त्रिको मिश्र इति मे त्रिविधो मखः॥ त्रया
णामीसित तेनैव विधिना मां समर्चयेत्॥ यदा स्वनिगमगमे नोताद्विजत्वं प्राप्य पूरुषः॥
यथा यजेते मां भक्त्या सद्धया तन्निबोध मे॥ अर्च्चायां स्थण्डिले वाग्नौ सूर्येऽप्सु हृदि द्विजो॥

लब्धवतस्साधोः किमन्यदवशिष्यते ॥ मय्यनन्तगुणे ब्रह्मण्यानन्दानुभवात्मनि ॥ यथो-
पश्रयमाणस्य भगवन्तं विभावसुं ॥ शीतंभयन्तमोप्येति साधून्संसेवतस्तथा ॥ निमज्यो-
न्मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायणं ॥ सन्तो ब्रह्मविदः शान्ता नौर्दृढेवाप्सु मज्जतां ॥ अन्न-
ं हि प्राणिनां प्राण आर्त्तानां शरणन्त्वहं ॥ धर्म्मो वित्तं नृणां प्रेत्य सन्तो र्वाग्बिभ्यतो रणं ॥
सन्तो दिशन्ति चक्षूंषि बहिरर्क्कस्समुत्थितः ॥ देवता बान्धवास्सन्तस्सन्त आत्माह-
मेव च ॥ वैतसेनस्ततोप्येवमुर्व्वश्या लोकनिस्पृहः ॥ मुक्तसंगो महीमेतामात्मारा-
मश्चचारह ॥३५ इति श्रीभागवते एकादशस्कन्धे षड्विंशोध्यायः ॥२६॥ उद्धवः ॥ क्रियायोगं
समाचक्ष्व भवदाराधनं प्रभो ॥ ~~ये न त्वां ये यथा~~ र्च्चन्ति सात्वतास्सात्वतर्षभ ॥१॥

मारा भे खर स्ते भगवन्मम धीद्धजं॥ बोधितस्वा पि मे देव्या सूत्रलाभेन दुर्मतेः॥
मनोगतो महामोहो नापयात्यजितात्मनः॥ किमेतया मे पकृतं रत्नं वा सर्पियौत
सः॥ दृष्टस्वरूपा विदुषो योहं यदवितेद्वि पः॥ क्वायमग्नीमसः कायो दौर्गन्ध्या
यामको यु विः॥ कु गुणा सौमनस्या यात्य ह्या साधि द्य याकृतः॥ प्रितौः किंस्व
तु ना यां याःस्वाभि नौ क्षे रत्न गर्द्धे पाः॥ किं मामनः किंसुहृ दां मित्ते यानाव सीयतौ
त सि न्ह काको व रे मे श्चेतु कनिष्ठे विषत्रुते॥ अहो सुभद्रं सुनसं सुस्मितं च सुरवस्ति
यः॥ त्वद्यौ सस्धि रस्मा कमे दो मनास्थि संहतो॥ विरासनम्न पूर्येर मतौ क्रमितां किय द्दतरं
न्यापि नोविषये तत्स्वा पुरवे तौ षु चा धर्वित्र॥ विषये द्विपसं योगाम नः कृस्यति नान्य

दु र्वे दा भिं नि म्ग्ध ता सु रेण ताः श्रु दि तो मू पा॥ ऋषि तो व र्ष पू गा नि का त्स हा नि ग मा ता न्य त॥ अ हो
मे श्रा म स ——— म्मोहो ये ना गा ये षि तां श त:॥ क्री डा म्ट गे रु च क्र व र्ती न र श्च दे व शि ख मु णि:॥
६ स्व पु रि कु द म्मा मा नं हि त्वा तृ श्रि गा मि वे र व रं॥ या तीं सि यं चा श्व म म श्च ग्न उ न्म त व
जु दु र्ट न॥ कु त स स्या नु भा व स्या ते ज इ शि व म व ग॥ यो व ग कं स्वि यं या शीं स्व र व त
द्रे पा द ता डि त:॥ किं वि द्य या किं न प सा किं त्या गे न सु ते न वा॥ किं वि वि तो ने मो ने
७ व स्त्री भि र्य स्व म नो द तं॥ स्वा र्थ स्या कों वि दं धि श्रां म्म र्वं प डि त मा नि नं॥ या ह मी स्व
र तां प्रा प्य स्त्री भि र्गो स्व र व र्जि त:॥ से व तो व र्ष पू गा न्मे ड र्व ह्र स्या श्र ध रा स वं॥ न तृ प्त श्रा
म श्रु: का मो व हि रा ह तिं भि र्य था॥ पुं स्व न्या प ह तं चि त्तं को व न्या मो वि तुं प्र भु:॥ श्रा

भागवते एकादशस्कन्धे पंचविंशोध्यायः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मल्लक्षणमिमं कायं लब्ध्वा मद्धर्म आस्थितः
आनंदं परमात्मानमात्मस्थं समुपैति मां ॥ गुणमय्या जीवयोन्या विमुक्तो ज्ञाननिष्ठया ॥ गुणेषु मा-
यामात्रेषु दृश्यमाने ष्ववस्तुतः ॥ वर्तमानोपि न पुमान्युज्यते वस्तुभिर्गुणैः ॥ संगं न कुर्या-
दसतां शिश्नोदरतृ पां क्वचित् ॥ तस्यानुगस्तमस्यंधे पत त्यंधानुगांधवत् ॥ ऐलस्स-
म्राडिमां गाथामगाय त बृहच्छ्रवाः ॥ उर्वशीविरहान्मुह्यन्नि र्विण्णः शोकसंयतः ॥ त्यक्त्वा-
त्मानं व्रजंतीं तां नग्न उन्मत्तवन्नृपः ॥ विलपन्नन्वगाज्जाये घोरे तिष्ठेति विक्लवः ॥ कामा-
नतृप्तोनुजुषन्क्षुद्रकान्वर्षयामिनीः ॥ न वेद यांतीर्नायांतीरुर्वश्याकृष्टचेतनः ॥ ऐल उ॰ ॥ अहो
मे मोहविस्तारः कामकश्मलचेतसः ॥ देव्या गृहीतकंठस्य नायुःखंडा इमे स्मृताः ॥ ना-

३ गु प्र.

हदेह्यो प्राणि गुणस्मद्रूपाय पं॥ द्वयं द्वेरां फलं कालो ज्ञानं कर्म्मि च कारकः॥ सद्भावस्याकृति
र्निष्ठा त्रैगुण्येषा स्सर्व एव हि॥ सर्वे गुणमया भावाः पुरुषाव्यक्तनिष्ठिताः॥ दृष्टं श्रुतं मनु ध्या
तं बुद्ध्या वा पुरुषर्षभः एतास्संसृतयः पुंसो गुणकर्म्मनिबन्धनाः॥ येनेते निर्जिताः सौ
म्य गुणा जीवेन चित्त जाः॥ भक्तियोगेन मन्निष्ठो मद्भावाय प्रपद्यते॥ तस्माद्दे
हमिमं लब्ध्वा ज्ञानविज्ञान संभवं॥ गुणसंगं विनिर्धूय मां भजन्तु विचक्षणा चवि
संगो मां भजेद्विघ्नन प्रमत्तोजितेन्द्रियः॥ रजस्तमस्वाभिजयेत्सत्वसंसेवया मुनिः
सत्वं चापि जयेद्युक्तो नैरपेक्ष्येण शान्तधीः॥ संपद्यते गुणैर्मुक्तो जीवो जीवं विहाय मां॥ जीवो जीव
न लिङ्गेन मुक्तो गुणैः खाराय संभवैः॥ मयैव ब्रह्मणा पूर्णो न बहिर्नान्तरश्चरेत्॥ ॐ इति श्री

स्याडु ग सा क र चा रि ए॥ ६॥ स त्वे प्र ली ना स्व र्या जि व र लो कँ र जो न यँ॥ त मो ल पा स्का णि
र पुं यानि मा मे व निं ग्डु ॥ ६॥ म दु र्प ए॥ भि ष्फूलँ वा सा वि कृ णि ज क र्म्मे ता त॥ राजग सँ फूल सँक
सँ हि सा प्रा या दि ता म सुं॥ कै व लँ सा वि कँ ज्ञा नं र जो वे क म्मि क ठ य त॥ प्रा कृ त सा म स वा
वँ ग्रा भि पुनि ग्डु एँ॥ स्था त॥ क न नु सा वि का वा रो भ्रा मो रा ज स उ च्य ते॥ ता म सो ह्लन
स द न ग्रा भि के त धुवि ग्डु एँ॥ सा वि क॥ का र वो से गी स गान्धो रा ज स स्थ त॥ ता
म स स्था ति वि भ्र वो वि ग्डु ए॥ म द या श्र यः॥ सा वि क्या ध्या भि की स द्धा क र्म्म स द्धा तु रा जसी
ता म स्य ध र्म्म या स द्धा म त्से या डु नि ग्डु ए॥ प थ्य स्रू त म ना य स्त मा हा र्यं सा त्वि कं स्ह तं॥ रा ज स
श्रे द्धि प प्रे षु ता म स श्राति दा ग्डु चि॥ सा वि कँ सु र व मा मो यँ वि व ये यँ नु रा ज सँ॥ ता म स भ्रो

सुखं विशदं स्थितं॥ तदा सुखेन युज्येत धर्मज्ञानादिभिः पुमान्॥ यदा जयेत् तमः सत्त्वं रजः संगं
भिदाचलं॥ तदा दुःखेन युज्येत कर्मणा यशसा श्रिया॥ यदा जयेद् रजः सत्त्वं तमो मूढं लयं जडं॥ युज्ये
त शोकमोहाभ्यां निद्रया ... हिंसयाशया॥ यदा चित्तं प्रसीदेत इन्द्रियाणां च निर्वृतिः॥ देहे भ
यं मनोसंगं तत्सत्त्वं ... विद्धि मत्पदं॥ विकुर्वन् क्रियया चाधीर ... निर्वृत्तिश्च चेतसः॥ गात्रा
स्वास्थ्यं मनो भ्रान्तं रजः ... एतैर्निशामय॥ सीदच्चित्तं विलीयेत ... चेतसो ग्रहणेऽक्षमं॥
मनो नष्टं तमो ग्लानि ... स्तमस्तदुपधारय॥ एधमाने गुणे सत्त्वे देवानां बलमेधते॥ असुरा
णां च रजसि तमस्युद्धव रक्षसां॥ सत्त्वाज्जागरणं विद्याद् रजसा स्वप्नमादिशेत्॥ प्रस्वापं तमसा
जन्तोस्तुरीयं त्रिषु संगतं॥ उपर्युपरि गच्छन्ति सत्त्वेन ब्रह्मणो जनाः॥ तमसाधोध आमु

श्रा सन्नि पा त म ध्यो ध्या य २२ ॥ सन्नि पा त स्त्व ह मि ति म मे त्यु द्धव या म ति ॥ व्य व हा र सन्नि
पा ते म नो मा त्रें न्द्रि या सु भिः ॥ ध र्मं चा र्थं च का मं च य दा सौ प रि नि ष्ठि तः ॥ १५ ॥ तां नां सन्नि (क)
र्षे पं स्व द्धा र ति सु खा व हं ॥ प्र वृ त्ति ल क्ष णा भि र्षुं पु मा ध्या र्हिं ग्र हा श्र मे ॥ स्व ध
र्मे चा नु ति ष्ठे त १५ णा नां स मि ति र्हि सा ॥ पु रु षं स त्व सं यु ता म नु मे या क्र मा
दि भिः ॥ का मा दि भी रु जो यु तौ को धी द्वे स्त म सा यु तौ ॥ य दा भ ज ति मां भ क्त्या
नि र पे क्ष स्व क र्म भिः ॥ तं स त्व प्र कृ तिं वि द्या त् पु रु षं खि य मे व वा ॥ य दा श्रा शि ष
रा स्व मां य जे त स्व क र्म भिः ॥ तं र जः प्र कृ तिं वि द्या द्धिं सा मा शा स्य ता म सं ॥ स त्वं र ज स्त मो मी
१५ तां जी व स्य नै व मे ॥ चि त्त जै र्ये र्व्य स्मृ ता नां स त्व म नो नि ब ध्य ते ॥ य दे त रौ न चे त स्त्वं भा

लब्धात्मस्थो विकल्पापायलक्षणः ॥ एवमन्वीक्षमाणस्य कथं वैकल्पिको भ्रमः ॥ मनसो हृदि
तिष्ठेत व्योम्नीवार्कोदये तमः ॥ एष सांख्यविधिः प्रोक्ता स्संशयग्रंथिभेदनः ॥ प्रतिलोमानुलो
॥ माभ्यां परावरदृशा मया ॥ ॐ इति एकादशस्कन्धे चतुर्विंशोध्यायः ॥ ॐ भगवानुवाच ॥
चु गुणानामसम्मिश्राणां पुमान्येन यथा भवेत् ॥ तन्मे पुरुषवर्य्येदमुपधारय
हा शंसतः ॥ शमो दमस्तितिक्षेक्षा तपस्सत्यं दया स्मृतिः ॥ तुष्टिस्त्यागोस्पृहा श्रद्धा ह्रीरसं-
गस्वनिर्वृतिः ॥ काम ईहा मदस्तृष्णा स्तम्भ आशीर्भिदा सुखं ॥ मदोत्साहो यशः प्रीति
७ र्हास्यं वीर्यं बलोद्यमः ॥ क्रोधो लोभो नृतं हिंसा याञ्चा दम्भः क्लमः कलिः ॥ शोकमोहौ विषादा
र्त्ती निद्राशा भीरनुद्यमः ॥ सत्वस्य रजसश्चैतास्तमसश्चानुपूर्वशः ॥ वृत्तयो वर्णितप्रा

। ताव त्त पॆर्वा प र्य्यें ए।नि त्य ताः॥ म हान्‌ गु ण।। वि स र्गा र्थ स्थि त्य त्तो या व दाँ द गाँ॥ वि रा ख या
सा द्गु गा नो लो क कल्प वि कल्प कः॥ प च त्वा या वि रो धा य कल्प ते भु व नै स्तदा॥ अ प्सु प्र ली
य ते म र्त्य अ न्ध्या ना सु ली य ते॥ धा ना भू मौ प्र ली य ते भू मि र्गन्धे प्र ली य ते॥ अ
प्सु प्र ली य ते गं न्ध ग्रा प स्च स्व गुण से र से॥ ली य ते ज्यो ति षि र सो ओ तो रू पे
प्र ली य ते॥ रू पं वा यौ स च स्प र्शे ली य ते सो पि चाँ ब रे॥ अं ब रं रा द्द तेन्मा
त्र ह द्वि या ए। स्व यो नि षु॥ यो नि वै का रि के सो म्य ली य ते म न सी स्व रे॥ शो द्ध्र भूता
दि म भ्ये ति भू तादि मी हा ति प्र भुः॥ स ली य ते म हान्‌ स्वे षु गु णे षु गुण त्त मः॥ ते व्य क्ते सं प्र ली
य ते त त्त का ले ली य ते च ये॥ का लो मा या म ये जी वे जी व आत्म नि म य्य जे॥ आ त्मा के व

दं मत्पर्यां दीर्घां य भू क्षो कासि धानां त यात्परं ॥ अधो सु स ~~णा नां मां नां भूमे से को स्व जन्म प~~
ष्ठः । त्रिलोक्यां गतयः सर्वाः कर्मणां त्रिगुणात्मनां ॥ योगस्य तपसश्चैव न्यासस्य गतयो मलाः
महर्जनस्तपस्सत्यं भक्तियोगस्य मत्संगतेः ॥ मया कालात्मना धात्रा कर्मयुक्तमिदं ज
गत् ॥ गुणप्रवाह ए तस्मिन्नुन्मज्जति निमज्जति ॥ अणुर्बृहत् कृशः स्थूलो यो यो भावः
प्रसिद्ध्यति ॥ सर्वोप्युभयसंयुक्तः प्रकृत्या पुरुषेण च ॥ यस्तु यस्यादिरन्तश्च स
वै मध्यं च तस्य सत् ॥ विकारो व्यवहारार्थो यथा तैजसपार्थिवाः ॥ य ~~—~~ दुपादाय प
रस्तं भावो किं कुरुते पदं ॥ यदादरौ च यदा पदा परस्मिन् तत्स्व मभिधीयते ॥ प्रकृतिर्ह्यस्यो
पादानमाधारः पुरुषः परः ॥ सतोभिव्यञ्जकः कालो ब्रह्म तत्त्रितयं त्वहं ॥ सर्गः प्रवर्तते

। ग्मिका ॥ ज्ञानञ्चान्यतमो भावः पुरुषस्सोभिधीयते ॥ तमोरजस्सत्वमिति प्रकृतेरभवन्गुणाः ॥ म
याप्रक्षोभ्यमाणायाः पुरुषानुमतेन वा ॥ तेभ्यस्समभवत्सूत्रं महान्सूत्रेण संयुतः ॥ ततोविकुर्व
तो जज्ञे योहंकारोविमो ठनः ॥ वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिवृत् ॥ तन्मात्रेन्द्रियम
नसां कारणं चिदचिन्म यः ॥ अर्थस्तन्मात्रकोजज्ञे तमसा दीन्द्रियाणि च ॥ तैजसाद्दे
वता आसन्नेकादश च वैकारिकात् ॥ मया संक्षोभिता भावा स्सर्वे संहत्यकारिणः ॥ अ
ण्डमुत्पादयामासु र्ममायतनमुत्तमं ॥ तस्मिन्नहं समभवमण्डे सलिलसंस्थि
ते ॥ मम नाभ्यामभूत्पद्मं विश्वाख्यं तत्र चात्मभूः ॥ सोसृजत्तपसा युक्तो रजसा मदनुग्रहा
त् ॥ लोकान्सपालान्विश्वात्मा भूर्भुवस्स्वरिति त्रिधा ॥ देवानामोक आसीत्स्वर्भूतानां च भुवःप

द्यनष्टद्रविणो गतक्लमः प्रव्रज्य गां पर्यटमान इत्थं॥ निराकृतोसद्भिरपि स्वधर्म्मादकंपितो सौ मुनि
राह गाथां॥ सुखदुःखप्रदो नान्यः पुरुषस्यात्मविभ्रमः॥ मित्रोदासीनरिपवः संसारस्तमसः कृतः॥
तस्मात्सर्वात्मना तात निगृहाण मनो धिया॥ मय्यावेशितया युक्त एतावान्योगसंग्रहः॥ य ए
तां भिक्षुणा गीतां ब्रह्मनिष्ठां समाहितः॥ धारयञ्छ्रावयञ्छृण्वन्द्वंद्वैर्नैवाभिभूयते॥ ६२
इति श्रीभागवते एकादशस्कंधे त्रयोविंशोध्यायः॥ २३ भगवानुवाच॥ अथ ते संप्रवक्ष्यामि सांख्यं
पूर्वैर्विनिश्चितं॥ यद्विज्ञाय पुमान्सद्यो जह्याद्वैकल्पिकं भ्रमं॥ आसीज्ज्ञानमथो अर्थ एकमेवा
विकल्पितं॥ यदा विवेकनिपुणा आदौ कृतयुगेजनाः॥ तन्मायाफलरूपेण केवलं निर्वि
कल्पितं॥ वाङ्मनोगोचरं सत्यं द्विधा समभवद्बृहत्॥ तयोरेकतरो ह्यर्थः प्रकृतिः सोभया

आत्मा यदि स्यात्सुखदुःखहेतुः किमन्यत्तत्र निजस्वभावः॥ न ह्यात्मनोन्यद्यदि त
त कस्मैन सुखं न दुःखं॥ ग्रहानिमित्तं सुखदुःखयोश्चेत किमात्मनो जस्य जनस
स्यैव भवन्ति पीडाः क्रु ध्येत कस्मै पुरुषस्ततोन्यः॥ कर्म्मास्तु हेतुः सुखदुः
मनस्तद्धि जडाजडत्वे देहस्त्वचित्पुरुषोयं सुपर्णः क्रु ध्येत कस्मै न
कालस्तु हेतुः सुखदुःख योश्चेत किमात्मनस्तत्र तदात्मकोसौ नाग्नेर्हि तापो न हिमस्या
स्यात्क्रुध्येत कस्मै न परस्य द्वन्द्वं॥ न केनचित्क्वापि कथञ्चनास्य द्वन्द्वोपरागः परतः परस्य
यथाहमः संसृतिरूपिणस्यादेवं प्रबुद्धो न बिभेति भूतैः॥ एतां समास्थाय परात्मनिष्ठामध्यासितां
पूर्वतमैर्म्महर्षिभिः॥ अहं तरिष्यामि दुरन्तपारं तमो मुकुन्दांघ्रिनिषेवयैव॥ भगवानुवाच॥ निर्वि

स्य क्ष यं॥ क्ष सं यं स्व म नो ति न दे द्वा ना दि भि स्वे द प रं कि मे भिः॥ म नो व दो न्ये हि न व कि दे
वा म न स्व ना स्य व वां स मे ति॥ श्री मो हि दे व स्त ह स स्त ही या न्यु ज्या द्व रां त्र सा हि दे व द्व वः॥
नु डुर्जं यं थ नु म सद्व वे ग म रु क्षु द त्र भ्र वि जि त्य वो चि त॥ कु र्व व्य स हि ग ह म त्र म त्यें
न्व क्षि त्रा य यु क सी न स्त नं वि स्त ढाः॥ दे ठ म्म नो मा त्र भि मं ग ही वा म मा हि भि त्यं न्व
वि यो म नु ष्याः॥ त षो ठ म न्यो य भि ति भ्र मे ए ढु र क्ष पा रै त्त म
नो स्य ठे ठ स्स स्व ठु स्व यो स्वे ह कि मा म्म न स्त त्र हि भौ म यो स्त त॥ जि
त्या ति स्व द त्व भि स्त द्वे द ना यां क त मा य क्र प्ये त॥ ढुः स्व स्य ठे ठ ष्य दि दे व
स्त त्र वि का र यो स्त त॥ य दैं ग मँ गे जं न भि ठ व्य ते का चि त क्रा ह्रो त क रै

हु म व क्षु त म स अ ना:॥ दृ मां:प र्थी ग व न्न भ द्रु ब ठ्ठी भि: प रि भ्रू ति मि:॥ के चि ति वे एं हि अ ग ह रे के

म त्र क म ए ड लू॥ पी ठं ध्रै के व्न स्तू त्र श्च कु शां खी रा ए के च न॥ पु दा व च पु न सा नि द र्शि ता न्वा कु

र्मु नेः॥ अ ग्र श्च भै द्रु सं प न्नं भु आ न स्य स रि त टे॥ मू त्र य क्षि च पा पि ष्ठा ष्ठी वं ष्य स्य

च स्नू र्द्ध नि॥ य त वा चं वा च य ज्ञि ता ड य क्ति न व ज्ञि चे त॥ त र्ज्ञ यं स्य प रे वा ग भि स्ते

नो य भि ति वा दि नः॥ ब ध्रु त्ति र ज्या तं के चि त ब ह्यु तीं व ह्यु ता भि ति॥ क्ति पं स्ये के व जा नु

क्षि ए ष ध क्षि द्ध्रु ज स्त्रा ठः॥ द्वी ए वि त ङ मां दृ त्ति म ग्र ठी त स्व ज नो कृ तः॥ त्र ठो ए ष म

ठ सा रो ध्द ति मा न्न गि रि रा डि व॥ मो ने न सा ध यं स्य र्थि ब क व दृ ढ नि स्व यः॥ इ त्ये वे वि ह सं स्थे व भे

के द्रु वा त्तृ य ज्ञि च॥ तं ब ब न्धु र्क्षि रू त धु र्यि पा क्री ड न कां ङ्क्षि जं॥ ए वं स भौ ता क चुः स्वं दै वि कां दे

हि कं च यह ॥ भो ता व्या मा त्म नो हि थृं षा प्तं प्रा प्त म दु ख्यां त्र ॥ प रि क्ष त्त द्व मीगा प्या ग्ग गा य त्त नु रा ध मे ॥

पा त य तु भि स्व ध र्म्म स्यो धृ ति मा ख्या य सा वि कीं ॥ भि द्धुः ॥ ना य ञ नो मे रु ख उं ख ठे ठ डि दे क

ता मा ब ह क र्म्म का ल्लः म नः प रं के व ल भा म न ति सं सा र च कं प रि व र्त्ते यै घ त ॥ म गे

रु ता न वे स्ट प ते द ली य स्त त स्व क र्म्मा णा दि ल का णा नि ॥ रु आ ग क ध्या ति न्य

व लो हि ता नि ते भ्य स्स व णि स्ह त यो भ व ति ॥ स्य नी ह श्रो मा म न स स्स मी हि तं

हि र णे यो म स्त ख उ दि च षे ॥ म न स्त लि ग प रि ग्रह्य का मा ञ प भि ब क्षो ग णा सं

गो नो सौ ॥ दा नं स्व ध र्म्मो नि य मो य म स्व स्रु ता नि क र्म्मा णि च स द्व ता नि ॥ स र्वे म नो नि ग्र ह ल क्ष

णा न्ताः प रो हि यो गो म न स स्स मा धिः ॥ स मा हि तं य स्य म नः प्र शां न्तं दा ना दि भिः किं व द त

बलं॥ कुशलाय नसिद्धा जिगर ढः किञ्चु साधयेत॥ तस्मात्संक्लिष्य तो वि ... च ... या ये ह या
सक्षत॥ कस्य चिन्माय याह्व नेलो कोयं सुवि मोहितः॥ किंध्ये नेद्ध न दै वीर्कि कामै वी ता म दे रत
स्त्यु नाग्र स्व मानस्य कर्म्मभि र्वीत जन्म भिः॥ नून न्मभ ग वां स्त प्रज्ञा दु दे व म योह
रिः॥ येनु नीतो दशा मेता विर्वद स्वात्म नः पुन वः॥ साह का ला व दे वे त्प तो व
पि येग माम नः॥ श्र प्रम तो रिव ला यें षु यदि स्यां सिद्धश्रा म भि॥ त न मा म रु मो
दे र दे वा खि भु द वे स्स राः॥ मुहु तें न ब त्सौ लो कं ख ट्वांग स्स म साध य त्॥ न ग वा कु॥ ड
त्यभि पे त्य म न सा त्धा वं त्या द्वि ज स त म॥ उ भु च्य ह द य गं भि शा त्रो भि दु र ई भ नि॥ स च त्धा र म
ही मे तां सं य ता त्मे द्वि या नि लः॥ भि ज्ञा सं कु ग र ग्रा मा न सं गा न दि तो वि रा त॥ तं वै प्र व य सं भि

क्षणे व्यये॥ नाशोपभोग आयासस्त्रासश्चिन्ता भ्रमो नृणां॥ स्तेयं हिंसानृतं दम्भः कामः क्रोधः स्मयो मद
ः॥ भेदो वैरमविश्वासः संस्पर्द्धा व्यसनानि च॥ एते पञ्चदशानर्था ह्यर्थमूला मता नृणां॥ त
स्मादनर्थमर्थाख्यं श्रेयोऽर्थी दूरतस्त्यजेत्॥ भिद्यन्ते भ्रातरो दाराः पितरः सुहृदस्तथा
एकास्निग्धाः काकिणिना सद्यः सर्वेऽरयः कृताः॥ अर्थेनाल्पीयसा ह्येते संरब्धा दीप्तमन्य
वः॥ त्यजन्त्याशु स्पृधो घ्नन्ति सहसोत्सृज्य सौहृदं॥ लब्ध्वा जन्मामरप्रार्थ्यं मानुष्यं
तद्द्विजाग्र्यतां॥ तदनादृत्य ये स्वार्थं घ्नन्ति यान्त्यशुभां गतिं॥ स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं प्रा
प्य लोकमिमं पुमान्॥ द्रविणे कोऽनुषज्जेत मर्त्योऽनर्थस्य धामनि॥ देवर्षिपितृभूतानि ज्ञातीन्बन्धूंश्च
भागिनः॥ असंविभज्य चात्मानं यक्षवित्तः पतत्यधः॥ व्यर्थयार्थेहया वित्तं प्रमत्तस्य वयो

विहीनस्य चक्षुः पङ्गुभागिनः ॥ तदवध्यानविध्वस्तपुण्यस्कन्धस्य भूरिदः ॥ अत्रैव्यग
कृविधनं बहुयासपरिश्रमः ॥ जातोऽज गृहे किंचित्किंचिद्दस्य कण्डुदं ॥ [illegible] वतः कालतः
विहारबहुवन्यो भू पार्थिवात्तः ॥ स एव न्दु विरोधन कृत्य धर्म कामविवर्जितः ॥ उपोषित
का — ख [illegible] ज नैस्विमायदु रत्ययाँ ॥ तस्यैव वन्ध्यापत्नी दीर्घन षरायस्तपस्विनः ॥ ख
द्यतोवाष्यकरठस्य निर्वेद स्तुमहानुभूतः ॥ स चाहेदे महौक पृवृत्यात्मामेनु
तापितः ॥ न धर्माय न कामाय पस्यापि यास ईदृशः ॥ प्रायेण सर्वः कादर्य्याणाभूरु
स्थायकाकाचन ॥ इह चात्मोपतापायमृतस्य नरकाय च ॥ यशोपत्नास्विनां रुधं स्लाध्याये
रानां रुणाः ॥ लौभस्वन्धोपि तानहजिस्विनो रूपमिवेसितं ॥ असि स्वसाधने सिद्धउत्कार्षर

भाषेत्तवणीयवीर्यः॥ भगवान्॥ नाहं स्यन्त्यन वैजातु साधुर्वैद्रुर्जनेरितैः॥ कुरुतौर्भिंक्षुमा
मानयस्समाधातुमीश्वरः॥ नत्यविद्यते विद्धः पुमान्बाणौर्हि मर्म्मगैः॥ यथा तु दन्ति मर्म्मस्याद्य
३ सतीयत्तबेषकः॥ क यथाभिमडत्तपुरुषमितिहासभिहोद्धव॥ तमहं वर्णि ... व्याभि
निबोधसुसमाहितः॥ केनचित्तभिक्षुणा गीतैः परिभूते नदुर्जनैः॥ क्षमरमाताद्
तिपुत्तैनविपाकविज कर्म्मणः॥ अवन्तिषु द्विजः कश्चि दासीदाक्षत्तमस्त्रीया॥
वार्तावृत्तिः कदर्यस्तुका मीलुब्धोतिकोपनः॥ ज्ञातयोतिथयस्तस्य वाङ्मात्रेणापिनार्च्चिताः॥
शून्यावसथ आत्मापि काले कामैरनर्च्चितः॥ दुःशीलस्य कदर्यस्य द्रुह्यन्ते पुत्रबान्धवाः॥ दाराद्
हितरोभृत्याविषणानाञ्चरन्प्रियं॥ तस्यैवं यक्षवित्तस्यच्युतस्योभयलोकतः॥ धर्म्मकामा

नेपि संसृतिर्न निवर्तते॥ ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेनर्थागमो यथा॥ तस्मादुद्धव मा भुंक्ष्व

विषयान सदिन्द्रियैः॥ आत्माग्रहणनिर्भानं पश्य वैकल्पिकं भ्रमं॥ क्षिप्तो वामानितो सद्भिः प्रल

ब्धो सूयितो थवा॥ ता डितः सन्निरुद्धो वा वृत्या वा परिहापितः॥ निष्ठुतो मूत्रितो वाज्ञै

र्बहुधैवं प्रकंपितः श्रेयस्कामः कृच्छ्रगत आत्मना मानमुद्धरेत्॥ उद्धवः॥

यथैवमनुबुध्येयं व दनो वद तां वर॥ सुदुःसहम हम्मन्ये आत्मन्यसदति

क्रमं॥ विदुषामपिवि श्वात्मन्प्रकृतिर्हि बलीयसी॥ ऋते त्वद्धर्मनिरताञ्छान्तांस्ते

चरणालयान्॥ ॐ इति श्रीभागवते एकादशस्कन्धे द्वाविंशोध्यायः॥ श्रीशुकः॥ स एवमा

शंसित उद्धवेन भागवतमुख्येन दाशार्हमुख्यः॥ सभाजयन्भृत्यवचो मुकुन्दस्तमाब

नोर्थेव॥ गुणमनोरथश्रियोमपीद्युम्नासोद्धावचास्तन्नः॥ गुणसंगाद्रूपादते कविरकाखिजहा
तिच॥ आत्मनः पितृपुत्राभ्यामनुमेयो भवाप्ययो॥ भवाप्ययोर्हेतुस्तु नामभिज्ञौ हृयलक्षणः॥ तरो
बीजविपाकाभ्यांयोविद्वा जन्मसंभवो॥ तरोर्विलक्षणोदेहष्ठएवं ह्यपृथात्मनःपपश॥ पृथ
तोरेवमात्मानमविवि त्याबुधःपुमान्॥ तत्वेनस्पर्शसम्मूढ संसारंप्रतिपद्यते॥ सं
वरीगात्रषीवाङ्ग जसास्तुरमानवानु॥ तमसाभूततित्यि श्रीआत्मितोयातिकर्म
णि॥ नृत्यतोगायतःप श्यत्योवानुकरोतितान॥ एवंबुद्धिगुणान्पश्यन्नीहोप्यनुका
र्यते॥ यथांभसाप्रचलतातरवोऽपिचलाइव॥ चक्षुषाभ्रम्यमाणेनदृश्यतेभ्राम्यतीवभूः॥ यथामनो
रथधियोविषयानुभवोमृषा॥ स्वप्नदृष्टश्चदाशार्हतथासंसारआत्मनः॥ अर्थेप्यविद्यमा

गन्मत्ता स्मृतयापुंसुस्सर्वभावेनभूरिद॥ विषयस्त्रीकृतं प्राहयथायथा मोमनोरथः॥ग
स्माभ्मवोरपुंखेस्यपात्तानभुस्मरत्यसौ॥ तन्नपूर्वमिवामानमपूर्वश्चानुपस्यति॥इ
द्रियायनतुङ्क्षे दंनैविद्यांभातिवस्तुनि॥वहिरसार्भिदाहेतुर्जनोसौजनकृद्यथा॥
नित्यदाह्यगभूता निभवंजिनभवंजिय॥कालेना नदृपतेगेभसूक्ष्मतात्तुम
ह्यते॥यथार्चिषां स्रोतसांचफलानांवाकनस्पतेः॥ तथाचसर्वभूतानां॥यावे
स्थावततद्रुता॥सो यंदीपोर्चिषांयद्वत्स्रोतसातदिदंजलं॥"सोयंपुमानितिनृणां
मृषागीर्धीर्मृषायुषां॥नाद्यखकर्मबीजेनजायतेजोप्ययंपुमान॥म्रियतेचामरोभ्रांत्यायथा
ग्निर्द्दारुसंयुतः॥निषेकगर्भजन्मानि बाल्यकौमारयौवनं॥वयोमध्यंजरामृत्युरित्यवस्थास्त

मेद्यतोविकारः प्रधानमूलान्महतः प्रसूतः॥ अहं त्रिवृन्मोहविकल्पहेतुर्वैकारिकस्ताम
श्री स ऐन्द्रियश्च॥ आत्मापरिज्ञानमयो विवादो ह्यस्तीति नास्तीति भिदार्थनिष्ठः॥ व्यर्थोपि नैवोपरमे
न त पुंसां मत्तः परावृत्त   धियां स्वलोकात्॥ उद्धवः॥ त्वत्तः परावृत्तधियः स्वकृतैः कर्मभि
प्र र्विभो॥ उच्चावचान्यथा   देहान्गृह्णन्ति विसृजन्ति च॥ त   न्ममाख्याहि गोविंद दुर्वि
भाव्यमनात्मभिः॥ न्नु   ह्येतत्प्रायशो लोके विद्वांसः सन्ति   वंचिताः॥ भगवानुवाच॥ मनः
कर्ममयं नृणामिंद्रियैः   पंचभिर्युतं॥ लोकाल्लोकं प्रयात्यन्य आत्मा तदनुवर्त्तते॥ ध्याय
न्मनोनुविषयान्दृष्टान्वानुश्रुतानथ॥ उद्यत्सीदत्कर्मतंत्रं स्मृतिस्तदनु शाम्यति॥ वि
10 षयाभिनिवेशेन नात्मानं यत्स्मरेत्पुनः॥ जंतोर्वै कस्यचिद्धेतोर्मृत्युरत्यन्तविस्मृतिः॥

तिः पुरुषश्चोभौ यद्यप्यात्मविलक्षणौ॥ अन्यन्योन्यापाश्रयात् कश्चिद्दृश्यते नभिदानयोः॥ प्रकृतौ ल
क्ष्यते ह्यात्मा प्रकृतिस्थ तथात्मनि॥ एतन्मे पुण्डरीकाक्ष महान्तं संशयं छिन्धि॥ केनु महेसि मे
रावचोभिर्भिन्नयने पु णौः॥ वतोत्तानं हि जीवानां प्रभो पश्च वशाति तः॥ तमेव ह्यात्म माया
यागतिं वेत्थ न चापरः भगवान्॥ प्रकृतिः पुरुषश्चेति वि कल्पः पुरुषर्षभ॥ एष
वैकारिकः सर्गो गुण बात्तिकरात्मकः॥ ममाङ्ग माया गुण णमय्यनेकधा विकल्प
बुद्धिश्च गुणैर्विधत्ते वैकारिकस्त्रिविधोध्यात्ममेकमथाधिदैवमधिभूतमन्यत्॥ दृग्रू
पमार्कं वपुरत्र रन्ध्रे परस्परं सिद्ध्यति न स्वतो सौ॥ आत्मा यदेषामपरो य आद्यस्वयानुभूत्यो
खिलसिद्धसिद्धिः॥ एवं त्वगादि श्रवणादि चक्षुर्जिह्वादि नासादि च चित्तयुक्तं॥ योसौ गुणाक्षो

पुरस्थे दाया ॥ लब्धवीर्यां स्त्ट जत्य उ संठ ताः प्र कृते बं लात ॥ स प्ते व धात वद्ति ता ना स्योः
पं ह्न खादयः ॥ जा न मा त्मो भ याधा र स्ततो दे ठें द्धि या स दः ॥ नै क मन्य त रः क्षा पिविहा ये ठो प ल
न भ्यते ॥ बडित्य त्रा पिक्ष ता नि पं श्र ष षुः प रः पुमा ब्र ॥ ते युक्त श्रात्म सं भ्न ते स्त्ट वृ दं सा म
७ पाक्ष रा र ॥ च त्वा र्थ व ति ज त्रा पि त ज न्या पो न मा त्म नुः ॥ जा ता नि तें रि दं आ ञ
भा क यु वि नः ख लु ॥ ए का द रा त्व न्या त्मा सो म ठा क्ष तें द्धि या णि च ॥ सं स्था ने स म
द रा कें भ्न त मात्रे द्धि या णि च ॥ पं श्च पं श्चै व म न सा श्रा त्मा स पु द रा स्त्र ताः ॥ त त्र पो
डु रा सं स्था न श्रा त्मै व म न उ च्य ते ॥ क्ष ते द्धि या णि पं श्चै व म न श्रा त्मा उ यो द रा ॥ इ ति ना ना प्र सं
१ स्था नं क त्वा ना मू पि भिः क्र तं ॥ स र्वं न्या यं युक्ति म त्वा द्धि दु षां कि म शो भ नं ॥ ५.६ वः प्र क्रो

नद्रोभवेत्॥ पुरुषेश्वरयोरत्र नवैलक्षण्यमपि॥ तदन्यकल्पं नापायीशानश्च प्र
कृतेर्गुणाः॥ प्रकृतिर्गुणसाम्यं वै प्रकृतेर्ज्ञानमनोगुणाः॥ सत्वं रजस्तम इति स्थित्युत्पत्य
न्तहेतवः॥ सत्वं ज्ञा नं रजः कर्म्म तमो ज्ञानमिहोच्यते॥ गुणव्यतिकरः कालश्च भा
वस्स्वभावमेव वा॥ पु रुषः प्रकृतिर्व्यक्तमहंकारो न भोनिलः॥ ज्योतिरापः क्षि
तिरिति तत्वान्युक्तानि मे नव॥ श्रोत्रं त्वग्दर्शनं घ्राणो जि ह्वेति ज्ञानतन्तवः॥
वाक्पाण्युपस्थं पायुः श्च कर्म्माण्यंगोभयं मनः॥ शब्दस्पर्शो रसो गन्धो रूपं चेत्यर्थ
जातयः॥ गत्युक्त्युत्सर्गशिल्पानि कर्म्मायतनसिद्धयः॥ सर्गादौ प्रकृतिर्ह्यस्य कार्यकारण
रूपिणी॥ सत्वादिभिर्गुणैर्धत्ते पुरुषोऽव्यक्तमीक्षते॥ व्यक्तादयो विकुर्वाणा धातवः

गायत्ति पृप्प गायु बाक्षि दन्नोव क्रुमर्हसि ॥ भगवान् ॥ युक्ता यस्मात्ति सर्वज्ञभाषके बाह्य
णाय च्या ॥ मायास्मदीया श्रुत गृह्य कदत्तां किं मुद्द र्व्वदं ॥ नैन देबये नास्य त्वं पदर्हत्व त्वि
नान्तया ॥ एवं विव दतो हेतुश्राता यो मेद रत्ययाः ॥ यासां व्यंति क्रमा रादासीद्वि क
प्पो वदत्तां पदं ॥ प्राप्ते यमद्दमे प्येति वादस्त मनुशा स्यति ॥ परस्परा प्रवे
शात तत्त्वानां पुरुषष नं ॥ पौर्वापर्य प्रसंख्यानं यथाव क्रुर्वि वचितं ॥ ए स्मि
न पिह दयके प्रवि क्षाबीत राशि च ॥ पूर्वस्मिन्वा परस्मिन्वा तन्न तत्त्वानि सर्व
शः ॥ पौर्वापर्यमतो मीषां प्रसंख्यानमपीक्ष्यतां ॥ यथाविवितां यद्युतां गृह्णीमो युक्ति सं
भवात् ॥ अनादृत्य वाक्यं तत्तस्य पुरुषस्याप्तवेदनं ॥ स्वतो न संभवाद्दव्य स्त तो तो

प
ह

स्तजसाक्षिपतेस्वयं॥ गायुअुक्षिगनुष्टुप्चबृहतीपङ्क्तिरेवच॥ त्रिष्टुब्जगत्यतिकुंदोसाय
षातिवगद्दिंरार्॥ किंविधतेकिमाचष्टेकिमनुद्यविकल्पयेत॥ इत्यस्वाहृदयंलोकेनान्योम
हेदकस्थिन॥ मांवि धत्तेविचष्टेमाविकल्प्यापोह्यतेत्यहं॥ एतावानर्सार्ववेदर्थ
स्याबृश्रास्यायमा भिदां॥ मायामात्रमनूद्यातेप्र तिषिद्धप्रशाम्यति॥ ड्
इतिश्रीभागवतेए कादशस्कंधेएकविंशोध्याय ॥ उद्धवः॥ कतिवा
निविखेशसंख्यातां व्रृषिभिःप्रभो॥ नवैकादशपंचत्रीण्यायाध्यत्वमिहरुरुर्श्रुमः॥
केचित्षड्विंशतिंप्राहुरपरेपञ्चविंशतिं॥ सप्तैकेनवषट्केचित्चत्वार्येकादशापरे॥
केचित्सप्तदशप्राहुःषोडशैकेत्रयोदश॥ एतावत्त्वंहिसंख्यानमृषयोयद्विवक्षया॥

इथेह देवता.यजौगीवारँ स्पामहैंदिति।। तस्यास इहश यास्म महाराला महाकाला:।। एवं पुष्पि
तयावाचाव्याद्वि प्त मनसा श्वएां।। मानिनाश्वाति रत्नश्वानाम्म द्वतीं पिनरोचते।। वेदाब ह्मम विषया
खिकाएड विषयाम्रिपि — परोक्षवादात्राषय: परोक्षम्ममचुक्षिये।। राद्वब ह्मसुदु वौंधिपा
एद्वियमनोमये।। स्व — नत्नपारँ गँभीरदुर्विगाह्यं समु — द्रवतः।। मपोपबृंहितं भू
क्षाब्रह्मएानतराति — ना।। भूतेषुबोषरूपेएा विश्वसेषु — यौं वलद्यते।। य
नाभिर्हिदयाद्रएौमु — द्वहतेमु — स्वत:।। आकाशात्रबौषवान प्राएाोमनसा स्व
पिएा।। कंठोमयोम्नतमय स्वहस्वपदवीं प्रमु — ओंकाराद्युक्षितां स्पर्शस्वरोष्माण
स्पर्शषितां।। विचित्रभाषाविततां छन्दोभिस्चतुरु — तरैः।। अनन्तपाराबृहतीं

रोमस्यो वा मोहभयापहः॥ विषयेषु ७५ (गाढ्या) सात्पुंस संगस्ततो भवेत्॥ संगात्तत्र भवेत्
क्रोमः कामादेव कानि भूर्णि॥ कलौ कृषि षहः क्रोध समस्तमनुवर्तते॥ तमसाग्रस्यते पुंसले
त्र तज्ञाव्यापिनी द्रुतं तयाचरहित साधो बहुस्रू न्यायकल्पते॥ ततोस्य स्वार्थविभ्रं
क्रा योभ्रकितस्य मे त स्यच॥ विषयाभि निवेरोनवामा नं वे दनापरं॥ वृक्षजी
विकयाजीवनव्यर्थं भस्रोव च खसन॥ फलखुतिरि यभूर्णीम्न रने योरोच नं
परं॥ खे यो वि व दयापोतायया भैषज्यरोचनं॥ उत्पत्ये वहिरामा रुपाणे कुख
जने षु च॥ न्यास तामनसोमर्त्यी आत्मनो न स्थे हे तुषु॥ नताव विद्रुपस्वार्थी आम्यतो वृत्ति
नाद्धति॥ कर्थं युं आत्र पु न से षु तां त्र मो विरातो बुधः॥ एवं व्यवसि तं तं कोचि दकिज्ञाय

कृच्छ्र यः॥ फलसुतिं कुसुंभिता मवेद ज्ञाव दत्तिहि॥ कामिनः क्व प एा न्नुआः पु षे पु प लं व
द्ध प उ॥ क्रषि मकु धा धूमता त्रा स्वं लोक भवि दमि तो॥ न ते पा मे ग वा न कि ह दि स्वं य इ इ यें
तः॥ उ कप वासाह्य स्तु तृ पो य पा नीहार य दुप॥ ते मे म त भ वि ज्ञा य प रो कोंकष
या म काः॥ तृ पापस्व न विहिं स्वं त्ते हिं स्व त्ते पे त्य तै स्मृतौ हिं सा यां यदि राग स्व द्य
नरात न चोदना॥ इति वे द द्ध निं स्तु त्वा न प्रबु ध्या वु का म्य स्तु हिं सा वहा
रात्या ल क्षौः प स्तु ी स्व सु खे क यो॥ य ज्ञे दे व ता प शौः पि तृ द्वे वै ता प त्तीव रब लाः
स्व प्रा प म म मुं लो क मसौ तं स्व व रा त्रिय यं॥ क्षा रि षो ह दि सं काप्य त्य जं त्य स्थी व ज्य पा वं विध
र ज स्स त्व त मो नि ष्ठा र ज स्स त्व त मो गु णः॥ उ पा स ने इ द्र मुख्या दे वा दी न य पे व मां

व्यसाधिचिकित्सार्थं गणदोषौ गुणागुणौ ॥ धर्म्मार्थं व्यवहारार्थं यात्रार्थं मपि चानघ
रितोयम्मया चरोध्याम्मुद्वह तांधुरं ॥ भूम्यं ब्रह्म निना कारा भूतानां पं च धातवः
त्र श्राब्रह्मस्थावरादी नां तारीरा आत्म संयुतां ॥ वेदेवनाम रूपाणि विषमा
व्य णासमेषु पि ॥ धातु षड्व कार्य्यवे एतेषां स्वार्थसि द्धये ॥ देशकालनिभा
वानांव स्वनाम्म मस्त तम ॥ गुणदोषौ विधीये तेनिय मास्थिति कर्म्मणां ॥ क्षत्र
धर्म सारौ देवाना मब्रह्मणायो गुणविभं वेहं ॥ छसंसारोप्य सौ वीरक्रोक ता
तं स्क रक्षते रि णां ॥ कर्म्मणो गुणता वान्कालोद्भव्य त स्वतप कवा ॥ यतो निवर्त्त्यते कर्म्म
सदोषो कर्म्म वा स्मृतः ॥ द्रव्य स्य गुणद्धा गुणद्धी चद्वेण वच ने नचम संस्कारेण व

कालेन महत्वा सततया तप॥ रात्रा तत्र्या पवाबुद्ध्या समृद्ध्या च तपामनः॥ अन्ये ऽछ्वंस
हितस्या देशाक स्यानुसारतः॥ धान्या दार्व स्य त कूर्नां रस तेज स चर्मणां॥ कालन,वा युग्नि म्हायैः
पार्थिवा बांयु तायुतेः अमेध्यानि पंयद्येन गंन्ध लेपं च पोह्यति भजते पक्षातिं करमात
कौचल्या वद्विष्यते स्ना नदानंतपोव स्यावीर्यसंस्कारक म्यभि॥ मनुष्यपाचामन
सौचरुद्धकर्मीच रे द्विजः॥ मंत्रस्य च परित्यानं कर्मेऽ द्विर्मदर्पणां॥ धनेसं
पयुते - परेभिरधर्म स्त्वविपर्यये॥ क्वाचित्तऽणोपि दोषस्याद्वौपापि विधिना ऽशाः॥ वृ
णा-दौषाय्यनियमस्ततर्भि द्वामेव वाधते॥ समानकर्माचरणोपनितानाभ पाकृतक॥ श्रौतपतितो
ऽ लोरस्तंगोत्व रायानः पततयधः॥ यतो यतो निवर्तते ततविमुच्यते ततन नऽत्तां ततः॥ तुष्वधर्मीनुसा-

कथंचिद्यदि वाञ्छति॥ न किंचित्साधवो धीरा भक्ता ह्येकान्तिनो मम॥ वांछंत्यपि मया दत्तं कैवल्यम
पुनर्भवं॥ नैरपेक्ष्यं परं प्राहुर्निश्रेयसमकल्पकं॥ तस्मान्निराशिषो भक्तिर्निरपेक्षस्य मे
भवेत्॥ न मय्येका   न्तभक्तानां गुणदोषोद्भवा गुणाः॥ साधूनां समचित्तानां बु
द्धेः पारमुपेयुषां   एवमेतान्मयादिष्टानुपतिष्ठन्ति   ये पथः॥ क्षेमं विन्दन्ति म
त्स्थानं यद्ब्रह्म प   रं विदुः॥ इति श्रीभागवते   एकादशस्कंधे विंशो
ध्यायः॥ ॐ॥ भगवा   न्॥ य एतान्मत्पथो हित्वा भक्तिज्ञानक्रियात्मकान्॥ क्षुद्रान्कामा
ंश्चलैः प्राणैर्जुषंतः संसरंति ते॥ स्वे स्वेऽधिकारे या निष्ठा स गुणः परिकीर्तितः॥ विपर्य
यस्तु दोषः स्यादुभयोरेष निश्चयः॥ शुद्ध्यशुद्धी विधीयेते समानेष्वपि वस्तुषु

तः ॥ गुणदोषविधानेन संगानां त्याजनेछया ॥ जातश्रद्धो मत्कथासु निर्विण्णः सर्व्वकर्म्मि
सु ॥ वेद दुःखात्मकान्कामान्परित्यागेप्यनीश्वरः ॥ ततो भजेत मां प्रीतः श्रद्धालुर्दृढनि
श्चयः ॥ जुषमाण श्च तान्कामान्दुःखोदर्कांश्च गर्हयन् ॥ प्रोक्तेन भक्तियोगे
न भजतो मासकृ न्मुनेः ॥ कामा हृदय्या नश्यन्ति सर्वे मयि हृदि स्थिते ॥
भिद्यते हृदयग्रंथि श्छिद्यन्ते सर्व्वसंशयाः ॥ क्षी यन्ते चास्य कर्म्माणि मयि
दृष्टेखिलात्मनि ॥ त स्मान्मद्भक्तियुक्तस्य योगिनो वै मदात्मनः ॥ न ज्ञानं न च वैरा
ग्यं प्रायः श्रेयो भवेदिह ॥ यत्कर्म्मभिर्यत्तपसा ज्ञानवैराग्यतश्च यत् ॥ योगेन दानधर्म्मेण श्रे
योभिरितरैरपि ॥ सर्व्वं मद्भक्तियोगेन मद्भक्तो लभतेञ्जसा ॥ स्वर्गापवर्गं मद्धाम

न मार्गेण क्रम कदाच येत॥ मनोगतिं विसृज्य तत्त्वसो जितेन्द्रियः॥ सत्वसंपन्न यो बुद्ध्यां मन आ
मकलान्नु येत॥ एवं वै पुरमा योगी मनससंकृ ठ स्मृतः॥ दृढ यत्न त्व मवि कई म्यस्ये वार्य एणोमुह्रः॥
सांख्ये न सर्व भावानां प्रतिलोमानुलोमतः॥ भवाप्ययावनुध्याये भ्म गयावत्स पुरा
दति॥ निर्विण्णस्य विर क्तस्य पुरुषस्याभवेदिनः॥ म नस्य जतिः दैभी गर्यु खिति
तस्यानुविनयाय॥ स मो द्विभिर्यीग पथे सबीदिक्याच विद्या॥ समा चोपास
नाभि वीनाव्ये यीवौं स्नरेक्ष नः॥ यदिक र्यातपमादे न योगी कर्म विगर्हितं॥
योगे नैव दहेदंहो नान्यैर्यनैः कदाचन॥ खेखे विकारे या निष्ठा सगणः परिकीर्तिताः॥
विपर्यय सज्जादोप स्यादुभयोरेष निर्णयः॥ कर्मणा आत्मशुद्धा नामनेनानियमः कृ

स्वर्गे गो देव त मि क्षत्र लो के ब्र रा य णा स्त्र प्या॥ साध कं ज्ञा न भ क्ति भ्यां मुभ यत्त द साध कं॥ नी न र
स्व गीतिं कां द्वो भा र की द्य वि च क णः॥ ने मं को कां स्व कां दोत त देहावे त्रात्र प्र मा द्यतिः॥ ए त द्वि द्वा श्रव ऐ
रा म्रु त्यो र भ वा य प ते त सः॥ श्र प्र म त इ दं ज्ञा त्वा म र्त्य म प्य र्त्य सिद्धि दं॥ कि द्य मा तं यभै
रै नुं क्ष त्र नी डै क न स्पतिं॥ स्व ग स्व के त म त्स्ट ज्य द्वो मैं या ति ह्य नं प टः॥ म हो
रा ने रिक द्य मा नै बुद्धा यु र्भ य के प युः मु ता सं गः प रैं बु द्धा नि री ठ ड प शा म्यति
नृ दे ह मा सा द्य सु दु र्लं भं व यः स्नू वं स्रु क त्यं ग रु क र्ण धा रं॥ म या नु कू ले न न भ स्व तो
रि तं पु मा व्र भ वा ब्धि न त रे त्स ग्या त्म हा॥ य दा रं भे षु नि र्वि ण्णो वि र क्तः सं य ते न्द्रि यः॥ अ भ्या
म नो यो गी धा र ये द च ल म्म नः॥ धा र्य म्मा णं म्म नो य र्हि भ्रा म्या दा स्व न व स्थि तं॥ त त न्द्रि तो नु रो धे

क्षुस्तवेश्वर॥ श्रेयस्त्वनुपलब्धेर्थे साध्यसाधनयोरपि॥ गुणदोषभिदादृष्टिर्निगमात्तेन
हि स्वतः॥ निगमेनापवादश्च भिदाया इति मे भ्रमः॥ भगवानुवाच॥ योगास्त्रयो मया प्रोक्ता नृणां श्रे
योविधित्सया॥ ज्ञानं कर्म्म च भक्तिश्च नोपायोन्योस्ति कुत्रचित्॥ निर्विण्णानां ज्ञानयोगो
न्यासिनामिह कर्म्मसु तेष्वनिर्विण्णचित्तानां कर्म्मयोगस्तु कामिनां॥ यदृच्छया म
त्कथादौ जातश्रद्धस्तु यः पुमान्॥ न निर्विण्णो नातिसक्तो भक्तियोगस्य सिद्धिदः॥
तावत्कर्म्माणि कुर्व्वीत न निर्विद्येत यावता॥ मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जा
यते॥ स्वधर्म्मस्थो यजन्यज्ञैरनाशीःकाम उद्धव॥ न याति स्वर्गनरकौ यद्यन्यन्न समाचरेत्॥
अस्मिंल्लोके वर्त्तमानः स्वधर्म्मस्थोनघः शुचिः॥ ज्ञानं विशुद्धमाप्नोति मद्भक्तिं वा यदृच्छया॥

स्त्वगुणोदयः॥ नरकस्तमउन्नाहो बन्धुर्गुरुरहं सखे॥ गृहं शरीरं मानुष्यं गुणाढ्यो ह्याढ्य
उच्यते॥ दरिद्रो यस्त्वसंतुष्टः कृपणो योजितेन्द्रियः॥ गुणेष्वसक्तधीरीशो गुणसंगो विपर्य
यः॥ एत उद्धव ते प्र श्नाः सर्वे साधु निरूपिताः॥ किं वर्णितेन बहुना लक्षणं गुणदो
षयोः॥ गुणदोषदृ शिर्दोषो गुणस्तूभयवर्जितः॥ ० इति श्रीभागवते [illegible]का
दशस्कन्धे एकोनविं शोध्यायः॥ उद्धव उवाच॥ विधिश्च प्र तिषेधश्च निगमो हीश्व
रस्य ते॥ अवेक्षतेर विन्दाक्ष गुणदोषञ्च कर्मणां॥ वर्णाश्रमविकल्पञ्च प्रतिलो
मानुलोमजं॥ द्रव्यदेशवयःकालान्स्वर्गन्नरकमेव च॥ गुणदोषभिदादृष्टिमन्तरे
ण वचस्तव॥ निःश्रेयसं कथं नृणां निषेधविधिलक्षणं॥ पितृदेवमनुष्याणां वेदश्च

दशस्मृताः॥ पुंसामुपासितास्तात यथाकामंदुहन्तिहि॥ शमोमन्निष्ठताबुद्धेर्दम
इन्द्रियसंयमः॥ तितिक्षादुःखसम्मर्षो जिह्वोपस्थजयोधृतिः॥ दण्डन्यासःपरंदानं
कामत्यागस्तपस्मृतं॥ स्वभावविजयशौर्यंसत्यंचसमदर्शनं॥ ऋतंचसूनृ
तावाणीकविभिःपरिकीर्त्तिता॥ कर्म्मस्वसंगमश्शौचंत्यागस्सन्यासउच्यते॥
धर्मइष्टंधनंनृणांयज्ञोहंभगवत्तमः॥ दक्षिणाज्ञानसंदेशःप्राणायामःपरं
बलं॥ भगोमऐश्वरोभावोलाभोमद्भक्तिरुत्तमः॥ विद्यात्मनिभिदाबाधोजुगुप्सा
ह्रीरकर्म्मसु॥ श्रीर्गुणानैरपेक्षाद्याःसुखंदुःखसुखात्ययः॥ दुःखंकामसुखापेक्षापण्डि
तोबन्धमोक्षवित्॥ मूर्खोदेहाद्यहंबुद्धिःपन्थामन्निगमस्मृतः॥ उत्पथश्चित्तविक्षेपःस्वर्गो

द यः ॥ उ द्ध वः ॥ प मः कृ ति वि धः प्रो तो भि य मो वा रि क र्ता न ॥ क स्या मः को द मः क्व स्य का ति ति ष्ठा धृ
ति ः प भो किं ब्ला नं किं स प रो यैः किं स त्य मृ त रो च के ॥ क स्या गः किं न्ध नं श्वे पृं को य जः का च द द्वि णा ॥
ब पुं सः किं खि ः ब लं रो षुं भ गो ला भ स्व के रा वः ॥ का वि द्या ह्रीः प रा का ष्ठी ई किं स्तु स्व हु ख मे व वा
८ कः प ण्डि तः क स्व स र्व ः कः प न्था उ ह प य स्व कः ॥ क स्व गौ न र कः क स्व त को बं
धु रा किं ग ट हैं ॥ क श्रा मः को द रि द्रो वा क्ष प णः कः क ई श्व रः ॥ ए ता न प्र श्ना
म ब्रू हि वि प री तो स्व सा स्प ते ॥ ज ब वा क्य म हिं सा स त्य म स्ते य म सं गो ह्री र सं च
यः ॥ श्रा स्ति क्यं ब ह्म च र्य च मौ नं स्थै र्यं व मा भ यं ॥ शौ चं अ प स्त पो हो मा स्य द्धा ती र्थ
द र्श नं ॥ तो षी ट वं प रा र्थे हा तु ष्टि ा चा र्या से व नं ॥ ए ते य मा स्व नि य मा उ न

ता ध र्म्मा नु ब ड्ढ स्य स्वा भो द ध र्म्मा न पृ छ त॥ ता न ह तो भि धारया मि देव बु त म्ह स्वा कु ताव्व॥ को नु
७३ वि ज्ञा न कै रा ग्य प्र द्धा भ तुय प बृं हि तान्॥ न वै का द ल पँ च जी न भा वा न र तं षु ये न वै॥ ई द्वे ता
द धे क म प्ये षु ता त्र बा न म्म म नि स्थि तं॥ ता त दे व हि वि ज्ञा न न त पे को न पे न य त्न स्थ
प्र स्ठा त्र प त स प्य या न पृ रये त्र भा वा नां त्रि ग ड णा म नो॥ न्भा दा व सं व म द्धो य स्ट ज्या त्र
स्ट ज्यै य द त्रि या त्र॥ पु न स्त त्र प्र ज्ञि सं ज्ञा मे य स्कि ष्ये त न दै व स त्र॥ ल्लु ति प्र त्य
6 जु मै ति ह्य म न्तु मा नं श्व तु ष्ट यं॥ प्र मा णों षु न व स्था ना द्वि क ल्पा स वि र ज्य ते॥ ज्ञा
णा प रि णा म त्ता द वि रिं ज्ञा द मैं ग लं॥ वि प खि न्न स्व रं प रये क ह ष म पि ह षु वा त्र॥ म ति सो
ग ः पु रै वो ज्ञाः प्री य मा णा य ते न च॥ पु न स्व क य यि ष्या मि म त्र म तों ः का र पां प्र ग॥ वं दा

मृतकथायाम्मे शश्वन्मदनुकीर्त्तनं॥ परिनिष्ठा च पूजायां स्तुतिभिः स्तवनं मम॥ आदरः
परिचर्यायां सर्वांगैरभिवन्दनं॥ मद्भक्तपूजाभ्यधिका सर्वभूतेषु मन्मतिः॥ मदर्थेष्वं
गचेष्टा च वचसा म द्गुणेरणं॥ मय्यर्प्पणं च मनसः सर्वकामविवर्ज्जनं॥ मद
र्थेर्थपरित्यागो भोग स्य च सुखस्य च॥ इष्टं दत्तं हुतं जप्तं मदर्थं यद्व्रतं त
पः॥ एवं धर्म्मैर्मनु ष्याणामुद्धवात्मनिवेदिनां॥ मयि संजायते भक्तिः कोन्योर्थो
स्यावशिष्यते॥ यदा मय्यार्प्पितं चित्तं शान्तं सत्वोपबृंहितं॥ धर्म्मं ज्ञानं स वैराग्यमैश्व
र्यंश्चाभिपद्यते॥ यदर्प्पितं तद्विकल्पे इन्द्रियैः परिधावति॥ रजस्वलं चासन्निष्ठं चित्तं विद्धि विप
र्ययं॥ धर्म्मो मद्भक्तिकृत्प्रोक्तो ज्ञानं चैकात्म्यदर्शनं॥ गुणेष्वसंगो वैराग्यमैश्वर्यं चाणिमा

तिमीवे संसिद्धिम्मुनपौश्वगर्वे॥ तव्युद्धवाञ्जयन्ति यख्विविघोविकारोमापातरां पत्तिति नाद्य
पकर्गपोप्युत॥ जन्मादयोंस्पयदमीतेवतस्य किंस्युराद्यके योर्यदसं तोमित्त देवमह्रे
ऽद्धवः॥ ज्ञानविरुद्धं   विपुर्नयदेजद्वैराज्यविज्ञानयुतंपुराणं॥ श्रारव्याहिविखेखरवि
खसूनं वरभक्तिपो   गंभीश्चमहद्भुमृगयं॥ तापत्रये   णाभिहतरूपवीरे सहप्य
मानस्यभवद्धनीरा   पूरयाभिनाब्धे करणामवौविद्ध   द्धातपत्रादमृताभिवर्षी
त॥ दर्षंजनुसंपत्ति   तविलेस्मिन्नकालहिनाद्भुलरुखोरुतर्षात॥ सम द्वरैनक्र
पसापकवैर्यर्वचोभिरासिंश्च महानुभाव॥ भगवान्॥ इत्थमेतातरपुरारजाभीष्टंन्ध म्मिभेतावर
त्रजातारानुः पपक सर्वेषां नोनुश्ट एवतां॥ निवृत्ते भारते युद्धे रुद्दन्निधनविद्धः॥ सु

ति युतो जिज्ञासेय सकरः परः ॥ एतत्ते अभिहितं साधो भवान्पृच्छति यच्च मां ॥ यथा स्वधर्मसंयु
क्तो भक्तो मां समियात्परं ॥ इति श्रीभागवते एकादशस्कन्धे अष्टादशोध्यायः ॥ ॐ भगवानुवाच
यो विद्याश्रुतसंपन्न आत्मवान्नानुमानिकः ॥ मायामात्रमिदं ज्ञात्वा ज्ञानं च मयि सन्न्यसे
त् ॥ ज्ञानिनस्त्वहमेवेष्टः स्वार्थो हेतुश्च सम्मतः ॥ स्वर्गश्चैवापवर्गश्च नान्यो
र्थो मदृते प्रियः ॥ ज्ञानविज्ञानसंपन्नाः पदं श्रेष्ठं विदुर्मम ॥ ज्ञानी प्रियतमो
तो मे ज्ञानेनासौ बिभर्ति मां ॥ तपस्तीर्थं जपो दानं पवित्राणीतराणि च ॥ नालं कुर्व
न्ति तां सिद्धिं या ज्ञानकलया कृता ॥ तस्माज्ज्ञानेन सहितं ज्ञात्वा स्वात्मानमुद्धव ॥ ज्ञानविज्ञा
नसंपन्नो भज मां भक्तिभावितः ॥ ज्ञानविज्ञानयज्ञेन मामिष्ट्वात्मानमात्मनि ॥ सर्वयज्ञ

एडिड्रि यसारथिः॥ ज्ञानवैराग्यरहितं त्रिदण्डमुपजीवति॥ सुरानात्मानमात्मस्थं निह्नु
तेमांश्च धर्म्महा॥ अविपक्वकषायोस्मादमुष्माच्च विहीयते॥ भिक्षोर्द्धर्म्मः शमोहिंसा तप
ईक्षा वनौकसः॥ गृह हिणोभूतरक्षेज्याद्विजस्याचार्य्यसेवनं॥ ब्रह्मचर्यं तप
स्शौचं संतोषो ब्रत सौहृदं॥ गृहस्थस्याप्युतो गंतुस र्वेषां मदुपासनं॥ इ
तीय स्वधर्मेणा भजे न्नित्यमनन्यभाक्॥ सर्वभूतेषु मद्भावो मद्भक्तिं वि
न्दते विरागः॥ भक्त्योद्ध वानपायिन्या सर्वलोकमहेश्वरे॥ सर्वोत्पत्त्यप्ययं ब्रह्म
कारणं मोपयाति सः॥ इति स्वधर्म्मनिर्णितौ सत्त्वो निर्जातमहत्मतिः॥ ज्ञानविज्ञानसंप
न्नोविरक्तो स्मुपैति मां॥ वर्णास्रमवतां धर्म्म एष आचारलक्षणः॥ स एव मद्भ

त्रिषीदेत कानेकालेतानंक्कवित॥ नध्वानद्दऐंभुतिमानुभपदेवयंत्रितं॥ आह्यरार्थं
समीहेत युता मत्त्राणधार ताँ॥ तवंविं मृत्य तेतेन तद्विजायविक्ष्छ मुच्यते॥ यद्दकं याप
पआभमघाक्छेषु मुतापरं॥ तयावासस्तथाशय्यांपापंप्रपंभजेन्मुनिः॥ शौ
चमाचमनस्नानं नतुचौदेनयाचरेत॥ अन्या स्वुनियमाबद्वाजीयस्या
हं लीनयेखरः नहितस्यविकत्याथीक्षियाम कौदापाहृता॥ व्रादेहा
तं कावितरद्यातिस्त तस्रुंपघतेमया॥ दुखोदर्केषुकामेषुजातणिर्वेदआत्मवानृ॥
अजिज्ञासीतमद्धर्मो मुनिंगुरुमुपव्रजेत॥ तावत्परिचरेत्भतास्सद्धावाननन्स्तू
यकः॥ यावत्ब्रह्मविजानीयाभ्रमेवगुरुमाहृतः॥ यस्त्वसंयतषड्वर्गःपवँ

तपापस्येदृस्यमानं विनश्वरं ॥ अस तात्विको विरमेद्विठामुनचि कीर्षितान् ॥ पदेतद्

मनिजगन्मनोवाक्पाणि संभृतं ॥ सर्वथायेतित कौणास्वस्थस्यस्वा नततस्मरेत् ॥ ना

ननिष्ठोविरतोबा मत्तभतो बानपेक्षकः ॥ सलिंगानायमीस्यवा चरेद्वविधिगो

चरः ॥ बुधोबालक कृतजीडेत कुरानोजनवद्युरेत ॥ वदेद्धुम्नतवद्विद्वाश

गोचर्यानैगमस्व रेत ॥ वेद्वावदरतोनस्यानपा षण्डीनहेतुकः ॥ एष्का

वादविवादेनक धितपक्षसमासयेत ॥ नोद्विजेतजनाद्धीरोजनेधौद्विजयेन्न तु

बेतिवादंस्त्रितित्वेतन्नावमन्येत कंचन ॥ देहमुद्दिश्यपरेण्डवदैरं कुर्यान्न केनचित् ॥ एक

एकपरोद्यास्माभूतेषात्मन्यपिस्थितः ॥ पपेन्दुरुदपात्रेषु भूतान्येकामकाक्षि च

त्वा ततोपसृतस्य वाच्यतः॥ विभज्य याचितस्तोषं भुंजीता शोषमा[illegible]॥[illegible]

मेताभिस्तांगसंयतेंद्रियः॥ ग्रामक्रीड ग्रामरत ग्रामवानसमदर्शीनः[illegible] लब्ध्वान

तरस्तोमुत्तभाक विमलाशयः॥ ग्रामानं विजये देकमभेदेनम[illegible]

निः॥ ग्रानृदी केताम नो बंध्वं म्मोदश्च नाननिष्ठया बंध्वं इछ्रियविद्वेषो

मोक्षता पाश्चसेय मः॥ तस्माद्विषयमय षड्वर्गम्मभा वेक्षिमनचारश्रुगिः

विरक्तः कुलकामे ज्योलब्ध्वाम निसुखम्महत्॥ पुरग्रामवजानसर्वाबभिदा

संप्रविसंस्चरेत्॥ पुण्यदेशसरिकैलवनास्नमवतीम्मही॥ दानपुस्थास्रमप

देषभीक्ष्णांभैक्षमाचरेत्॥ संसिद्ध्यात्स्वसीम्मोहस्छुद्धसत्वस्सिलाब्धसा॥ नैतद्दस

क्षीन समारोप्यमच्छिन्नोग्निं समाविरोत॥ यदाकमीविपाकेषु लोकेषु निरपासमसु॥ विरागो
जायते समुद्युक्न्यसाग्निः प्रव्रजेत्ततः॥ दृष्ट्वाय यो यं देशम्मोदंता सर्वे स्वमृत्तिजं॥ श्रद्धां सम्प्राप
श्रोते रयुनिरपेक्षः प रिव्रजेत॥ विप्रस्य वै सन्यसं तो देवादारायष्टि रूपिणः॥ विद्वं कु
र्वस्य यत्र ग्मानान्यस्य समयाहपरं॥ ब्रह्मण्याद्वे म्भनिर्वा सः कौपीनाच्छादनं परं॥
त्यक्ता नदुःखपानाया मन्यता किञ्चिदनापदि॥ दृष्टिपु तन्यसेत्पादं वस्त्रपूतं
पिबेज्जलं॥ सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत्॥ मौनानीहानिर्यालापामोद
ताडवाण्डेत्तड चोनसां॥ नद्येत यस्य संस्यगवेतभिन्नेभ दुर्घातः॥ विश्वां यतु घुव तेषविं
ग त्यांकजं पं स्वरैरं॥ सत्रागाराभ सं कुत्रां स्तृष्येनभ्रं नतीवतां॥ बठिं र्जगा सएतंग

स्वास्तार ब्राअ ने व्याक ए ठ म ब्न स्त्रि रा र एवं वृत स्त प स्च रेत॥ श्रग्नि प कं स्त म ङ्गीया
न्न काल प क्र म पा पि बो॥ तु नू स्व ना रम कु स्तो बा द त्तो नू स्व न ए व वा॥ स्व यं सौ च नु पा त स
ब र्व मात्म नो वृत्त का र पैं। ए श का ल द या कि श्रो ना द दी ता न्य दा द तं॥ व न्ये स्व र पु
रो डा शा भि व प्रेत्क ल वोदि ता न॥ न ठ स्रो त न प ख ना मां य जे त व ना श्र
क मी॥ श्रग्नि हो त्र च द री स्व पू एं मा स स्च प र्व कृत॥ चा ठ र्मा स्या नि व मु नेरा
सा ता नि च नै ग मै श्च ए वं श्री री न त पू सा मे नि र्द्व मनि सं म त:॥ मा स पो म य मा रा
6 श्चा ना षि लो का इ पैति मां॥ य रवे त न्न क्र क त खी एं न पो वै रव य स म्म ह त॥ का मा या त्यी व से
ए आ र बा लि श: को प र स्त त:॥ य दा सौ नि य मे का न्यो ज र या ना त वे च पु:॥ श्रा ग न्य

स्त्वारात्कमतिर्गेहेपुत्रवित्तेषणातुरः॥ स्त्रैणाः कृपणाधीर्मूढो ममाहमितिबद्ध्य
ते॥ अहो मे पितरो वृद्धौ भार्या बालात्मजात्मजाः॥ अनाथा मामृते दीनाः कथं
जीवति दुःखिनः॥ एवं गृहारायाक्षिप्तहृदयो मूढधीरयं॥ अतृ
प्तास्ताननुध्याय न्मृतोर्ध्वं विशते तमः॥ ॐ हत्येकादशस्कं
धेसप्तदशोध्या यः॥ ॐ भगवानुवाच नंविविक्षुः पुत्रेषुभार्यान्यस्यसहै
हैववा॥ वनएववसे कांतस्तृतीयंभागमायुषः॥ कन्दमूलफलैर्वन्यैर्मेध्यैर्वृत्तिं
प्रकल्पयेत्॥ वसीतवल्कलंवासस्तृणपर्णाजिनानिवा॥ केशरोमनखश्मश्रुमलानिबि
भृयाद्दती॥ नधावेदप्सुमज्जेतत्रिकालंस्थण्डिलेशयः॥ ग्रीष्मेतप्येतपंचाग्निर्वर्षा

५ ब स्य

यँ च न॥ द्व द वृ तिँ भ जे ट्टै रप ः य्द ड्ः का रु क ट क्रि याँ॥ क्र क्का क्त तो न ग ह्ये ए वृ तिँ लि ऐ त
क ल्मि णा॥ वे दा ध्या य स्व धा स्वा हा ब ल्य न्ना घे र्य पो घि तं॥ दे व र्षि पि ट भू ता नि म द्रु पा ए प ब्रह्मँ य
जे त्न॥ य ह क पो प पु बे न रु ल्के नो पा र्जि ते न ता॥ ध ने ना पी ड र्ये त्व भृ त्या भो य जे ता
ह रे त्व क त्लु न्॥ कु डुँ बे षु न स उे त न प मा धे त्व कु डुँ ब्धि षि पि॥ वि प स्वि नु
स्व रँ प रे पै द ट्टषु म पि ह षृ व त्व॥ पु च्च दा रा स बँ न्धु नाँ सँ ग मः पा न्थ सँ
ग मः॥ न्न नु दे हँ वि दाँ न्ये ते स्व भो नि द्रा नु गो र्ये पा॥ इ स्यँ प रि मृ रा न्यु तो ग्रृ
हे ष ति पि व ढ स्व॥ न गृ ह्यै र नु ब क्षे त नि र्म मो नि र हँ क्रृ तिः॥ क र्म षि र्ग ट हु मे धी
यै रि षा मा मे व भ क्ति मा त्व॥ ति षु द्व बँ वो प वि रो त्व पु जा वा न्व वा प रि व्र जे त्॥ य

ब्यान्याभ्यामेवजीवेत [सनेवीदोषदृकयोः॥ बात्यमस्थि(हि देहोयंद्रुदृकामायनेष्यते॥
क्षुद्रायतपसेवेहप्रैत्यानन्तसुखायच॥ सलोकेकवृत्यपरिउपचितौधम्मेम्मदात्तविरजं
क्षुषाणाः॥ भव्यपिता भागरहणवतिषुम्नातिपसकस्मिपतिशांति॥ समुद्धरति
यविपंसीदसम्भपरा यणं॥ तानुद्धरिष्येनचिरादपतृभ्योरिवार्णवात्॥
सर्वास्समुद्धरेद्राजा पितेवव्यसनातप्रजाः॥ ब्राह्मणंच्यामेनाधीरोयध्याग
वपतिर्गचान्॥ एवंवि धोनरपतिर्विमानेनार्कवर्चसा॥ सर्धयेठारुभंकात्स्नमिन्द्रेण
सहमोदते॥ सीदत्सुविप्रोवणिग्वृत्तपणैरेवापदन्नरेत्॥ खड्गेनवापराक्रान्तोनसद्वृत्या
कपंश्वज॥ वैश्यवृत्यातुराजन्योजीवेन्मृगयापापिच॥ चरेद्वाविप्ररूपेरणानसद्वृत्याक

चमाचमनं स्नानं संध्योपास्तिर्म्मार्ज्जनं ॥ तीर्त्थसेवा जपोस्पृह्यरपभक्ष्यासंभाष्यवर्ज्जनं ॥
सर्वीसमप्रवृत्तो पश्चियमः क्रन्दनं ॥ मतभावस्सर्वक्षतेषु मनोवाक्कायसंयमः ॥ एवं
बुद्धक्ताधरोबाह्य णोनिरिवस्वनवे ॥ मतभतासीवतपसादग्धकर्म्मीरायोमलः
ब ह्यपानत्तरभावेद्य यपाञ्जिवासितागमः ॥ ७ ॥ रकेद दिग्गाद्वीस्नायात्रु७
न वनुमोदितः ॥ ७ हंकनंवोपवित्रोत्तप्रवुज्जेवद्धा दिजोत्तमः ॥ श्राद्धमाद्धा
ध्रमंगकेश्चान्यया मह्रपरस्वरैतः ॥ ७ हास्थीसदृशोभाव्यो मुद्दहेद जुगुप्सितां ॥
यक्षीयसोत्तुवयसापांसवर्णामनुकामातः ॥ ८ ज्याध्येयनदानानि सर्वेषास्य द्विजन्मनां ॥ प
तिग्रहोध्यापनं च बाह्मणास्यैव याजनं ॥ प्रतिग्रहस्मन्यमानस्तपस्तेजो यशोनुदं ॥

चार्य्यं गोविप्रगुर्वृद्धसुरान्छुचिः॥ समाहित उपासीत संध्ये च यतवाग्जपन्॥ आचार्य्यं मां वि
जानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्॥ न मर्त्यबुद्ध्यासूयेत सर्ववेदमयो गुरुः॥ सायं प्रातरुपानीय
भैक्ष्यं तस्मै निवेदयेत्॥ यच्चान्यदप्यनुज्ञात उपयुञ्जीत संयुतः॥ शुश्रूषमाणाचार्य्यं
सदोपासीत नीचवत्॥ यानशय्यासनस्थानैर्नातिदूरे कृताञ्जलिः॥ एवं वृत्तो गु
रुकुले वसेद्भोगविवर्जितः॥ विद्या समाप्यते यावद्बिभ्रद्व्रतमखण्डितम्॥ यद्य
सौ छन्दसां लोकमारोक्ष्यन्ब्रह्मविष्टपं॥ गुरवे विन्यसेद्देहं स्वाध्यायार्थं बृहद्व्रतः॥
अग्नौ गुरावात्मनि च सर्वभूतेषु मां परं॥ अपृथग्धीरुपासीत ब्रह्मवर्चस्व्यकल्मषः॥ स्त्री
णां निरीक्षणस्पर्शसंलापक्ष्वेलनादिकं॥ प्राणिनो मिथुनीभूतानगृहस्थोग्रतस्त्यजेत्॥ शौ

प च पेवे रव प्र कृ त य स्विमाः॥ दृ रू ष पाद्धि ज ग वा द्दे वा ना म प्य मा य या॥ त त लब्धं नस
तो ष स्थूद प्र कृत य स्विमाः॥ ध्र शौ च म नृ तं स्तै यं नास्ति कं दृ षवि ग्रहः॥ का मः क्रो ध स्वतं ष
३ स्व स्व भा वो तो व साप्ति नाँ॥ अहिं सा स त्य म स्ते य म क म क्रो ध लोभ ता॥ भू त प्रि यहि तं
ब वा को ध म्र्य य सा र्वव पि कः॥ द्वि ती यं प्रा प्या नु पूर्वा ङ्भो प न प न ष्ठ्यु जः॥ व
न स बन्ध स्य कु ले कृतो ब्रह्मा धी पी त वा ग्य तः॥ मे रव ला जि न द ण्डा दा ष्टं धी पी
स वा स्त्र व क म ण्ड लून्॥ ज टि लो धौं त द्व स्त्र वा सः पी ग क रा ब्द दि तं॥ स्ना न भो ज न
हो मे षु ज पो चा रे च वा ग्य तः॥ न छिं न्द्या न्न ख रो मा णि क क्षो प स्थ ग ता न्य पि॥ रे तो ना व
किरे आ तु ब तं व त धा र स्व यं॥ व्य व ती र्या व गा त्वा सु प ता सु ज प दीं ग पे त॥ ध्र व्य की

प्रणव एवागोधर्म्मोहं दृषरूपधृक्॥ उपासंज्ञे तपोभि षाहं सामामुत्ता कारबिषाः येतामु
खमहाभाग प्राणान्मेद्ध द्ध पाजयी॥ विद्या प्रादुरभूत स्यान्नह मा संबिहन्म खः॥ विप्र द्वात्रि
यविटंकुद्धा मुखबाहु रूपादजाः॥ वैराजात्ते पुरुषा ज्ञाताय आत्मा चोरलक्षणाः॥ गृ
हा स्त्रमौजबनतोबह्मे चर्य्यं हृदो ममम॥ वक्षस्थला द्वने बासस्सन्यासः सीषाण
स्थितः॥ वर्णानामास्त्र माणां श्च जन्मभूम्य नुसारिणीः॥ आसन्नप्रकृत योनृ णां
नीचैर्नीचोत्तमोत्तमाः॥ शमोदमस्तपस्शौचं संतोषः क्षान्तिरार्जवं॥ मद्भक्तिश्च द
या सत्यं ब्रह्म प्रकृतयस्त्विमाः॥ तेजो बलं धृतिश्शौर्यं तितिक्षौदार्य्यमुद्यमः॥ स्थैर्यं ब्रह्मण्यमै
श्वर्य्यं क्षत्र प्रकृतयस्त्विमाः॥ आस्तिक्यं दाननिष्ठा च अदंभो ब्रह्मसेवनं॥ अतुष्टिरर्थो

महेसि॥ पुराकिलमहाबाहो धर्म्मं परमकं भुवः॥ यमाहहंसरूपेणाब्रह्मणे
ऽभ्यात्थमाधव॥ सइदानीं सुमहताकालेनामित्रकर्शन॥ नप्रायोभवितामर्त्यलोकेप्राग
नुशासितः॥ वक्ता कर्त्ताविता नान्योधर्म्मस्याच्युततेविभो॥ सभायामपिवैरिं
ब च्यांयत्रमूर्त्तिधराः कलाः॥ कर्त्राविज्ञाप्रवक्त्राचभ वतामधुसूदन॥ त्यक्ते
महीतलेदेवविन ष्टंकःप्रवक्ष्यति॥ त्वमतस्सर्व धर्म्मज्ञधर्म्मस्त्वद्भक्ति
लक्षणः॥ पथाय स्यविधीयेततथावर्णयमेप्रभो॥ भगवान्॥ धर्म्य एषतव
प्रश्नोनैःश्रेयसकरोनृणां॥ वर्णाश्रमाचारवतांतमुद्धवनिबोधमे॥ आदौकृतयु
गेवर्णोनृणांहंसइतिस्मृतः॥ कृतकृत्याःप्रजाजात्यातस्मात्कृतयुगंविदुः॥ वेदः

टिराः॥ तेजः श्रीः कीर्त्तिरैश्वर्य्यं ह्रीस्त्यागः सौभगं भगः॥ वीर्य्यं तितिक्षा विज्ञानं यत्र यत्र स में
शकः॥ एतास्ते कीर्त्तितास्सर्वाः संक्षेपेण विभूतयः॥ मनोविकारा एवैते यथा वाचाभिधीयते॥ वाच
यच्छ मनो यच्छ प्राणाँ यच्छेंद्रियाणि च आत्मानमात्मना यच्छ न भूयः कल्पसेध्वने॥ यो
वै वाङ्मनसी संम्यङ्गसं यच्छंद्धिया यतिः॥ तस्य व्रतं तपो दानं स्रवत्यामघटाम्बुव
त्॥ तस्मान्मनो वचः प्राणान्नियच्छेन्मत्परायणः॥ मद्भक्तियुक्तया भक्त्या
कृच्छ्रा ततः परिसमाप्यते॥ इति श्रीभागवते एका दश स्कन्धे षोडशोध्यायः
ॐ॥ उद्धवः॥ यस्त्वयाभिहितः पूर्वं धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः॥ वर्णाश्रमाचारवतां सर्वेषां द्विपदा
मपि॥ यथानुष्ठीयमानेन त्वयि भक्तिर्नृणां भवेत्॥ स्वधर्मेणारविंदाक्ष तन्ममाख्यातु

रा॥ वि रवा व सुः प्र वि चित्ति गन्धवी प्सरसा महं॥ भू धरा णा महं स्पै र्य गन्ध माच महं भु
कः॥ अपां रसस्च परमस्नेजिष्णां नां विभाव सुः॥ प्रभास्व र्य भु तारा णां शशौ हं नभसः परः॥
ठं हं लया नां बलिर ॥ हं वी सणा महं मउं नः॥ भू ता नां स्थिति रुत्पत्ति रहं वै प्रति
संक्रमः॥ गत्यु तु स्मर्गौ पा ढा न मा नन्द स्वरी दरी नैं। आ रवा द रनु त्य वज्राणा
महं सर्वेन्द्रि येन्द्रियं। पृथिवी वायु राकाश मापो ज्योति रहम्म हान्॥ विकारः पु
रुषो व्यक्तो र च सात्व को मः परं॥ अहमे तत्प्र संख्या नं ज्ञानं तत्त्व विनिश्चयः॥ म
पेरवरे (तजी) देन रण ऐन रण णा ना विना॥ स दीम नापि सर्वे णा न मा वो विद्यते क्व चित्॥
सरपानें परमा णू नां का ने नक्रिया ते मया॥ न तया मे विभू ती नां स्ट ज तो ण्डा जि वो

नारायणो मुनीनां च कुमारो ब्रह्मचारिणां ॥ धर्म्माणामस्मि सन्यासः क्षेमाणामबहिर्म्मतिः ॥
गुह्यानां सूनृतं म्मौनं म्मिथुनानां पुमानहं ॥ संवत्सरोस्म्यनिमिषां ऋतूनां म्मधुमाधवौ ॥
मासानां म्मार्गशीर्षो हं नक्षत्राणां तथाभिजित् ॥ अहं युगानां चतुरं धीराणां देव
लोसितः ॥ द्वैपायनो स्मि व्यासानां कवीनां काव्य आत्मवान् ॥ वासुदेवो भग
वतां त्वं तु भागवते ष्वहं ॥ किंपुरुषाणां हनुमान् विद्याध्राणां सुदर्शनः ॥
रत्नानां पद्मरागो स्मि पद्मकोशस्तु पेशसां ॥ कुशोस्मि दर्भजातीनां गव्यमाज्यं ह
विष्वहं ॥ व्यवसायिनामहं लक्ष्मीः कितवानां छलग्रहः ॥ तितिक्षास्मि तितिक्षूणां सत्वं सत्व
वतामहं ॥ ओजः सहो बलवतां कर्म्महं विद्धि सात्वतां ॥ सात्वतां नवमूर्तीनामादिमूर्त्तिरहं प

चै स वास्क रं गा णाँ धा तु ना म स्मि का च्च नं।। प म सं य म ता श्चा हं स र्पा णा म स्मि वा सु किः।। ना
गे न्द्रा णा म न भो ह म्मृः गे न्द्र स्तं गि दं ष्ट्रि णाँ।। अ्रा स मा णा म ह ऋ प्याँ व णाँ नां प्र प मो न ब ती र्था
नौ स्रो त सां गं गा स मु द्र स्म स्मै र सा म हं।। श्रा यु धा ना न्व नु र हं ब्रि पु र श्रो ध नु ष्मा तां।
गि री णा म स्म्य ह म्मे रु र्गि ह ना नां हि मा ल यः।। व न स्प ती ना म ख त्थ श्री प्र धी
ना म ह न्य वः।। पु रो ध सां व सि ष्ठो हं ब्र ह्म षा नां बृ ह स्प तिः।। स्क न्दो हं स
र्व से ना न्या म न्त्र र्ष यां भ गु वा न जः।। य ज्ञा नां ब्र ह्म य ज्ञो हं ब्र ता ना म वि हिं स नं।। वा सु
2) द स कीं बु वा गा त्मा रु ची ना म य्य हं रु चिः।। यो गा ना मा त्म सं रो धो मं श्रो स्मि वि जि गी षु तां।।
श्रा वी कि की वी रा ला नां वि क ल्पो र व्या ति वा दि नां।। स्त्री णां कु रा तत्त्व पा हं पु सां खा यं भु वो मनुः

णानामप्यहं साम्यं गुणिन्यौत्पत्तिको गुणः॥ गुणिनामप्यहं सूत्रं महतां च महानहं॥
सूक्ष्माणामप्यहं जीवो दुर्जयानामहं मनः॥ हिरण्यगर्भो वेदानां प्रणवस्त्रिवृत्॥
अक्षराणामकारोस्मि पदानि छंदसामहं॥ इंद्रोहं सर्वदेवानां वसूनामस्मि हव्यवाट्॥
आदित्यानामहं वि ष्णू रुद्राणां नीललोहितः॥ ब्रह्म र्षीणां भृगुरहं राज
र्षीणामहम्मनुः॥ देवर्षीणां नारदोहं हविर्धान्यस्मि धेनुषु॥ सिद्धेश्वराणां
कपिलः सुपर्णोहं पतत्रिणां प्रजापतीनां दक्षोहं पितॄणामहमर्यमा॥ मांवि
द्ध्युद्धव दैत्यानां प्रह्लादमसुरेश्वरं॥ सोमं नक्षत्रौषधीनां धनेशं यक्षरक्षसां॥ ऐराव
तं गजेंद्राणां यादसां वरुणं प्रभुं॥ तपतां द्युमतां सूर्यं मनुष्याणां च भूपतिं॥ ३

डपासिनाः प्रपद्यते सं सिद्धिं तद्दस्व मे॥ अढस्वर सिभूते षुभूता भाभूतभावनः
नवीपरयक्लिश ता निपरयत्सम्मोहितानि ते॥ यः का स्वभू मोदितिवार सायांविभूतयो दक्षम
हाविभूतेः॥ ताम ब्रूमारख्या ह्यनुभाविता स्तेन माभितेती र्थिप दोंब्रिपस्मं॥ म
गुवाच॥ ततमेक म ठपृषृः प्रत्नं प्रस्नविदों कर॥ यु पुरुनाविनराने साप
नैरजुं ने नवे॥ ज्ञा वा ज्ञातिक धं गर्ही मधर्मि रा अहेउ कं॥ ततो निवृत्ता
ठमाठठतों ठमिति लौकिकः॥ सततदा पुरुषव्याघोयुतया मे प्रतिबोधितः॥ अन्यभा
षतमाभेवं यपावंरणामद्धेनि॥ अठमात्मो ह्व वा मी षां भूतानां सुहृदीश्वरः॥ अहं सर्वा
णा भूतानि ते षांस्थित्यतभवाप्ययः॥ अहं गतिर्गतिमतां कालः कलयतामहं॥ ७५

याबदब्येताक्नुज्ञतोयोगमुत्तमें॥ मयासंपद्यमानस्यकालकपएहेतवः॥ नभो
षतितःपोमनैपीवतीरिडसिद्धय॥ योगेनाप्नोतितासर्वाःनाम्योगवातिउजेन॥
सदीसामपिसिद्धी नाउडःपतिरहप्रभुः॥ अहं योगस्यसौरव्यस्यधर्मस्य
बह्मणाकिनां॥ब्रह्म मामाक्षरोबाह्योनावृतस्सर्व देहिनां॥ यथाक्षताभि
भूतेषुबहिरन्त स्वर्छसे या॥ कुर्वन्तिपकादर स्कंधेपञ्चाकरोध्यापः
कुडकुवः॥ तेब त्वंपरमंयोमसाआदनाद्यक्षमनादृतां॥ सर्वपामपिभूता
नांप्राणास्थित्ययायोत्रभवः॥ उद्यावचेषुभूतेषुदुर्जयमकृतात्मभिः॥ उपासतां
भगवव्यायातध्येनबात्मणाः॥ येषुयेषुचभावेषुस्यातांपरमर्षयः

कत्स येत्र बुद्धायप्या वामत्पं रः पुमान्॥ मधि सत्ये मनो यं अं स्त्र पा त त्ताम्र पाऽस्तु॥
यो वै मत्र भाव मा पद्माईश्वि तुर्वरि तुः पुमान्॥ न कुत्र स्वन ठन्ये त त स्य चाज्ञायया
मन॥ मत्ते त्या रउ ढु स त्व स्य योगिनो धा र णावि दः॥ तस्य नैकालिकी बुद्धि
श्री अमृत्यु पवृहि ता 'अभ्या (किमि न्न ठ न्ये त म्र ने येगि ग म यं व पुः॥ मद्यो
त गद्या भेदि तस्य पा द साम्र द कै र्यं या॥ मद्भिभूती रं भि ध्या यन स्य वस्ता
ह स्त विश्वविताः॥ ध्रु जात प त्र व्यं ज ने स्म भ वे द प रा जि तः॥ उ पा स क स्य मा
10 मे वं योग धा र ण या मुनेः॥ सिद्ध यः सर्व कथि ता ऽपति षु स्पर्श षं तः॥ चि ते द्रि य स्य
दा न्त स्य वि त्त ख्या सा म नो मुनेः॥ मद्धा र णा व्या र य तः का नु सि द्धि स्तु द र्ल भा॥ क्र त रा

हितो मरः॥ स्य प्याश्चा शात्मनि प्राणे मनसा वो ष मुद्ध हन॥ तचो प लक्ष्म भ्र ताना हंसोश्च
च स्थूलोत्पत्तौ॥ च द्ध स्व प्रेरि सं यो ज्य ल प्र रमपि च द्धुषि॥ मासज मनसा ध्यायवं विसं
पश्यति सुक्ष्म दृ ष्टि॥ म नो म पि सुसी यो ज्य देहहृत्त द नु वा यु ना॥ मद्धारणा
नु भा वे न तत्रा मा यु ज वै मनः॥ पदा मन उ पा दाय यद्यद् पि बुध्य षति॥
त त्तग वे भ. नो रू पं म्म द्यो ग ब न मा श्रितः॥ पर का पंवि रा वरो द्धे त्वामा
न क ज भा व ये त्॥ पि एंडहि त्वावि रात प्रा णो वा युभ्र त ष्य डं ब्रि व त्॥ पा र्था पी झ्रवण
दं प्रा णं हृ द्रु रः क णे मूर्द्ध सु॥ श्रारो प्यबुत्म रंध्रे णा ब्रह्म नी त्वोत्सृ जे त नुं॥ वि हरि ष्यन्सु
रा क्री डे मत्स्थ स त्वं विभा व येत्॥ वि मा ने नोपति ष्ठ ति सा त्व वृत्तिं सु र स्त्रि पः॥ यया सं

ोति स्थ ता नां स्व पृ पक्ष पृ थक। प र मा णु म ये चि तं भू ता त्म न्य पि र ञ्ज ये त्॥ का ल सू क्ष्मा त्म को
यो गी ल घि मा न म वा प्नु या त्॥ धा र य न्म ध्य ठ को वै म नो वै का रि के खि लं॥ स वै द्धि या प्ना मा
मं त्वं प्राप्ति प्राप्नोति म ब्ध नाः॥ म ह त्या त्म नि य स्तु चे धा र य न्म यि मा न से॥ प्रा का म्यं
पा र मे ष्ठ न्म विन्दते य ता ज न्म नः॥ वि श्वो अ धी स्व रे वि त न्धा र य न्ब का
नं वि ग्र हे॥ स ई शि त्व म वा प्नोति दे वे भ्यो न च ये द ना तः॥ ना रा य णो ऽ त रा
यां स्वे भ गा क क्ष रा श्रि ते॥ म नो म य्या द ध द्यो गी म द्द न्मी व शि ता मि या त्॥
नि र्गु णे ब्र ह्म णि म पि धा र य न्वि श द न्म नः॥ प र मा न न्द मा प्नोति य त्र का मो व सा
य तो॥ स्वे ता द्वी प प तौ चि त्तं रु द्ध च न्मि म यें म यि॥ धा र य न्के त तां या ति ष ड ू र्मि र

तं पः ॥ अणिमा महिमा मूर्त्तैर्लघिमा प्राप्तिरिद्रियैः ॥ प्राकाम्यं श्रुतदृष्टेषु शक्तिप्रेरणमी
शिता ॥ ४ ॥ गुणेष्वसंगो वशिता यत्कामस्तदवस्यति ॥ एता मे सिद्धयः सौम्य अष्टावौत्पत्तिका
मताः ॥ अनूर्मिमत्त्वं देहेस्मिन्दूरश्रवणदर्शनं ॥ मनोजवः कामरूपं परका
यप्रवेशनं ॥ स्वछन्दमृत्युर्देवानां सहक्रीडानुदर्शनं ॥ यथासंकल्पसंसि
द्धिराज्ञाप्रतिहता गतिः ॥ त्रिकालज्ञत्वमद्वन्द्वं परचित्ताद्यभिज्ञता ॥ अग्न्यर्क
म्बुविषादीनां प्रतिस्तंभोपराजयः ॥ एताश्चोद्देशतः प्रोक्ता योगधारणसिद्धयः
यया धारणया या स्याद्यथा वा स्यान्निबोध मे ॥ भूतसूक्ष्मात्मनि मयि तन्मात्रं धारयेन्मनः ॥ अणिमान
मवाप्नोति तन्मात्रोपासको मम ॥ महत्यात्मन्मयि परे यथासंस्थं मनो दधत् ॥ महिमानमवा

सुस्मितं भावयेन्मुखं॥ तत्र लब्धपदं चित्तमाकृष्य व्योम्नि धारयेत्॥ तच्च त्यक्त्वा मदारोहो न किं-
चिदपि चिंतयेत॥ एवं समाहितमतिर्म्मामेवात्मानमात्मनि॥ विचष्टे मयि सर्वात्मन् ज्योति-
र्ज्योतिषि संयुतं॥ ध्या नेनेत्थं सुतीव्रेण युंजतो योगिनो मनः॥ संयात्यत्याशु निर्वा-
त णं द्रव्यज्ञानक्रिया भ्रमः॥ ॥ इति श्रीभागवते महा पुराणे एकादशस्कं-
फु धे चतुर्दशोध्यायः ॥ श्रीभगवानुवाच॥ जितेंद्रियस्य युक्त स्य जितश्वासस्य योगि-
नः॥ मयि धारयतश्चे तस उपतिष्ठंति सिद्धयः॥ उद्धवः॥ कया धारणा
या कास्वित्कथं वा सिद्धिरच्युत॥ कति वा सिद्धयो ब्रूहि योगिनां सिद्धिदो भवान्॥ भगवान्॥
सिद्धयोष्टादश प्रोक्ता धारणा योगपारगैः॥ तासामष्टौ मत्प्रधाना दशैव गुणहे

मुन्निद्रमष्टपत्रं सकर्णिकं॥ कर्णिकायान्यसेत्सूर्यसोमाग्नीनुत्तरोत्तरं॥ वह्निमध्ये स्मरे
द्रूपं ममैतद्ध्यानमंगलं॥ समं प्रशांतं सुमुखं दीर्घबाहुं चारुचतुर्भुजं॥ सुचारुसुन्दरग्री
वं सुकपोलं शुचिस्मि तं॥ समानकर्णविन्यस्तस्फुरन्मकरकुंडलं॥ हेमांबरं घन
ामं श्रीवत्सश्री निकेतनं॥ शंखचक्रगदापद्म वनमालाविभूषितं॥ नू
पुरैर्विलसत्पादं कौस्तुभप्रभयायुतं॥ द्युमत्किरीट कटककटिसूत्रांग
दायुतं॥ सर्वांगसु दरं हृद्यं प्रसादसुमुखेक्षणं॥ सुकुमारमभिध्यायेत्स
र्वांगेषु मनो दधत्॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेभ्यो मनसाकृष्य तन्मनः॥ बुद्ध्या सारथिना धीरः
प्रणयेन्मयि सर्वतः॥ तत्सर्वव्यापकं चित्तमाकृष्यैकत्र धारयेत्॥ नान्यानि चिंतयेद्भूय

सीनश्चिंतयेन्मामतन्द्रितः॥ नतथास्य भवेत्क्लेशो बन्धस्यान्यप्रसंगतः॥ योषित्संगाद्यथा पुं

सो यथा तत्संगिसंगतः॥ ५ दृढः॥ यथा त्वामरविंदाक्ष यादृशं वा यदात्मकं॥ ध्यायेन्मुमु

क्षुरेतन्मे ध्यानं वं   र्वक्तुमर्हसि॥ भगवान्॥ सम आसन आसीनस्समका

यथासुखं॥ ह   स्तावुत्संग आधाय स्वनासाग्र   कृतेक्षणः॥ प्राणस्य

शोधयेन्मार्गं कुंभ   पूरकरेचकैः॥ विपर्ययेणा   पि शनैरभ्यसेन्निर्जितें

द्रियः॥ हृद्यविछिन्न   मोंकारं घण्टानादं विसोर्णवत्॥ प्राणेनोदीर्य तत्राथ पुनस्सं

वेशयेत्स्वरं॥ एवं प्रणवसंयुक्तं प्राणमेव समभ्यसेत्॥ दशकृत्वस्त्रिषवणं मासा

दर्वाग्जितानिलः॥ हृत्पुण्डरीकमन्तस्थमूर्द्ध्वनालमधोमुखं॥ ध्यात्वोर्द्ध्वमुख

रा ग्ग त्व ग दा द्व व ते य स्पचि तं ठ स त्य श्री दणं स्व द ति क्वा वि ह्य॥ वि लज उ त गा या ति नृ त्य
ते च म त भ ति य तो भु व नं प ना सि॥ य पाम्नि ना हे म म ल ज्ञ हा ति ध्या तं पु न स्वं भ ब ते चल
णं॥ त्वा मा च क र्मा नु च यें वि घ्नू य म त भ क्ति यो गे न भ ज त्य पो मां॥ प या य या म्ना प
हृज्य ते सौ मु त पु ा प गा या त्य व णा भि धा नैः॥ त या त पा प स्य ति त ब त ह्म चक्षु
ये वां ज्ञ न सं प्र यु क्तैः॥ वि ष या न्ध्या य त स्वि त्तं वि ष ये षु वि ष ज ते॥ मा मे नु स्मर
ा स्व त म्म प्य व प्र वि ली य ते॥ त स्मा द स द भि ध्या नं य या स्व प्र भ णा र पें॥ हि त्वा म यि स
मा ध स्व म नो म भा व भा वि तं॥ स्त्री णां भ त सौ गि नां सं गं त्य क्त्वा दू र त श्चा म वा न॥ दे म वि वि व ता म्मा

येयेत्यंघ्रिरेणुभिः॥ निष्किञ्चना मय्यनुरक्तचित्ताः शान्ता महान्तोखिलजीववत्सलाः॥ कामैरनाल
ब्धधियो जुषन्ति ते नैरपेक्ष्याद्धि विदुः सुखं मम॥ बाध्यमानोपि मद्भक्तो विषयैरजितेन्द्रियः॥ प्र
गल्भया हि भक्त्या विषयैर्नाभिभूयते॥ यथाग्निः सुसमिद्धार्चिः करोत्येधांसि भस्मसा
त्॥ तथा मद्विषया भक्तिरुद्धवैनांसि कृत्स्नशः॥ न साधयति मां योगो न सां
ख्यं धर्म उद्धव॥ न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता॥ भक्त्याहमेक
या ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सतां॥ भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि संभवात्॥ धर्मस
(७) त्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता॥ मद्भक्त्यापेतमात्मानं न सम्यक्प्रपुनाति हि॥ कथं
विना रोमहर्षं द्रवता चेतसा विना॥ विनानन्दाश्रुकलया शुध्येद्भक्त्या विनाशयः॥

यथा रुचि॥ धर्म्ममेके यशश्चान्ये कामं सत्यं दमं शमं॥ अन्ये वदन्ति स्वार्थं वै ऐश्वर्यं त्याग
भोजनं॥ केचिद्यज्ञं तपो दानं व्रतानि नियमान्यमान्॥ आद्यन्तवन्त एवैषां लोकाः कर्म्मवि
निर्म्मिताः॥ दुःखोदर्कास्तमोनिष्ठा क्षुद्रानन्दाः शुचार्पिताः॥ मय्यर्पितात्मनः सभ्य निर
पेक्षस्य सर्वतः॥ मयात्मना सुखं यत्तत् कुतः स्याद्विषयात्मनां॥ अकिञ्चन
स्य दान्तस्य शान्तस्य समचेतसः॥ मया सन्तुष्टमनसः सर्वाः सुखमया दिशः॥
न पारमेष्ठ्यं न महेन्द्रधिष्ण्यं न सार्वभौमं न रसाधिपत्यं॥ न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा
मय्यर्पितात्मेच्छति मद्विनान्यत्॥ न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शंकरः॥ न च संकर्षणो न श्रीर्नै
वात्मा च यथा भवान्॥ निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनं॥ अनुव्रजाम्यहं नित्यं पू

कः॥ निरस्य सर्व तत्सं गं येन त्वया वृ तोन्म नः॥ भगवान्॥ कालेन नष्टप्रज्ञयेवाणीयं वे
दं सं शितां॥ भया दो ब छ ह्म णो पो ताध र्मीय स्या म्म दोम कः॥ ते न पोता च पुत्रा य म नवे प्र त्र
ताय सा॥ त तो ऽ हब्वा द यो ऽष्ट ह्व स प्त ब्र ह्म म हर्षयः॥ ते भ्या मु निभ्य स्तत्पु त्रा देवेदा
नाग ऽ ह्य काः॥ मनु ष्या स्सिद्ध गन्धर्वा स्सवि द्या धर चा र णाः॥ कि न्दे वाः किन्न
रा नागा र क्षः किंपु रु षा द यः॥ ब ह्व्य स्ते षां प्र कृतयो र जस्स त्व त मो भु वः॥ य
याभि र्भू ता नि भि द्यन्ते भू ता ना म्मत यस्त था॥ यथा प्रकृति सर्वेषां चित्रा वाचः स्र वन्ति
हि॥ ए वं प्र कृति वै चित्र्या द्भि द्यन्ते मतयो नृ णाम्॥ पार म्प र्ये णा के षां चित्पा ष ण्ड मतयो
परे॥ मन्माया मोहि तधियः पुरुषाः पुरुषर्षभ॥ श्रेयो वदन्त्य नेका न्तं यथा कर्म

करतः ॥ मयैतदुक्तं वोविप्राग्ह्यं यत्साक्षात्योगपोः ॥ जानीत मा गतं यबंयु ष्मद्‌द्धमीतिवद
या ॥ मह्‌ं योगस्य सौख्यस्यसस्यस्य तैरयते जसः ॥ पसय यांद्दुज स्रे ष्ठः यि यः कीर्तेंद्र्ंम
स्य च ॥ मां भ जं स्ति ग्ड णा स्स तें नि ग्ड णा भि रपे दां कं ॥ सल दं प्रि यमा भानं सा
मवाम्या सं गा द या ग्ड णा ॥ इति तेछि न स दैह मु नय स्स न कादयः
स णा बं थ ना प रया भ त्या ट ता न सं स्त वैः ॥ तेर हं पूजि ता स्स म्य क्सं स्तुतः
गरमरम प भिः प्रु तीया य स्व कन्बोमपस्यतः पर मेष्ठि नः ॥ इति श्रीभाग
वते ए का दशस्कन्धे त्रयो दशो ध्या यः ॥ उद्धवः ॥ वदन्ति कृष्ण श्रेयांसि बहूनि ब्रह्मवा
दिनः ॥ तेषां विकत्प प्राधान्य मुताहो एक मुख्यता ॥ भवतो दाहृतः स्वामि न्भक्ति योगो न पेक्ष

न स दु ता ती का ।। जा ना सि ना भ ज त मा खि न सै श या र्थि ।। ई दे त वि भ्र म मि द म्न न सो वि ला
सं दृ र्ध्व व न षु मति ले न म ला त च कं ।। षि जा ने मे क मु रू धौ व बि भा ति मा पा स्व ने य था गु ता
छि वि स र्वा कृ तो वि ना प ।। हृ च्छि न्न तः प्र ति नि व र्त्य नि वृ त्त र ष्ट्वा स स्फु सं न वे भि ज
ग ख्या स्वा नु म वे नि रो ह ।। स हृ स्य ते बा च य दी द म वे स्ता बु द्ध्या त्य तो श्र मा य न भ
वे ता स्व ति स वि वा ता तू दे ह भु न स्व र म व स्थि ता मु कि त वा सि द्धो न प स्य
m ति य तो ह्य ग म त्स्व रू पं दे वा कु पे त म य दै व व श्या दे पे तं वा सो य था प रि
कृ त म्म दि रा म दा न्धुः ।। दे हो हि दै व व सा नाः स्व न्तु क र्म्मि या व त्स्व रं भ वं प्र ति स मी
दा त रा व सा धुः ।। ता सं प्र पं च म धि रू ढ स मा धि यो ग स्वा न्न पु न र्न भ ज ते प्र ति बु द्ध

मि स्वलक्षणो बुद्धिवृत्तयः॥ तासां विलक्षणो जीवः साक्षित्वेन विनिश्चितः॥ यद्विसंस्थिति बन्धो पमाम
नोण इति तः॥ अपि तु प्रथ्यौस्व तो जह्वा या मे स्त ह्न गुणा चेतसां॥ अथ हंकारकृतं बन्धं मामनो यिधि
प र्यपं॥ वि द्वा क्षि विंडु संसार चिन्ता कुर्या र्थि तिं त्य जे हं॥ याव ज्ञाना र्थि धीः पुंसो नाव
व नैत युक्तिभिः॥ जा ग्रत्य पि स्व प्न ज स्व प्ने जागरणी यथा॥ अस स त्रा दा म नो
व्ये पी गा वा नीकि क्ष ता निद्रा॥ ग त यो हे त व स्या स्य म्ह बा स्व मनृ हशो य था॥ यो
जा ग रे बहि र नु द्ध ग्रा ध र्मि णो र्थी व भुं क्तो स म स्ख क र णो द्दि त स हृ दा
न॥ स्व प्ने य स्ख तउ प सं ह रं त स त एक स्मत्य क्ष या नि ण एा हृत्ति दृ शि द्धि ये सः॥ ए वं वि मृत्य
णो मनसस्तं व स्था म ज्ञा य या म यि कृ ता इ ति निश्चिता त्थाः॥ सं त्रि य हा दृ मनु मा

पपद्युतकर्म्मधीः॥ समामचिंत्तयद्वेवः प्रज्ञवारतितीर्षया॥ तस्याहुँ हुँ सरूपेण सकाशमगम
द्भदा॥ दृष्ट्वामात्रउपव्रज्यकृत्वापादाभिवंदनं॥ ब्रह्मणामगतः कृत्वापप्रछः कोभवानिति॥ इत्यहमु
विभिःपृष्टस्तत्वजिज्ञा — सुभिस्तदा॥ यदेवोवम्हतत्सेभ्यस्तदुक्तं निबोधमे॥ वस्तुनोयदि
ल ट नोनात्वमात्मनःप्रश्न — ईदृशः॥ कथंघटेतवोविप्रावक्तु — र्वामेकआश्रयः॥ पञ्चा
त्मकेषुभूतेषुसमाने — षुचवस्तुतः॥ कोभवानितिवःप्रश्नो — वाचारंभोनिरर्थकः॥ म
नसावचसादृष्ट्याग्रह्य — तेन्यैरपीन्द्रियैः॥ अहमेवनमत्तो — न्यदितिबुध्यध्वमञ्जसा
गुणेष्वाविशतेचेतोगुणाश्चेतसिवःप्रजाः॥ जीवस्यदेहउभयंगुणाश्चेतोमदात्मनः॥ गुणेष्वावि
शतोचित्तमभीक्ष्णंगुणसेवया॥ गुणाश्चचित्तप्रभवामद्रूपउभयंत्यजेत्॥ जाग्रत्स्वप्नसुषु

भ ये ह ते॥ त्या ग मो क्षः प्र जा दे राः का लः क र्म्म च ज न्म च॥ ध्या न म्म वा ष
मे रक्ता रो ह रो तो गु णा हे त वः॥ त त्त्सा वि क्ता मे वे षा य घ हु द्धाः प च क्ता ते॥ नि द्रि ता म सं य त द्वा ग रा
७ त्त ह प द्वि तं॥ ता वि का ये व सो वे त पु मा न्र स त्व वि वृ द्ध ये॥ त तो शा ने ध र्म्म ज्ञ तो भा न या व त स्व
ति र पो ह नं॥ वे ग स व र्ष जो व द्धि ह्ग द्धा शा म्यं ति त दू नं॥ ए वं गु णा व्य त्य य जो वे द
त स्या न्य ति त त्र दा ये॥ उ द्ध व॥ वि द्द क्षि म त्पीः प्रा ये ण वि व पा त्र प दृ मा प दां॥ त था
प पि भु ज ते दा ञा त ञ क थं स्व र स्व रा ज क त्र॥ भ ग वा न्न॥ त्र ह मि त्य न्य था बु द्धिः
प्र म त स्य य दा ह दि॥ उ त्स र्प ति र जो वो र म तो दै का रि क म्म नः॥ र जो यु क्त स्य म न सः सं क
७ न स त वि क ल्प कः॥ त तः का मो गु णा ध्या ना द्दु स्स ह स्या द्धि दु र्म्म ते ः॥ क रो ति का म व दा गः क

म्नाएयविधितेन्द्रियः॥ इखेदकीणि संपरयन्तं दुजो वेग विमोहितः॥ रजस्तमोभ्यां यदपि विद्वा
नविक्षिप्तधीः पुनः॥ अतन्द्रितो मनो युंजन्दोषदृष्टिर्न सज्जते॥ अप्रमत्तोनुयुंजीत मनो
मय्यर्पयच्छनैः॥ अ निर्विण्णो यथाकालं जितश्वासो जितासनः॥ एतावान्योग आदि
ष्टो मच्छिष्यैः सनकादि भिः॥ सर्वतो मन आकृष्य मय्यद्धा वेश्यते यथा॥ उद्धवः॥
यदा त्वं सनकादिभ्यो ये न रूपेण केशव॥ योगमादिष्टवा नेतद्रूपमिच्छामि वेदि
तुं॥ भगवान्॥ पुत्राहिर ण्यगर्भस्य मानसाः सनकादयः॥ पप्रच्छुः पितरं सूक्ष्मां योगस्यैका
न्तिकीं गतिं॥ गुणेष्वाविशते चेतो गुणाश्चेतसि च प्रभो॥ कथमन्योन्यसंत्यागो मुमुक्षोरतितीर्षोः॥
भगवान्॥ एवं पृष्टो महादेवः स्वयंभूर्भूतभावनः॥ ध्यायमानः प्रश्नबीजं ना

तारतरुः फलाणः कल्पीमकः पुष्पफले प्रसूते॥ दुग्धस्य बीजे रात मूलस्त्रिनालः पञ्चस्कन्धः पञ्चरसा
प्रसूतिः॥ दृशैकशाखाद्विसूपर्णी नीडस्थिः बकुलो द्विफलः सर्वप्रविष्टः॥ अदति वैकं फलम मस्याटधा
ग्रामे चराएकमरएय चाराः॥ हंसमयएकं वर्द्धरूपसंज्ञम्मा यामयं वेद सर्वे देवदं
एवं ब्रह्मपासनपो रुम्भ न्नाशिघाकुठारेण सितेन धीराः॥ प्रबुद्धस्य चौ
वाराय मप्रमत्तस्यैप द्वीचामानमयत्य जासर्वं॥ ॥ एकादशरास्कन्धे द्वादशो
ध्यायः॥ ॥ श्रीभगवानुवाच॥ सत्वं रजस्तम इति गुणा बुद्धेर्न चात्मनः॥ सत्वेनान्यतमौ ह
न्यात् सत्वं सत्वेन चैव हि॥ सत्वाद्धर्मो भवेत् वृद्धात्पुंसो मद्भक्तिलक्षणः॥ सात्विकोपास्तया सत्वं
ततो धर्मः प्रवर्तते॥ धर्मो रजस्तमो हन्यात् सत्ववृद्धिरनुत्तमः॥ आशु नश्यति तन्मूलो ह्यधर्म उ

तामेवंशरणमामात्मानंसर्वदेहिनां॥ याहिसर्वात्मभावेन थपयास्यादकतोमं यं॥ उद्धवः॥ संशय
श्छतोवाचक्षनयोगेश्वरेश्वर॥ ननिवर्तेत आत्मस्थो येनभ्राम्यतिमेमनः॥ श्रीभगवानुवाच॥ सत्वष
जीवोविवरप्रसूतिः प्राणेनघोषेणगुहांप्रविष्टः॥ मनोमयंसूक्ष्ममुपेत्यरूपमात्रा
स्वरोवर्णइतिस्थविष्ठः॥ यथानिलः खेनिनबन्धुरूष्मा बलेनदारुण्यतिमथ्य
मानेत्र॥ अणुःप्रजातो हविषासमिध्यते तथैवमेव्यक्तिरियंहिवाणी॥ एवं गदिःक्रि
रतिर्विसर्गोद्गारोरसो दृश्वपरीस्रुतिस्पर्शः॥ संकल्पविज्ञानमथाभिमानःसूत्रंरजःसत्वतमोवि
कारः॥ अयंहिजीवस्त्रिवृदब्जयोनिरव्यक्तएकोवयसासआद्यः॥ विश्लिष्टशक्तिर्बहुधेवभातिबीजानि
योनिंप्रतिपद्ययद्वत॥ यस्मिन्निदंप्रोतमशेषमोतंपटोयथातन्तुवितानसंस्थः॥ संसारसं

मत्तंगा॰मा मुपागताः॥ केवल्ने नहि भावेन गोप्योगावो मृगाः स्वगाः॥ येन्ये मूढधि योनागास्तद्ध
मामीयुरं जसा॥ यन्न योगेन सांख्येन दानब्रततपो द्ध रैः॥ व्याख्यास्वाध्याय सन्यासैः प्राप्नुयाद्य
त्नं॰वानपि॥ रामे णासा र्द्धं मधुरां प्रणीते स्वावतरकिं नाम ययुष्पत्कोविताः॥ विगाहं भावेन
न मे क्षियोग स्त्रीबाधयो न्यद्दद्रष्टस्तुत्वाय॥ पासौद्म पाः प्रेष्ठ तमेन नीतामयैवष्टद्धा
वनगोचरे त॥ क्षणार्द्ध वत्ताः पुनरंगतासौ हीनम्मयाकात्प समाबभूवुः॥ तानाव द
न्मय्यनुषंगबंन्धधि यस्व मामा नमदस्तु येदं॥ यथा समाधौ मुनयोब्धितोये नद्यः प्रविष्टा
इव नामरूपे॥ मत्तकामा रमणं जारम्मत स्वरूपाविदोबलाः॥ ब्रह्म मां परमं प्रापुस्संगाक्तात्स ह
स्त्रशः॥ तस्मात्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनां प्रतिचोदनां॥ प्रवृत्तंच निवृत्तंच श्रोतव्यं श्रुतमेव च॥ मा मे

ं गुह्यं स्त्रण्वतो यदुनन्दन ॥ सुगोप्यमपि वक्ष्यामि त्वम्मे भृत्य सुहृद सखा ॥ ॐ इति श्रीभागवते एकाद
शस्कन्धे एकादशोध्यायः ॥ श्रीभगवान् ॥ न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म एव च ॥ न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो
नेष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥ व्रतानि यानि छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः ॥ यथावरुन्धे सत्संग सर्वसं
गापहोहि मां ॥ सत्संगेन दैतेया यातुधाना मृगाः खगाः ॥ गंधर्वाप्सरसो नागा सिद्धा
श्चारणगुह्यकाः ॥ विद्याधरा मनुष्येषु वैश्या शूद्रा स्त्रियोन्त्यजाः ॥ रजस्तमः प्रकृतयस्त
स्मिंस्तस्मिन्युगे नघ ॥ बहवो मत्पदं प्राप्तास्त्वाष्ट्रकायाधवादयः ॥ वृषपर्वा बलिर्बाणो
मयश्चाथ विभीषणः ॥ सुग्रीवो हनुमानृक्षो गजो गृध्रो वणिक्पथः ॥ व्याधः कुब्जा व्रजे गो
प्यो यज्ञपत्न्यस्तथापरे ॥ ते नाधीतश्रुतिगणा नोपासीतमहत्तमाः ॥ अव्रतातप्ततपसो

पुंज्यानि वेदितां॥ यद्यदिष्टतमं लोके यच्चातिप्रियमात्मनः॥ तत्तन्निवेदयन्मह्यं तदानंत्याय क
ल्पते॥ सूर्योऽग्निर्ब्राह्मणा गावो वैष्णवः खम्मरुज्जलं॥ भूरात्मा सर्वभूतानि भद्र पूजापदानि मे॥ सूर्ये
तु विद्यया त्रय्या हविषाग्नौ यजेत मां॥ आतिथ्येन तु विप्राग्र्ये गोष्वंग यवसादिना॥ वैष्णवे
बन्धुसत्कृत्या हृदि खे ध्याननिष्ठया॥ वायौ मुख्यधिया तोये द्रव्यैस्तोयपुरस्कृतैः॥
स्थण्डिले मंत्रहृदयैर्भोगैरात्मानमात्मनि॥ क्षेत्रज्ञं सर्वभूतेषु समत्वेन यजेत
मां॥ धिष्ण्येष्वेतेषु मद्रूपं शंखचक्रगदाम्बुजैः॥ युक्तं चतुर्भुजं शान्तं ध्यायन्नर्चेत्समाहितः॥
इष्टापूर्तेन मामेवं यो यजेत समाहितः॥ लभते मयि सद्भक्तिं मत्स्मृतिं साधुसेवया॥ प्रायेण
भक्तियोगेन सत्संगेन विनोद्धव॥ नोपायो विद्यते सध्र्यञ्च प्रायेणाहि सतामहं॥ अथैतत्पर

त्वा ज्ञात्वा च ये वै मां यावद्यश्चास्मि यादृशः॥ भजंत्यनन्यभावेन ते मे भक्ततमा मताः॥ म
ल्लिंगमद्भक्तजनदर्शनस्पर्शनार्चनं॥ परिचर्या स्तुतिप्रह्वगुणकर्म्मानुकीर्तनं॥ मत्क
थाश्रवणे श्रद्धा मदनुध्यानमुद्धव॥ सर्वलाभोपहरणं दास्येनात्मनिवेदनं॥
मज्जन्मकर्म्मकथनं मम पर्वानुमोदनं॥ गीतताण्डववादित्रगोष्ठीभिर्मद्गृहो
त्सवः॥ यात्राबलिविधानं च सर्ववार्षिकपर्वसु॥ वैदिकी तांत्रिकी दीक्षा
मदीयव्रतधारणं॥ ममार्चास्थापने श्रद्धा स्वतः संहत्य चोद्यमः॥ उद्यानोपवनाक्रीडपु
रमन्दिरकर्म्मणि॥ सम्मार्जनोपलेपाभ्यां सेकमण्डलवर्त्तनैः॥ गृहशुश्रूषणं मह्यं दास
वद्यदमायया॥ अमानित्वमदंभित्वं कृतस्यापरिकीर्तनं॥ अपि दीपावलोकं मे नोप

नां भति म्म प्पुद्ध व स ना त मे॥स सं ग न ध्ध पा भ त्या मयि मा य उ पा यि तः॥स वै मे दर्शितं सार भि र उ
सा भि द ते प दं॥ ऽ द्ध वः॥सा घृ क उ त म स्लो क म नः की हृ भिव घ्रं प्र भो॥ भति स्व यु प कु ज्ये त की हृ रा सा र भि
रा हृ ता॥ ए त ऽमे पु रु ष व्या ब्रु प प ज्ञा य व क त्य तां॥ तं ब्रह्म प र मं वो म पु र षः प्र कृ तेः परः
अ व ती गो सि भ ग वान स्वे को पा त प्र य भ्व पु॥ भ ग वा स॥ कृ पा लु र घ त दो ह स्ति ति दु
स. र्व हृ दे हि नां॥ स त्य सा रो न व द्या मा स म स्स र्व पक र क॥ का भै र हृ त धी
ही तो म्हृ दृ स्सु वि र किं च नः॥ अ नी हो भि त भु झ का त्मैं स्थि रो म क र णो मु विः॥ अ
प्र म तो ग भी रा त्मा धृ ति मा ञि त ष ट ग ण॥ अ मा नी मा न दः का ल्यो मै त्रः का रु णि कः क विः
आ ना यै वं ग णा न्दो षा न्म या दि ष्टा न पि स्व का न॥ ध र्मा न्सं त्य ज्य य स्स र्वा न्मां भ जे त्स च स त्तमः

नकुर्य्यीन्न कदेहः किंचिन्नध्यायेत्साधुसाधुवा॥ आत्मारामोनयावृत्याश्चरेज्जडवन्मुनिः॥ श
ब्दब्रह्मणिनिष्णातोनन्निष्णायात्परेयदि॥ समस्तस्यश्रमफलह्यधेनुमिवरक्षतः॥ गान्दुग्धदेहा
७ मसतींच भार्यांदेहंप   राधीनमसत्प्रजांच॥ वित्तंत्वतीर्थीकृतंमंगवाचंहीनाम्मयारक्ष
ल तिदुःखदुःखी॥ यस्यान्न   मपावनंमंगकर्म्मस्थित्युद्भववाप्रणि   निरोधमस्य॥ लीलावतारे
ऋ रेप्सितंजन्मवास्याद्बन्ध्यां   गिरंतांबिभृयान्नधीरः॥ एवंजिज्ञासया   यापोह्यनानात्वभ्रममात्मनि॥
उपारमेतविरजंमन   नोमय्यर्प्यसर्वगे॥ यद्यनीशोधारयितुंमनोब्रह्मणिनिश्चलं॥ मयि
सर्वाणिकर्म्माणिनिरपेक्षःसमाचर॥ श्रद्धालुर्म्मत्कथाःशृण्वन्सुभद्रालोकपावनीः॥ गायन्न
७ नुस्मरन्कर्म्मजन्मचाभिनयन्मुहुः॥ मदर्थेधर्म्मकामार्थानाचरन्मदपाश्रयः॥ लभतेनिश्च

ष्या॥ इद्धि यैरि छि पा र्ये फु ण्ड णो र पि ण्ड णो पु च॥ बृहस्प मा णो ष हं क ण्यीं अपि द्धाश्या सु ष्वि किि य ः॥ दे
वा धी नें ता री रे स्मिव ण्ड णा भा ये न कर्म्म णा॥ व र्त मा नो बु ध स्त ञ क र्तो ठ भि त्विम न्ये तो॥ ब ध्य तै॥ एवं
वि र ता स्त्रा य न श्रा स ना ट न म ज नें॥ द री न स्प स्री न ज्ञा णा मो ज न स्र प णा दि षु॥ नत
या व ध्य ते वि द्वां ब्रतन्त्रत चा द द त्र ण्ड णा व॥ प्र कृति स्थो प्य सं स तो य पा खं स वि ता नि ल
ः॥ वै रा र द्धे द्व या सं ग शि त याक्कि भ्र सं श य ः॥ पुति बुद्ध इ व स्व ग्न ज्ञा ना वा भि नि
व र्त्ति॥ य स्य स्यु वीत सं कल्पा ः प्रा णोद्धि य म बो धि यो॥ वृत्त य स्त ठ नि र्म तो दे ह स्थोपि
हि त त्र ण्ड णो ः॥ य स्या माहिं स्प ते हिं स्वै ये प न किंश्चि ध ट क या॥ ण्य र्थी ते बा वा चि न्त त्र न व्यति जी व तें
बु ध ः॥ न स्त वीत न म्नि द्धे त कु र्व त सा धु सा धु वा॥ त द तो ण्ड णा द्वे षा भ्यां व र्जि त स म ह ह्यु नि ः॥

ङ ता इति ह्या स्या ङ ए तो मे न क रक्त तः॥ ङ ए स्य मा या मूल ला त्वा च मे मो दो न ब न्ध ॥ शो का मो ठो रु खडु
ख द्वै हा पति स्व मा य या॥ स्व प्ने य यात्म नः स्या ति सी स्टति र्नु तु वा स्त वी॥ वि द्या वि द्ये म म त नू वि द्धु द्धव
रा री रि (ग्)॥ मो क्ष वँन्ध क री श्रा द्यो मा य या मै वि निर्म्मिते॥ ए क स्यै व म मौ रा स्य जी व स्यै व क
ल हा म ते॥ ब न्धो स्या वि द्य या ना दि र्वि द्या या व त थै त रः॥ न्ध्र प व र्ध स्य मु ता स्य वै न क्ष
ब्य ताँ व दा भि ते॥ वि रु द्ध धा र्मि णो स्त्रा त स्थि त यो रै क धर्म्मिणा रु प णी वे तौ स द र शे रं
खा यौ य ह क या क ता नी डौ च हृ दो॥ ए क स्त यो ः खा द ति पि प्प ला न्न म न्यो नि र न्नो पि
ब लै न क्षू या वु॥ आत्मा न म न्यँ च स वे दृ वि द्वा न पि प्प ला दो न तु (न तु) पि प्प ला दः यो वि द्य या यु क्त
रा तु नि त्य ब द्धो वि द्या म यो य स्ता तु नि त्य मु क्तः दे ह स्यो पि न दे ह स्यः क्षु म ति ख प्न दृ व्य

ष्ण स्य जन्ति कर्म्मा णि ष्णो नु स्ट जते ष्ण णाह्न व ॥
श्री कस्नष्ण सेउ त्तो भुं क्तो कर्म्म फलान्य सौ ॥ या व स्या ष्ण ए वे प म्यं भा व आ ना त्व मात्म नः ॥ नाना त्व
मात्मनो या वत् पा र तं — अं त दे वहि ॥ या, व द स्याख तं च त्वं भा व दी ख र तो भ यं ॥ यए तत्र
स मु पा सीर तो मुई ति — रु चार्पिताः ॥ काल श्री भा ग मो लो क ख भा वो ध र्म्म स व च ॥ अतिमी व
ह धा पाढ ण सम्मतिक — रे स ति ॥ उ ध्व व ः ॥ ष्ण णो ष्व व तं मानो — पि दे ह जे ध्रुव पाश्रिताः ॥
ष्ण तौ र्भ व घा ते देही — व ध्या ते वा क थं प्र भो ॥ क थं व र्ते त वि — ह रे ह के वीन्या ये त र्केण
तो ॥ किं कुं अ ता ति वि स्ट जे क यीता सी त यातिवा ॥ ए तद च्युत मे ब्रूहि प्र श्नं प्र श्न विदां व र ॥ नित्य मुक्तो नि
त्य बद्ध ए कएव ति मे भ्र मः ॥ इति श्रीभा ग व ते ए नाद श स्कन्धे द श मो ध्या यः ॥ श्री भ ग वा न ॥ बद्धो

तैस्थानैयथागक्षत्रितकृणः । इष्टेहदेवतायजैस्तैर्भोकयातियाज्ञिकः ॥ भुजी ॥ देवबुत्तत्रभोगा
द्दिव्यान्विजाज्ञिताब ॥ स्वपुण्ये प्रचिते शक्रविमानऽपगीयते ॥ गन्धर्वैर्विहरन्मत्यौ देवानांद्रुधुवे
पुधुक ॥ क्षीणे ॥ मग यानेनकिंकिणीजालमालिना ॥ क्रीडन्नेदाम्पातस्तराक्रीडेपुनि
वृतः ॥ तावत्प्रमोदते स्वर्गे यावत्पुण्यं समाप्यते ॥ क्षीणपुण्यः पतत्यर्वाग्निकच्च
कालचानितः ॥ यद्यधर्म रतस्संगाद सतावाजितेन्द्रियः ॥ कामा मोक्षपरो लुब्धस्तेयोभ
तविहिंसकः ॥ पद्मन विहीनाल्यप्रेतभूतगणान्वेतः ॥ नरकानवशोजन्तुर्गत्वा यात्यु
वणीनमः ॥ कर्माणि दुःखोदर्काणि कार्विद्वेहेनवैपुनः ॥ देहमाभवतेन्नचाक्लिंस्तुस्वर्म्मार्यकार्मि
णः ॥ लोकानोलोकपालानाम्मतमयंकल्पजीविनां ॥ ब्रह्मणोपिभयम्मत्तोद्विपरार्द्धपरायुषः ॥

द्यौ स्मृतिं कीयथा ॥ तत्तदाकृतिभेदेन जायते भिद्यते च धीः ॥ एवमप्यंगसर्वेषां देहिनां द्वेह
योगतः ॥ कालावयवतस्मृतिभावाजन्माद्वयो सङ्कुत ॥ तत्रापि कर्म्मणो कार्द्दरखातं च्येंवल
क्ष्यते ॥ भो तुरखद्रुःख स्तुखयोः कोवस्थांवितरीं भजेत ॥ न देहिनौ सुखं किंचिद्
द्युते विड्डपामपि ॥ त पाचद्रुःखमूढानां यथाहं कारणां : परे ॥ यदि प्राणिनविघातं
चजानन्निसुखदुःख योः ॥ कस्मात्ते द्रुःखरहितं सुखन्न प्रा प्नुयुः सदा ॥ तेप्यद्यान
ब्रिडुयेगम्भृत्युर्णं प्रभवद्यया ॥ कोवर्ध स्तुखयस्येनं का मोवा मृत्सुरवि कोऽस्य
ध्रातन्नीयमानस्य वह्न्यस्येवन तुष्टिदः ॥ सुमं मुद्ध षृवनु पुं स्व द्धी स्नयात्त्य याप्यैः ॥ बहुत
रयथामत्वार कृषिवत्सोपि नि षकनःश्मन्न तरायैरविव्र तो यदि धर्मस्व विषृ दःखौ तेनापितार्ड

केनास्य दण्डः॥ यथा मित्रैर्द्वीरणो दाद्याद्धृ दौन्यः प्रकारकः॥ निरोधोऽस त्यप्रबृह श्रागालेष्य
कृतात्र गुणाब॥ मन्त्रं कुपूर्वि षृग्ना द नद्रव केवगुणाब परः॥ यो सौगुणार्वि रचितो देहो येषु
ल रुवस्य हि॥ संसार सुनिबन्धो यं पुंसो विद्याद्विताम नः॥ तस्मात्तज्ञ्ज्ञास सुयाज्ञनं
न मामिन्स्थं केवलं प र॥ संगम्य निरसो देत द्रस्त्व ड्ठि यथाक मं॥ आचार्य
ब रणि राद्धा स्याद स्ने नास्य तु तरारणोः॥ तत्स्थानंप्र व द्व नवि द्या साक्षि स्तुस्था
वहः॥ वैराग्य दी साति विरुद्धे बुद्धि र्द्दृ नोति भो यौगुण संप्रसूता॥ गुणोऽच
सं बृह्या यदात्म मे तत्स्व यं च रा म्यत्य स मिद्य याच्छि नः॥ अथैषां कर्म कर्तृ गोभेतागां
स्तु खदुःख योः॥ नानात्वम थ नित्यत्वं लोकवालागमानां॥ मन्यसे सर्वभावानां संस्था

नोमयं'' पुंसो युक्तस्य नानार्थो भ्रम स गुण दोष कृत'' कर्माकर्म विकर्मेति गुण दोषधियोर्भिदा''
तस्माद्युक्तेंद्रिया ग्रामो युक्तचित्त इदं जगत'' आत्मनीक्षस्व विततमात्मानं मय्यधीश्वरे''ज्ञा
नविज्ञानसंयुक्तआ त्मभूतश्शरीरिणां'' आत्मानुभव तुष्टात्मा नान्तरायैर्विहन्यते''
दोषबुद्ध्योभयातीतो निषेधान्न निवर्त्तते'' गुणबुद्ध्या च विहितं न करोति य
थार्भकः'' सर्वभूतसु हृच्छान्तो ज्ञानविज्ञाननिश्चयः'' पश्यन्मदात्मकं विश्वन्न
विपद्येत वै पुनः'' श्री शुकः'' इत्यादिष्टो भगवता महाभागवतो नृप'' उद्धवः प्रणि
पत्याह तत्त्वजिज्ञासुरच्युतं'' उद्धवः'' योगेश योगविन्यास योगात्मन्योगसंभव'' निश्श्रेयसाय मे प्रो
क्तस्त्यागः सन्न्यासलक्षणः'' त्यागोयं दुष्करो भूमन्कामानां विषयात्मभिः'' सुतरां त्वयि सर्वात्म

प्रविष्टस्य मुकुन्दं वं समभाषत ॥६॥ इति श्रीभागवते एकादशस्कन्धे षष्ठोध्यायः ॥६॥ भगवानुवाच ॥
यदात्थ मां महाभाग तच्चिकीर्षितमेव मे ॥ ब्रह्मा भवो लोकपालाः स्वर्वासं मेभिकांक्षिणः ॥ मया निष्पा
दितं ह्यत्र देवकार्य मशेषतः ॥ यदर्थमवतीर्णोहमंशेन ब्रह्मणार्थितः ॥ कुलं वै
शापनिर्दग्धं नंक्ष्यत्यन्योन्यविग्रहात् ॥ समुद्रः सप्तमे ह्येनां पुरीं च प्लावयि
ष्यति ॥ तर्ह्येवाहि मया त्यक्तो लोको वै नष्टमंगलः ॥ भविष्यत्यचिरात्साधो कलिनापि
निराकृतः ॥ न वस्तव्यं त्वयैवेह मयात्यक्ते महीतले ॥ जनोधर्मरुचिर्भद्र भविष्यति
कलौ युगे ॥ त्वं तु सर्वं परित्यज्य स्नेहं स्वजनबन्धुषु ॥ मय्यावेश्य मनः सम्यक्समदृग्विच
रस्व गां ॥ यदिदं मनसा वाचा चक्षुर्भ्यां श्रवणादिभिः ॥ नश्वरं गृह्यमाणं च विद्धि मायाम

तासमचितो बद्धवत् ॥ छ ॥ इति एकादशस्कन्धे नवमोध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मयोदितेष्ववहित
स्वधर्मेषु मदाश्रयः ॥ वर्णाश्रमकुलाचारमकामात्मा समाचरेत् ॥ अन्वीक्षेत विशुद्धात्मा देहिनां
विषयात्मनां ॥ गुणेषु तत्वध्यानेन सर्वारंभविपर्ययं ॥ सुप्तस्य विषयालोकं ध्यायतो वा
मनोरथः ॥ नानात्मकत्वाद्विफलस्तथाभेदात्मधीर्गुणैः ॥ निवृत्तं कर्म सेवेत प्रवृत्तं मत्पर
परस्त्यजेत् ॥ जिज्ञासायां संप्रवृत्तो नाद्रियेत कर्मचोदनां ॥ यमानभीक्ष्णं सेवेत निय
मान्मत्परः क्वचित् ॥ मदभिज्ञं गुरुं शान्तमुपासीत मदात्मकं ॥ अमान्यमत्सरो दक्षो निर्म
मो दृढसौहृदः ॥ असत्वरोर्थजिज्ञासुरनसूयुरमोघवाक् ॥ जायापत्यगृहक्षेत्रस्वजनद्रविं
णादिषु ॥ उदासीनः समं पश्येत् सर्वेष्वर्थमिवात्मनः ॥ विलक्षणः स्थूलसूक्ष्माद्देहादात्मे

ह्युसपत्नइवगेहपर्तिलुनति ॥ स्टथ्रुपुराणिविविधान्यजयात्मरात्म्याद्दोन्वसरीस्त्पपद्
नसवर्दरामत्स्यान्व ॥ तैस्तैरत्तष्टुह्नदयः पुरुषंविधायब्रह्मावलोकधिपणाम्ङ्दमापदेवः ॥ नक्षत्
ल द्भर्नभामदंबहूसं भवांतोमानुष्यमर्थदमनित्यमपीहधीरः ॥ नूणांयतोतनं
पतेदनुमृत्युपा वंश्रिसेपसापविषयः खलञ्ज्म तस्यात ॥ एवंसंज्ञातवैरा
ब्योविज्ञानानोकण्या म्निनृ'विचरामिमहीमेताम्ङ्तसं गोनहंकति ॥ नह्येकत्रा
७ सङ्गरोज्ञातडानिस्तु स्थिरंस्यात्तुपुरुषस्य ॥ बत्नतद्वितीयंवैगीयतेबहुधर्षिभिः ॥
लीभवावान्व ॥ इस्तुत्वासयद्भंविपुस्तमामीश्यांगधीरधीरधीः ॥ वद्धितोभ्यर्च्छितोराजाय
यौप्रीतोपथागतां ॥ अवधूतवचस्तुत्वापूर्वेषान्नसपूर्वजः ॥ सर्वसंगविनि

पञः यत्र मणो दे ही धार येत्स कलं धि या। स्नेहा द्वेषा रभ या द्वापि याति तत्तत्स्व रूपतां॥ कीटः पेरा
ध्वितां ध्याय न्न कुआ तं नं प्र वेरि तः। याति तत्सा म्यतां रा जन्न पूर्व नृ प नु सं न्या जव॥ एवं
गुड रुम्याणां तेभ्य एषा मेरि क्षितामतिः॥ स्नामोपरिक्षितौ बुद्धिं शुम्भमेव द तुः प्रभो॥
के हो गुड रुम्भीम--वि रति वि वे क हे तुर्विभ्रत स्म सत्व नि धनं सततां स्तु द क्षीः॥ त
त्वान्य नेन विक्र शाभि प था ते यापि पारच्च भित्यत्र सि तो वि च सभ्यं सं गः
जापाम जात्यी प दुहं त्य ष्टहा प्र व गी न्न पु ष्याति यत्प्रिय यिची र्ष पावि त धन्॥ स्ना
ने सु क्षु कुमव रुद्ध धनस्य देह स्पृ ष्टो स्य बीजम व सीदति दृद्य धर्म्म॥ जिद्दै क तौ मु म पक षं
ति नाहि त बैरि खो न्य त स्व गुड दरं स्य व णां कुतश्चित॥ बा णो न्यत स्थ्य पल दृक्षा च क र्म्म राति ः र्व

क्ष्यमुनिरेकोल्पभाषणः॥ गृहारंभोहिदुःखायविफलश्चाध्रुवात्मनः॥ सर्पःपरकृतंवेस्म
प्रविश्यसुखमेधते॥ एकोनारायणोदेवः पूर्वसृष्टंस्वमायया॥ संहृत्यकालकलयाक
ल्पान्तइदमीश्वरः॥ एकएवाद्वितीयोभूदात्माधारोखिलाश्रयः॥ कालेनात्मानुभावेन
साम्यंनीतासुशक्तिषु॥ सत्वादिष्वादिपुरुषःप्रधानपुरुषेश्वरः॥ परावरा
णांपरमआस्ते कैवल्यसंज्ञितः॥ केवलानुभवानन्दसन्दोहोनिरुपाधिकः
केवलात्मानुभावेन स्वमायांत्रिगुणात्मिकां॥ संक्षोभयन्सृजत्यादौतयासूत्रमरिन्द
म॥ तामाहुस्त्रिगुणव्यक्तिंसृजन्तींविश्वतोमुखं॥ यस्मिन्प्रोतमिदंविश्वंयेनसंसरतेपुमान्॥
यथोर्णनाभिर्हृदयादूर्णांसंतत्यवक्त्रतः॥ तयाविहृत्यभूयस्तांग्रसत्येवंमहेश्वरः॥

ब्र भ तैरिति मे मतिः॥ सोहम्ममाहमिति मूढमति

र्विगाढस्त्वन्मायया विरचितात्मनि सानुबन्धे॥ तत्त्वञ्जसा निगदितं भवता यथाहं संसाधया

मि भगवन्ननुशाधि भृत्यं॥ सत्यस्य ते स्वदृश आत्मन आत्मनोन्यं वक्तारमीश विबुधेष्वपि

नानुचक्षे॥ सर्वे विमोहितधियस्तव माययेहं ब्रह्मादयस्तनुभृतो बहिरर्थभा

वाः॥ तस्माद्भवन्तमनवद्यमनन्तपारं सर्वज्ञमीश्वरमखण्डविकु

ण्ठधिष्ण्यं॥ निर्विण्णधीरहमिह वृजिनाभितप्तो नारायणं नरस

खं शरणं प्रपद्ये॥ श्रीभगवानुवाच॥ प्रायेण मनुजा लोके लोकतत्वविचक्षणाः॥ समुद्ध

रन्ति ह्यात्मानमात्मनैवाशुभाशयात्॥ आत्मनो गुरुरात्मैव पुरुषस्य विशे

पतः॥ परप्रसादानुमानाभ्यां ल्लेयोसावनुविद्धते॥ पुरुषत्वे च मान्धीरास्सांख्ययोगविशारदाः॥
माविस्तिरां पपश्यंक्षि सर्वरातुपपबृंहितं॥ एकद्वित्रिचतुष्पादोवह्वपादस्तथापदः॥ वत्स्यसं
न्निपुरस्स्पृष्ठास्त्रासाभ्य पौरुषीप्रिया॥ अजमामार्भ्यय स्यदापुत्राहेडभिरीश्वरै॥ ग्र
ह्यमाणोर्डणोर्निगे रग्राह्यमनुमानतः॥ अत्राप्यु दाहरत्नीमभितिहासं
पुरातनं॥ अवधू तस्यसंवादं यदोरमिततेजस ः॥ अवधूतद्विजं कंश्चि
द्यरन्तमकुतोभयं ॥ कविर्निरीक्ष्य निपुणं यदुः पप्रच्छ धर्मवित्॥ कुतो बुद्धिरि
यं ब्रह्मन्नकर्तुः सुविशारदा॥ यामासाद्य भवाल्लोकं विद्वांश्चरति बालवत्॥ प्रायो धर्मार्थका
मेषु विवित्सायां च मानवाः॥ हेतुनेह समीहन्ते आयुषो यशसः श्रि

यः॥ त्वं तु कल्यः कविर्द्दक्षः सुभगोमितभाषणः॥ न कर्त्ता नेहसे किंचिज्जडोन्मत्त
पिशाचवत्॥ जनेषु दह्यमानेषु कामलोभदवाग्निना॥ न तप्यसेग्निना मुक्तो गंगांभःस्थ इव द्विपः॥
त्वं हि नः पृच्छतां ब्रह्मन्नात्मन्यानन्दकारणं॥ ब्रूहि स्पर्शविहीनस्य भवतः केव
लात्मनः॥ भगवानुवाच॥ यदुनैवं महाभागो ब्रह्मण्येन सुमेधसा॥ पृष्टः सभाजितः
प्राह प्रश्रयावनतं द्विजः॥ ब्राह्मण उवाच॥ सन्ति मे बहवो राजन् गुरवो बुद्ध्युपाश्रिताः
यतो बुद्धिमुपादाय मुक्तोटामीह तान्शृणु॥ पृथिवी वायुराकाशमापोग्निश्चन्द्रमा रविः
कपोतोजगरः सिन्धुः पतंगो मधुकृद्गजः॥ मधुहा हरिणो मीनः पिंगला कुररोर्भकः॥ कुमा
री शरकृत्सर्प ऊर्णनाभिः सुपेशकृत्॥ एते मे गुरवो राजंश्चतुर्विंशतिराश्रिताः॥ शि

दा इति भिरतेषामन्वशिक्षमिहात्मनः॥ यतो यदनुशिक्षामि यथा वा नाहुषात्मज॥ तत्त
था पुरुषव्याघ्र निबोध कथयामि ते॥ भूतैराक्रम्यमाणोपि धीरो दैववशानुगैः॥ तद्विद्वा
न्न चलेन्मार्गादनुशि क्षन्क्षितेर्व्रतं॥ शश्वत्परार्थसर्वेहः परार्थैकान्तसंभवः॥
साधुः शिक्षेत भूभृत्तो नगशिष्यः परात्मतां॥ प्राणवृत्यै व संतुष्येन्मुनिर्नैवे
न्द्रियप्रियैः॥ ज्ञानं य थानन श्येत नावकीर्येत वाङ्मन ॥ विषयेष्वाविशन्यो
गीनानाधर्मेषु स र्वतः॥ गुणदोषव्यपेतात्मा न विषज्जेत वायुवत्॥ पार्थिवे
ष्विह देहेषु प्रविष्टस्तद्गुणाश्रयः॥ गुणैर्न युज्यते योगी गन्धैर्वायुरिवात्मदृक्॥
अन्तर्हितश्च स्थिरजङ्गमेषु ब्रह्मात्मभावेन समन्वयेन॥ व्याप्त्याव्यवच्छेदमसंग—

मात्म वोभु निर्झभो वद्धि तत स्यभाव येत॥ ते जौं ब ब्र म यै भी वै र्भे घा यै वी य ने रि तैः॥ नस्प्ट रय

तो न भ स्तं द्व त्र का ल स्ट षेर्ग्ग पौः पु मा ब्र॥ स्व कः प क्षुति त स्निग्धो म धु र स्नी र्त्य भू र्न्नृ णां॥ म निः

पु नात्य पा ग्मि त्र मी क्षो प स्पर्शी की र्तं नैः॥ ते ज स्वी त प सा दी प्तो द्धु र्द्ध र्षो द र भां

ज नः॥ स र्वं भ दो पि यु ता मा ना द ते म न म ग्नि वत्र ॥ का चि क भ्रुः का वित्तस्य

ष्ट ऊ पा स्व से यइ क तां॥ भु क्के स र्वं त्र दा त्ह णा न्द ह नु पा ग्ड त स रड भं॥ स्व मा य

या स्ट ष्टुमि दं स द स ञ्ज दा णां वि भुः॥ प्र वि ष्ट ई य ते त ज रा रू पो ग्नि रि वै ध सि

का ल न द्यो घ वे गे न क्षू ता नां प्र भं वा प्य यो॥ नि त्या व पि न दृ श्यन्ते आ त्म नो गर्भ य्यं था र्चि षा॥

दे वि स र्गा द्या रम्भ रा ना ज्ञा भा वा दे ह स्य ना त्म नः॥ क ला ना मि व च द्ध स्य का ले ना व्य ता रं ठ

सा॥ गुणैर्गुणानुपादत्ते यथाकालं विमुञ्चति॥ न तेषु युज्यते योगी गोभिर्गा इव गोपतिः॥ बुद्धिसं
स्थेन भेदेन व्यक्त्यस्थ इव तद्गतः॥ लक्ष्यते स्थूलमतिभिरात्मा—चावस्थितोऽर्कवत्॥ नाति
स्नेहः प्रसंगो वा कर्त्तव्यः क्वापि — केनचित्॥ कुर्वन्विन्देत सन्तापं कपोत इव दीन
धीः॥ कपोतः कश्चिनारण्ये कृतनीडो वनस्पतौ॥ कपोत्या भार्यया सार्द्धमुवास
कतिचित्समाः॥ कपोतौ स्नेहगुणितहृदयौ गृहधर्म्मिणौ॥ दृष्टिं दृष्ट्याङ्गमङ्गे
न बुद्धिं बुद्ध्या बबन्धतुः॥ शय्यासनाटनस्थानवार्त्ताक्रीडाशनादिषु॥ मिथुनी
भूय विस्रब्धौ चेरतुर्वनराजिषु॥ यं यं वाञ्छति सा राजन्तर्पयन्त्यनुकम्पिता॥ तं तं समा
नयत्कामं कृच्छ्रेणाप्यजितेन्द्रियः॥ कपोती प्रथमं गर्भं गृह्णती काल आगते। अण्डा

नि सु पु वे नीडे स्व प त्यु स्स न्नि धौ स ती॥ ते पु का ले व्य जा य त्न र चि ता क य वा ह रैः॥ रा त्रि मि
र्दु र्वि भा व्या भिः कौ म ली ग त व्र रहाः॥ प्र जाः पु पु ष तुः प्री तौ दं प ती पु त्र क त्स नौ॥ ए त्म नौ क जि
८ तं ता सा न्नि र्द तौ का न भा षि तैः॥ ता सी प त त्रैं स्तु स्प र्शैः कू जि तै र्म्रु स्व चे ष्टि तैः॥ प्र त्यु त्त
प मै र दी नौ नां पि त रौ मु द मा प तुः॥ स्ने हा न्न बन्ध हृ द या व न्यो न्यं वि स्तु मा य या
वि मो हि तौ दी न चि यौ शि शूः पु पु ष तुः प्र जाः॥ एकदा त्र ग्म तु स्ता सा म र्था नार्थं
कु ड्डिं नौ॥ प रि तः का न ने त स्मि न्न र्थि नौ चे र तु श्चि रं॥ दृ ष्ट्वा ता लु ब्ध कः क श्चि द्य
१० दृ का तो व ने च रः॥ जगृ हे जा ल मा ता त्य च र त स्त्वा ल या त्ति के॥ क पो त स्व क पो ती च प्र जा पो षे स
दो त्स कौ॥ ग तौ पो ष ता भा दा य स्व नी ड मु प त्र ग्म तुः॥ क पो ती स्वा त्म जा श्री क्ष्य बा ल का जा ल

संहृताव॥ तानभ्यधावत्तत्रनौशनीकोरातोष्टरा दुःखिता॥ साससहृत्स्नेहगुणाताडीनचित्ताब्रमाय
या॥ स्वयस्त्रावह्मितस्तचाबद्धान्वपश्यव्यपस्मृतिः॥ कपोतस्वामिजाबबद्धानामिनोभ्यधिकान्तप्रिया
ब॥ भार्याश्रामसमा कीनांविललापातिदुःखितः॥ अहोमेपश्यतापायमस्यपुण्यस्य
दुर्मतेः॥ अतस्तस्याहा माथस्यगृहसैवर्गिकोद्गतः॥ अनु कूलानुरूपाचयस्यमेपति
देवता॥ स्त्रान्येगृहेमां सन्त्यज्यपुत्रैस्वर्यातिसाधुभिः॥ सोहंशून्येगृहेदीनोमृते
तदारोमृतप्रजः जिजीविषेकिमर्थंवाविधुरोदुःखजीवितः॥ तौस्तथैवावृत्तावसि
गास्त्युग्रस्ताब्धिचेष्टतः॥ स्वयस्त्रकपणास्तिकपश्यव्यप्यबुधोपतत्व॥ तंनष्ठालुब्ध[illegible]क्षः कू
रः कपोतंगृहमेधिनः॥ कपोतीस्वकपोतीवसिद्धार्थःप्रययौगृहं॥ एवं कुड्ड्यशाखामाई

क्षाराम्ः पतन्ति नरत॥ पुंसश्च कुड्मं बंकुपणासानुबन्धो व सीदति॥ यःप्राप्य मानुषं लोकं मुक्तिद्वा
र मपावृतं॥ग्र हे षुरवग व त्स ता समारूढ च्युतं वि दुः॥ङ्ड ति स्रीभा ग ब ते ए का द्द रा रकण्धे स प्त
मोध्यायः॥ङ ञ्च व ध्रुतः रू रव भेः द्धि य कं रा जन्न स्वर्गे न र क ण ए क चे॥ देहि नां य द्य थाद स्व
त रमाभ्ने के त ततबुध ः॥ग्रासं सुमृ षं वि र स म्म हा नं स्तोक मे व वो॥ य द कयेवाप
ति तं ग्र से द ज ग रो कि यः॥ शयिता हा नि श्च री णि निरा हा रो नु प वा म॥ यदि
वो प न मे त्र ग्रासोम हाहि रि व द षृ जु ब॥ श्रो त्र सहो ब न यु तं बि श्च दे ह म कर्मकं
ता या नो वी त नि द्र स्च ने हे तो द्धि य वा न पि॥ मु निः प्र स श्न गं भी रा दु र्वि गा ह्यो द्रु रत्य
यः॥ त्र न न पा रो ह्य को न्यस्तिभि तो द इ वा र्णि वः॥ स म्म द्द का मो हीं को वा ना रा य ण प

रो मु लि ः॥ नोस मैं ति न रु ष्ये त स रि त्र भि रि व सा ग रः॥ ह्र ब्दु स्वि य द्दे व मा या त्तत भा वे रि ग
ते ड्रि य ः॥ प्र नो भि त ः प त त्यं ष्वे त म स्य भ्दौ प तं ग व त॥ पा षि द्धि र त्या न र मैं व सा दि द्र व्ये षु मा
या र त्रि ते षु स ठः॥ प्र नो भि ता भा ह्म प भो ग बु द्धा प तं ग व भ्र रुप ती न ष्ट ह्र पि ः॥ सो
कै सौ कै ग्र स त गा सैंः दे हो व ते त या व ता॥ ग्ट हा नार्हं स भ्र ति ष्ठे द त्रि मा ध्रु व रि ष्ठ
त्र ः॥ ख्या त्य स्व म ह स स्वे शा स्त्रे भ्यः क्र रा लो न रः॥ स र्व ते ः सा र मा द द्या त पु ष्प भ्य इ व
प टे प द ः॥ सा यक्ष नैं स स्व वँ ब्रा न सं ग्र हो त भे क्ष तं॥ पा सि पा नो द स मा नो
वि के व न सं ग्र ही॥ सा य न्न कं स्व स्र नं वा न सं ग्र ही त भि क्षु का ॥ म दि वा इ व सं ग्र हु व स हे ते
न वि न स्य ति॥ प दा पि यं व र्णि गि क्षु र्के स्य रो द्धा र वी म पि॥ स्य स ब्र क री व व ढो त क रि ष्या मि

गं सं ग तः॥ नाधि न केतु त्रि यं पाशः वर्ति चिन्मृत्यु मा म नः॥ ब लाधि वैस्य ह न्ये त ग त र न्ये
र्गं जो यथा॥ न दे य नो प भोग्यं ग्र लु ध्वै र्य दु स्व संश्रितं॥ मुं को त द पि त च्यो न्यो म धु हे वा र्थ वि
म धु॥ सु दु खो पार्जि तैर्वि तै राशा सा नां गृ हा रि पः॥ म धु हे वा ग्र तो मुं को पति वैगृ
मु' ह मे दि नां॥ ग्रा म्य तीं त नु रू ट (ा)ख्यात पत्तिर्व न चरः क चित्त॥ रि केत हा॥ (७)
हा र बु द्धिं म्मृ ग यो गीत मोहि ता तः॥ नृ त वा दि त्र गी ता नि क प व ग्रा म्या (ा) यो
षि तां॥ ग्रा सीं क्री ड न को व ३प न्न स्य शं गो मृ गी सु तः॥ त्रि ह या ति प मा थि न्या ज नो
(७) र सा षि मोहि तः॥ मृ त्यु र्य कस्य सार बु द्धि म्मस्य स्नानि षि रौ र्थ्य था॥ इन्द्रि या (णि) ज य क्ष्मा रु निरा हा रा
म नीषि णः॥ व र्जयि ता त र स न न न भि र ब स्य व र्द्धते॥ ता व द्भि तेन्द्रि यो न स्या द्विजि ता न्यो न्द्रि यः॥

पुगाख॥ नजयेदुःसनौयाव स्थितां सर्वं जितेरसे॥ पिंगलानामवेश्यासीद्विदेहनगरेपुरा॥
तस्यामेशिक्षितं किंचिन्निबोध नृपनन्दन॥ सास्वैरिण्येकदाकान्तं संकेतमुपनेष्यति॥ अभूत्तका
ले बहिर्द्वारि बिभ्रती रूपमुत्तमं॥ मार्गमागच्छतो वीक्ष्य पुरुषान्पुरुषर्षभ॥ ताञ्छु
ल्कदाबित्तवतःकान्तान्मेनेर्थकामुका॥ आगतेष्वपयातेषु सा संकेतोपजीविनी॥
अप्यन्यो वित्तवान्कोपि मामुपैष्यति भूरिदः॥ एवं दुराशया ध्वस्तनिद्रा द्वार्यव
लंबिनी॥ निर्गच्छती प्रविशती निशीथं समपद्यत॥ तस्या वित्ताशया शुष्यद्वक्त्राया दीन
चेतसः॥ निर्वेदः परमो जज्ञे चिंताहेतुः सुखावहः॥ तस्या निर्विण्णचित्ताया गीतं शृणु यथा मम॥
निर्वेद आशापाशानां पुरुषस्य यथा ह्यसिः॥ न ह्यंगाजातनिर्वेदो देहबंधं जिहासति॥ पिंगला॥ अहो

गेभोठवित्ततिं परयताविजितामनः॥ याकान्ताद्सतःकामंकामयेयेनबालिशा॥ सन्तंसमीपेरमणंरति
प्रदंवित्तप्रदक्षित्यमिमंबिहाय॥ श्रकामदद्रुखभयाधिशोकमोहप्रदंतुकमठंमचजेआ॥ त्वंहे
नयातापरितापितोद्व :थासौकेसहृत्यात्युतिबाद्यवार्तया॥ सैणब्रादर्थतृबोनुशोच्या
रकीतेनवित्तरति मामन्कती॥ यदस्थिभिर्निर्मित वंशावंश्यस्थूणं
लवारोमनखैःपिनद्धं॥ न्नरब्रवद्वारमगारमेत्त द्विएमूत्रपूर्णंम्मदुपे
तिकान्या॥ विदेहानां पुरेह्यस्मिन्नहमेकैवमूढधीः॥ पान्यमिच्छत्यसत्यस्मादा
६. लदारकालमच्युतात्॥ स्तुहृत्प्रेष्ठतमोनाथआत्माचायंशरीरिणां॥ तंविक्रीयात्म
नैवाहंरमेनेनयथारमा॥ कियत्प्रियंतेव्यभजन्कामाकामदानराः॥ आद्यन्तव

तो भा र्य्या या दे वा वा का ल वि द्रु ताः॥ बु न्न मे भ ग वा न्प्री तो वि ष्णुः कौ ना पि क र्म्म णा॥ नि र्वे दो य दु
रा शा पा यु त्रे जा त स्तु खा व हः॥ मै वं स्यु र्म्मु न्द भा ग्या याः क्ले शा नि र्वे द हे त वः॥ ये ना नु बं न्ध नि
ष्टं त्य पु रु ष स्य श म मू र्क्ति॥ तौ बो प क्तृ त मा दा य शि र सा व्या म्य सं ग तः॥ त्य क्ता द्र रा रा
स्त्र र णे व ज्ञा मि त म धी ख रं॥ स मु ष्टा स्त्र दु ध त्यै त द्य था ल्ला भे न जी व ती॥ वि इ रा म्य
मु नै वा ह मा त्म ना र म तो न वै॥ सं सा र क्रू प प ति तं वि ष यै र्म्मु षि ते क्ष णं॥ अ सं का
ला हि ना त्मा नं कौ न्य ता इ म धी ख रः॥ भ्रा मै व ह्या म नो गो ता नि र्वि ष्टे त त दा — ख ला ब्ज॥ अ
द्रु म त इ दं प रे प र ग त्र सं का ला हि ना ज ग त॥ ब्रा ह्म णः॥ ए वं व्य व स्थि त म ति ई रा णां का न्त र्च जौ॥ छि
त्वो प रा म मा स्था य त त्या मु प वि वे रा सा॥ भ्रा गा हि प र म दु ख बै रा ग्यं प र मं सु खं॥ प या सं

च्छिद्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिंगला ॥ ० ॥ इति श्रीभागवते एकादशस्कन्धे अष्टमोध्यायः ॥
० ब्राह्मणः ॥ परिग्रहो हि दुःखाय यद्यत्प्रियतमं नृणां ॥ अनंतं सुखमाप्नोति तद्विद्वान्यस्त्वकिंचनः
सामिषं कुररं जघ्नुर्ब लिनो ये निरामिषाः ॥ तदामिषं परित्यज्य स सुखं समविंदत ॥ न
मे मानावमानौ स्तो न चिंता गेहपुत्रिणां ॥ आत्मक्रीड आत्म रतो विचरामीह बाल
वत् ॥ द्वावेव चिंतया मु क्तौ परमानंद आप्लुतौ ॥ यो विमुग्धो जडो बालो यो गुणेभ्यः प
रं गतः ॥ क्वचित्कुमा री त्वात्मानं वृणानान्गृहमागतान् ॥ स्वयं तानर्हयामास क्वापि या
तेषु बन्धुषु ॥ तेषामभ्यवहारार्थं शालीन्रहसि पार्थिव ॥ अवघ्नंत्याः प्रकोष्ठस्थाश्चक्रुः शंखाः स्व
नं महत् ॥ सा तज्जुगुप्सितं मत्वा महती व्रीडिता ततः ॥ बभंजैकैकशः शंखान्द्वौ द्वौ

पापापारशेषयत्न॥ उभयोरप्यक्षत्र धीषोद्यपद्वन्त्यास्मशंरवयोः॥ तत्राप्येकभिरभिनदेकस्माज्ञा
भवद्धिनिः॥ अत्र च शिक्षमष्टे तस्या उपदेशमरिन्दम॥ लोकाननुवरन्नेतांल्लोकतत्त्व
विवित्सया॥ वासौ व हूनां कलहो भवैद्वार्ता द्वयोरपि॥ एक एव वसेत्तस्मात्कु
माप्या इव कङ्कणः॥ मन एकत्र संयुञ्ज्याज्जितस्वासो जितासनः॥ वैराग्याभ्या
सयोगेन ध्रियमाण मतन्द्रितः॥ यस्मिन्मनो लब्धपदं यदेतच्छनैः शनैर्मुञ्च
तिकर्म्मरेणाहृन्॥ सत्वे न वृद्धेन रजस्तमश्च विधूय निर्वाणमुपैत्यनिन्धनं॥ तदे
वमात्मन्युपरुद्धवित्तो न वेद किंचिद्बहिरन्तरं वा॥ यथेषुकारो नृपतिं व्रजन्तमिषौगतात्मा
न ददर्श पार्श्वे॥ एकचार्यनिकेतः स्यादप्रमत्तो गुहाशयः॥ अलक्ष्यमाण आचारै

कं प्र मं श ण ढं म थिं चौ रा व न्य कं स मु स हे ना थ स्व धा म न य म म पि॥ त व धि न्नी डि तां वृ स्य-
वृ णी प द्म मे य नें प्र णी पी पु ष मा खा द्यु त्य ज त्य न्य स्पृ ह्ठीं ज नः॥ रा प्या स ना द न स्था न स्था न
नी अ र्थो ना दि षु॥ का र्थ वां षि स मा मा नं व य भ ता त्य जे म हि॥ त्व पो पं यु ता स्त्रं
ना रो नं का सं च वि मिः॥ उ क्ति षृ भो ज ना दा सा सु व मा या श्रु थे म हि॥ मु न
पो वा न स स वा श्र मः मा उ र्द्ध म ध्य नः॥ ब ह्मा र थ्य धा म ते यति शा ता स न्या
स जो म ना ः॥ व पां वि इ म ह्रा यो गि स्थ म लः का मी च र्मि रु॥ व द्वा तं पा त स्मि ध्या मे
स्ता न चै दु स्त र ता मः॥ स्म रं तः की र्तं य न्त स्ते क्ष ता नि ग दि ता नि च॥ गा त्यु ति म ते दे णां वां नी
य वृ लो वा वि डे ब नं॥ स्त्री रु कः॥ ए वं वि भा पि तो रा ज न् भ ग वा न्दे व की सु तः॥ ए का ति नं

सुमहापुण्यं पास्यामो दैव मा विरं ॥ यत्र स्नाता दत्तदाना पातगहीतो यदूमणोडुरार्दं । विमुक्तेश्वर
विधात्र सुतो मेजेभू यः कालोदयं ॥ वयं च तस्मिन्नात्मस्तु त्यत पयिताप्ति हृष्टरुसान्न ॥ भोज विता
रिधा विप्रश्वा नागड एव ताध्य सा ॥ तेषु दानानि पात्रेषु यच्छ यापमन्ठाक्षि वै ॥ व जिना नितरिष्या
मोदावैनौमि रिवाणि वं ॥ एवं भगवद्दत्तादिष्टा यादवाः कु रुनन्दन ॥ गहुं कृतधि
यसा त्विरथ द्रुनाव स मप युजन्त ॥ तत्रिरी द्यो द्ध वोराजन् कुला भगवतोदितं ॥ दृ
ष्टारिष्टमि श्वोराणि नि त्यं द्वाक्षम नुकत ॥ विवि क्त उपसंगम्य जगता मीश्वरं स्व रं ।
(६) प्रणम्य शिरसा पादौ प्रांजलिस्त मभाषत ॥ देवदेवेशा योगेश पुण्यश्रवणकीर्तन ॥ संहत्यैत
त्कुलं नूनं लोकां संत्यक्ष्यते भवान् ॥ विप्रशापं समर्थोपि प्रत्यहन्न यदीश्वरः ॥ नाहं तवां

थव   ारितमेताभ्मेपदस्यविद्धुधस्वर॥ कृतंपः काप्येमखिलं भमेभांरोवतारितः॥तद्दिढंया
ढवधुनंवीर्यंरौयस्मियोद्धतं॥ लोकांजित्वा धृक्षदुद्धम्मवेलयेवमहाणिवः॥ यद्यसंदत्यदमा
नांयद्दनांविपुलं कुलं   लं॥गत्सम्यानेनलोकोयुमुद्वेलेनविनक्ष्यति॥ इदांबारानी
त्वारवंशःकुलस्यद्वि   जशापजः॥ यास्याभिभवनंब्रह्म   न्नेतदर्हेतवानघ॥ श्री
रुकः॥ इत्युक्तोलो   कनाथेनस्वयंभूःप्रणिपत्य   तं॥ सहदेवगणैर्देव
स्वधामप्रत्यपद्यत॥   श्रयन्तस्याम्महोत्पातोद्धारवत्यांसमुत्थितान्॥ विलोक्यभगवान्ना
हयदुवृद्धान्समागतान्॥ भगवानुवाच॥ एतेवैसुमहोत्पाताव्युत्तिष्ठन्तीहसर्वतः॥ शापश्चनःकुलं
स्यासीत्ब्राह्मणेभ्योदुरत्ययः॥ नवस्तव्यमिहास्माभिर्जिजीविषुभिरार्यकाः॥ प्रभासं

म पु

तमस्मागिरशो पामँ स्तत पै शोपपादितं ॥ धर्मे स्थस्थापितसास्रुसत्यं साधुषु वे त्वया ॥
कीर्तिः स्वदिक्षु विक्षिप्ता सर्वलोकमलापहा ॥ अवतीर्य यदोर्वंशे बिभ्रद्रूपमनुत्तमं । कुर्मा
ण्युद्दामवृत्तानि हि ताय जगतो कृष्णाः ॥ यानि ते चरितानीश मे बुध्यास्ताधवः को लो
द्युएव सः कीर्तयति स्वतरिष्यंत्य ञसातमः ॥ यदुवंशे वतीर्णस्य भवतः पु
रुषोत्तम ॥ तारक तं प्रतीपायपं श्चर्वं राधिकं पभो ॥ नाधुना ते खिलाधार दे
वकार्येष रोषितां फलश्च विप्रशापेन नषृपापमभूदिदं ॥ तत स्वधाम परमं
विशस्त्व यदि मन्यसे ॥ सलोकान्लोकपालान्नः पाहि वैकुण्ठकिंकरान् ॥ श्रीशुकः ॥ संस्तुतो
भगवानित्थं विबुधैः पत्मजादिभिः ॥ प्रतिनंद्याहतान्बुध्वा जन्नमापामनुजईश्वरः ॥ भगवानु ॥

र्ग म मो घ वी यिः॥ सो पं त्व या नु ग त्त श्रा म न श्रा एड को शं है मं स स —— र्ज बहि रा व र ऐो र
पे तँ॥ ता त स्कु ष ग्र ज ग त स्य भ वा न श्री शो य भा य यो त्प ग ण विश्र्ण य वेय नीताब॥ अ त्थीजु ष न्नपि
ह षी क प ते न नि श्लो ये मे स्वु तः प रि ह ता द पिबि भ्यति स्म॥ स्मा या व लो कल व दृ र्शि त भा व
हा रि शूँ श्र म एड लप्रहि त सो र त मं ब्र शो एडेः॥ प न्य र क्त षो — ड श स ह ख म नं ग बा
णो र्थ स्थँह्नि यंषि म प्यि तँ क्रु ठ के र्न वि भ्यः॥ वि भ्य सवा मत — क यो द वे हाखि लो क्याः पा
दो व वे ग से रि त स्यम लानि हं तुं॥ श्रा न स्र वं ख ता भे रंधि ज मं ग सं गौ स्ती र्थद्ध यं रु
वि ष द त्त ड प स्पृ रां ति॥ स्री रु क्तः॥ इ त्य भि ष्टू य वि बु धै शो रा स्श त धृ ति र्ड रिं॥ ब्र भ्य पा ह
त गो णि ह्लं प्र ण स्यां ब र मा स्थि तः॥ ब्र ह्मा॥ भू मे भी रा व ता रा य म या वि ज्ञा पि तः प्र भो॥

मायाजिज्ञासुभिः परमकारणकर्तौः परीष्टः॥ पर्युषु यातवाधिमोननुमालये यैसंसर्द्धती भ
गवती प्रतिपन्नि व ञ्जीः॥ पस्तु पुणीतमम्म पार्हणामाकृदाक्षोइ यारां दांब्रिरमभारायधृम
केतुः॥ वेतुंस्वविक्र मयुत स्विपतत्पताकोयस्तेभयाभयकरांरुदेववक्षोःसो
म गायसाधुषुखलेषि तरायक्षमैपाकेःपुनातुभगवन भजतामघ्नः॥ नस्योत
ग्रं भावइवयस्यवशेभ कन्निबद्धमादयस्तनुभृतोमहदर दीमानः॥ कालस्यतेप्र
कृतिपुरुषयोःपर स्यशंनस्तनोतुचरणःपुरुषोत्तमस्य॥ अस्यासिहेतुरुदय
स्थितिसंयमानामव्यक्तजीवमहतामपि कालमाहुः॥ सोयंत्रिणाभिरखिलापचयेप्रवृत्तः कालो
गभीररयउत्तमपूरुषस्त्वं॥ यं श्वं पुमांसमधिकाद्यपदात्स्ववीर्य श्वासो महाबभिवद्य

दीसरें॥ देवाः॥ नतारम्भते नाथपदारंषिद्धंबुद्धीन्द्रिय प्रा.णामणोववैर्भिः॥ यच्चित्यते लर्द्दिभावयु
तैर्न्युक्ष्णिः कर्म्मिमयोरूपाशात॥ त्वम्मायया क्रिगुणयात्मनिर्दुर्विभावंयतो रजस्यर्सिलु
पसितत्वडणा स्थानैतै भेवानजितकर्म्मभिरज्यतेवैयस्वेस्वस्वव्यवहिभिरतोनवद्यः॥
रुद्धिह्यणभकुतथे ध्रुदुराराय्यानीविद्योलुताध्यपन दानतापः क्रियाभिः॥
रात्तात्मनाम्टपभेतै पत्तासिप्रद्दद्धसंसिद्धपात्रवण संभृतयायपात्मार॥
स्याद्बत्तर्वाक्षिरछभा रायध्रुमकेतुःदौमाययोमुनिमिराद्दृदोह्यमानः॥ यस्मावर्त्तै
सामाविभूतिगिरात्मविभिर्व्रीह्याविज्ञत स्वबनरास्वरतिक्रामाय॥ यत्स्विंश्रुतोप्रयतपाणिभि
रडुरागौन्याविनिपुक्तविधिनेराहवि गृहीता॥ त्र्यध्यात्मयोगउत पोगिभिरात्म

गुत्त माहित्तः॥ स विष्णुधि पै हराम लंबल्म भ्रयायकस्मतो॥ ॐ इति श्रीभागवते एकादशस्कं
धे पञ्च. मोध्यायः॥ डे यीराकः॥ अय बल्माम जैदैंवैः प्रजेशै रावृतो व्यगात्॥ भव स्वभृत भूव्य
शोयक्ष भूतगणैर्वृत ः॥ इन्द्रो मरुभिर्भगवानादित्यावसवोश्विनौ॥ ऋभवोंगिरसोरु
द्रा विश्वे साध्या स्वदेव ताः॥ गन्धर्वाप्सरसो नागासिद्धचा रण गुह्यकाः॥ ऋष
म यः पितरश्चैव सवि द्याधर किन्नराः॥ द्वारकामुपसंज ग्मुः सर्वे कृष्णदिदृक्ष
हा वः॥ वपुषा यन्न भग वान्नरलोकमनोरमः॥ यशो वितने लोकेषु सर्वलोकम
(७) लापहं॥ तस्यां विभ्राजमानायां समृद्धायां समृद्धिभिः॥ व्यचक्षताவितृप्ताक्षाः कृष्णमद्भुतदर्श
नं॥ स्वर्गोद्यानोपगैर्माल्यैश्छादयन्तो यदूत्तमं॥ गीर्भिश्चित्रपदार्थाभिस्तुष्टुवुर्जग

श्च मूढतां॥ त्रैवर्गिका ह्यक्षणिका आत्मानं घातयन्ति ते॥ एते आत्महनोऽशान्ता अज्ञाने ज्ञानमानि
नः॥ सीदन्त्यकृतकृत्या वै कालध्वस्तमनोरथाः॥ हित्वात्यायासरचिता गृहापत्यसुहृच्छ्रियः॥
तमो विशंत्यनिच्छन्तो वासुदेवपराङ्मुखाः॥ राजोवाच॥ कस्मिन्काले स भगवान्किंवर्णः की
दृशो नृभिः॥ नाम्ना वा केन विधिना पूज्यते तदिहोच्यतां॥ करभाजन उ॥ कृतं त्रेता
द्वापरश्च कलिरित्येषु केशवः॥ नानावर्णाभिधाकारो नानैव विधिनेज्यते॥ कृते
शुक्लश्चतुर्बाहुर्जटिलो वल्कलाम्बरः॥ कृष्णाजिनोपवीताक्षान्बिभ्रद्दण्डकमण्डलू॥
मनुष्यास्तु तदा शान्ता निर्वैराः सुहृदः समाः॥ यजन्ति तपसा देवं शमेन च दमेन च॥ हंसः सुपर्णो वैकुण्ठो
धर्मो योगेश्वरोऽमलः॥ ईश्वरः पुरुषोऽव्यक्तः परमात्मेति गीयते॥ त्रेतायां र

प्रियान्खलाः ॥ सर्वेषु शश्वत्तनुभृत्स्ववस्थितं यथा खमात्मानम...
न शृण्वते बुधा मनोरथानां प्रवदंति वार्तया ॥ लोके व्यवायामिषमद्यसेवा नित्यास्तु जंतोर्न हि
तत्र चोदना ॥ व्यवस्थि तिस्तेषु विवाहयज्ञसुराग्रहैरासु निवृत्तिरिष्टा ॥ धनं च धर्मैक
म फलं यतो स्यज्ञानं सवि ज्ञानमनुप्रशांति ॥ गृहेषु युंजंति कलेवरस्य मृत्युं न प
न्य श्यंति दुरंतवीर्यं ॥ यद्घ्राणभक्षो विहितः सुराया स्तथा पशो रालभनं न हिंसा ॥ ए
वं व्यवायः प्रजया न रत्या इमं विशुद्धं न विदुः स्वधर्मं ॥ ये त्वनेवंविदो सन्तः स्तब्धाः सद
भिमानिनः ॥ पशून्द्रुह्यंति विस्रब्धाः प्रेत्य खादंति ते च तान् ॥ द्विषंतः परकायेषु स्वात्मानं ह
रिमीश्वरं ॥ मृतके सानुबंधेऽस्मिन्बद्धस्नेहाः पतंत्यधः ॥ ये कैवल्यमसंप्राप्ता ये चातीता

वमीश्वरे॥ नमजब्धवज्ञानक्षिस्पानातभष्ठः पतक्यधः॥ इरेहरितवपाः केचिद्दरेवाच्युतकी
र्तनाः॥ खिवश्चूदादयस्वैवतेनुकंप्याभवादृशां॥ किप्रेरागन्यवैरयोचहरेः प्राप्ताः पदा
लिका॥ सौतेनज्ञभ नापापिक्रुद्धस्यामायवादिनः॥ कृम्मिणयकौविदारस्तत्राम्रस्कंः
पुण्डिन्नमानिनः॥ वदक्षिवाट्टकाब्जढयपामा क्षुभिरोतरुकाः॥ रजेसा
धोरसैकत्याःका मुकाअहिमब्जवेः॥ डांभिकामा निनःपापाडविद्धिसब्ध
व्यातप्रियाव्यवतं वन्योन्यमुपारितस्त्रियोगटडेषुभैप्सन्यपरेषुचारिषः॥ यदै
व्यसद्यान्यंअंविधानदएर्ब्दिणौदृत्यैपरेज्ञापि पखनतदि दःस्थघाविदृत्याभिजनेनाविद्य
यात्यागेनद्वपेणाबलेनकर्मणा॥ आतस्मयेनौधधिपसत्डेखराबसतोवमव्यक्तिहरि

पामलाग गौ चवि स प्त क्ष्वोराम स्थह ह य कु ला प्य प भार्ग वाभिः॥ सो क्षिंब वं न्ध द रा व कोम
हव स लं कुं सीता पति ग्रं य तिनो कमल न ध्व कीर्तिः॥ ब मे भं रा व त र गा य य दु व ग न्मा जाङ्का
रि व्यति सङ रं रंप दु क रा गा॥ वा दै विं मोह य ति य वन्क्र तो त द हीं क्ष्क द्धा वेन् का
लौ विति भ्र जोन्यहभि व्य दुं वे॥ एवं वि धानि का मी गा जन्मा नि व ग व गे प तोः॥
व री गा स्त्र रि य रा सो वर्णि ता नि मुठा भु ज॥ ङ्क इति श्री भाग व ते एकाद रास्कं
धे व तु र्थो ध्यायः ङ्करा जा॥ भगवं तं हरिं ये वै न भवं त्या भवि त मा॥ ते षाम
यां स कामा नां कानि ष्ठा वि जि ताम नां॥ च्छ म सः॥ मु ख बाहू रु पा दे भ्यः पु रु प स्या श्र
७. मै स्सह॥ च त्वा रो ज ज्ञि रे व र्णाग्ह ग्रौ विं प्रा द यः पृ थक॥ य ए षां पु रु षं सा क्षादा त्म प्रभ

श्रमजातिभिः ॥ सज्जतेस्मिन्नहंभावो देहे वै स हरेः प्रियः ॥ न यस्य स्वः पर इति वित्तेष्वात्मनि वा
भिदा ॥ सर्वभूतसमः शांतः स वै भागवतोत्तमः ॥ भुवनविभवहेतवेप्यकुंठस्मृतिरजितात्मसु
राद्भिर्विमृग्यात् ॥ न चलति भगवत्पदारविंदाल्लवनिमिषार्द्धमपि यः स वैष्णवाग्र्यः
भगवत उरुविक्रमांघ्रिशाखानखमणिचंद्रिकया निरस्ततापे हृदि कथमुपसी
दतां पुनः स प्रभवति चन्द्र इवोदितेर्कतापः ॥ विसृजति हृदयं न यस्य साक्षाद्ध
रिरवशाभिहितोप्यघौघनाशः ॥ प्रणयरशनया धृतांघ्रिपद्मः स भवति भागवतप्रधान
उक्तः ॥ इति श्रीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे द्वितीयोध्यायः ॥ श्रीशुकः ॥ निर्णीतो वो बले साक्षा
दात्मनो यो विपश्चितः ॥ सैषा भगवतो मायाययेदं निर्मितं विभुः ॥ इंद्रियपाशग्रामो जाग्रास्वप्नो सुःकरण

जंस्ततः परं शांतिमुपैति साक्षात॥ रा वा॥ अथ भागवतं ब्रुत यद्धर्म्मो यादृशो नृणां॥ यथाचर
ति यद्ब्रुते यैर्ल्लिंगैर्भ्भगवत्प्रियः॥ हरिः॥ सर्व्वभूतेषु यः पश्येद्भगवद्भावमात्मनः॥ भूतानि
भगवत्यात्मन्येष भा गवतोत्तमः॥ ईश्वरे तदधीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च॥ प्रेममै
ऊ त्रीकृपोपेक्षा यः करो ति स मध्यमः॥ अर्च्चायामेव हरये पू जां यः श्रद्धयेहते॥ न त
द्भक्तेषु चान्येषु स भ क्तः प्राकृतः स्मृतः॥ गृहीत्वापीन्द्रियै रर्थान्यो न द्वेष्टि न हृष्यति॥
विष्णोर्म्मायामिदं पश्य न्स वै भागवतोत्तमः॥ देहेन्द्रियप्राणमनोधियां यो जन्माप्ययक्षुद्भ
यतर्षकृच्छ्रैः॥ संसारधर्म्मैरविमुह्यमानः स्मृत्या हरेर्भागवतप्रधानः॥ न कामकर्म्मबीजानान्दृ
श्यते यस्य संभवः॥ वासुदेवैकनिलयः स वै भागवतोत्तमः॥ न यस्य जन्मकर्म्मभ्यां न वर्णा

श्रमः॥ सुतंत्त द्वासना बीजेतु प्यां स्मृतिस्तदक्षयः॥ विरुद्धं ज्ञानमेवैकं म्मा य या भा सं तं तेन्वा॥
श्राह कार्द्धे र्य्यं या ख पेंयतत्सं वित्र॥ ह्निया फलं॥ वैतत्या द्धभि चारा च्च मा या नै वद्धा मात्म
निन्त्यामनोरथ खमुद्दत्या मृश्येप व्राम्यति॥ श जा॥ परस्य विक्षो रीशस्य मा
पिनामपि मोहिनी ॥ मायांवेदितुभिका मोभग वतो बुवं तु नः॥ नानुतप्ये
ग पिबन्युष्म द्वं चोह रिकयाम्हतं॥ संसार तापसन्त प्तोमर्त्यस्त तापभेषजं॥
श्च न रिद्धः॥ एभि ईतानिभूता त्मामहाभूतै म्महाभुजः॥ ससर्जो च्चाव चान्या दौ स्वमा
त्मा प्रसिद्ध ये॥ एवं सृष्टानि भूता नि प्रविष्टः पंचधातुभिः॥ एकधा दशधा त्मानं विभजन्जुष
ते गुणान्॥ गुणै र्गुणान्स भुंजान आत्म प्रद्योतितैः प्रभुः॥ मन्यमानइदं सृष्टमात्मान मिह रा

ब्रातो॥ कर्माणि कर्मणिः कुर्वन्त स निमित्तानि देहस्थः॥ तत्र कर्मफलं गत्वा भ्रमतीह सुखोत्त-
रे॥ इष्टं कर्मगतिं गत्वा कर्मबद्धो भवेद्धः प्रमाद॥ आश्रित संप्लवात्सर्गः प्रलयावत्सु-
ते वराः॥ आत्मप्र व आसन्ने व्यक्ताद्व्यक्तगुणात्मकं॥ अनादिनिधनः कालो ह्यव्य-
क्तां पापकर्षति॥ रात वर्षमनावृष्टिर्भविष्यत्युत्तरबाण र्भवि॥ तत्र कालोपचितो
ष्टौ रुद्रो कौ स्त्रीष्प्रज फिष्यति॥ पातालतलमारभ्य सं वर्षणाम्बुसानलः॥
दहत्यूर्द्धं शिखोविष्व ग्वर्द्धते वायुनेरितः॥ संवर्तकोमेघगणो वर्षति स्मशतं समाः
धाराभिर्हस्तिहस्ताभिर्लीयते सलिले विराट॥ ततो विराजमुत्सृज्य वैराजः पुरुषो नृप॥ अव्यक्तं वि-
विशते सूक्ष्मं निरिन्धनडवानलः॥ वायुनाहृतगन्धाम्भस्सलिलत्वाय कल्पते॥ सलिलं तत्तत्तारसं

ज्याति च्छायो पकल्प्यते ॥ हतद्रूपं श्रुतमसावायौ ज्योतिः प्रलीयते ॥ दत्तस्पर्शो वकारो नभासुर्भ
मसि लीयते ॥ कालात्मनाद्दतगुणा ब्रह्म आत्मनि लीयते ॥ इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सह वैकारि
कैश्चप ॥ प्रविशन्ति ह्यहंकारं स्वगुणैरहमात्मनि ॥ एषा माया भगवतः सर्गस्थि
त्यन्तकारिणी ॥ त्रिविधा त्रिवर्णा तस्माभिः किं श्रयस्तो तुमिच्छसि ॥ राजा ॥ पर्यैतामै
खरीम्माया दुस्तरामकृतात्मभिः ॥ तरंत्यंजस्यूलधियो महर्षि इद मुच्य
तां ॥ प्रबुद्धः ॥ कर्मण्यारभमाणानां दुःखहत्यै सुखाय च ॥ परस्यत्याकविपर्यासं मि
थुनीचारिणां नृणां ॥ नित्यार्तिदेन वित्तेन दुर्लभेनात्म मृत्युना ॥ गृहापत्याप्त पशुभिः का
प्रीतिः साधितैश्चलैः ॥ एवं लोकं परं विद्यान्नस्वरं कर्मनिर्मितं ॥ सतुल्यातिशयध्वंसं

यथा मण्डलवर्त्तिनां॥ तस्मात्प्रपद्येत गुरुं जिज्ञासुः श्रेय उत्तमं॥ शाब्दे परे च निस्नातं ब्रह्मण्यु
पशमाश्रयं॥ तत्र भागवतान्धर्म्मान् शिक्षेद् गुर्वात्मदैवतः॥ अमाययानुवृत्या येस्तुष्ये
द्दात्मात्मदो हरिः॥ स र्व्वतो मनसोसंगमादौ संगं च साधुषु॥ दयां मैत्रीं प्रश्रयं
च भूतेष्वद्धा यथोचि तं॥ सत्यं शौचं तितिक्षां मौनं स्वाध्यायमार्ज्जवं॥ ब्र
ह्मचर्य्यमहिंसां च स मत्वं द्वन्द्वसंज्ञयोः॥ सर्व्वत्रात्मे श्वरान्वीक्षां कैवल्य
मनिकेततां॥ विवि क्तं चीरं वसनं सन्तोषो येन केन चित्॥ श्रद्धा भागवते शा
स्त्रे निन्दान्यत्र चैव हि॥ मनोवाक्कर्म्मदण्डं च सत्यं शमदमावपि॥ श्रवणं कीर्त्त
नं ध्यानं हरेरद्भुतकर्म्मणः॥ जन्मकर्म्मगुणानां च तदर्थेखिलचेष्टितं॥ इष्टं द

तं यो दन्तैः स्वतैः पद्मनाभ प्रपन्नः॥ दारान्सुतान्गृहान्प्राणान्यत्परस्मै निवेदयेत॥
तावं कृष्णात्मनां नेपेषु मनुष्येषु च सौहृदं॥ परिचर्या चोभयत्र महत्सु नृषु साधुषु॥ परस्प
रानुकथनं पावनं भ गवद्यशः॥ मिथो रतिर्मिथस्तुष्टिर्निवृत्तिर्मिथ आत्मनः॥ स्मरन्त
स्मारयन्तश्च मिथो घौ घहरं हरिं॥ भक्त्या संजातया भक्त्या बि भ्रत्युत्पुलकां तनुं॥ क्वचि
द्रुदन्त्यच्युतचिन्तया क्वचिद्धसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिकाः॥ नृत्यन्ति गायन्त्यनुशील
यन्त्यजं भवन्ति तूष्णीं परमेत्य निर्वृताः॥ इति भागवतान्धर्मान् शिक्षन्भक्त्या तदुत्थया॥ नारा
यणपरो मायामञ्जस्तरति दुस्तरां॥ राजा॥ नारायणाभिधानस्य ब्रह्मणः परमात्मनः॥
निष्ठामर्हथ नो वक्तुं यूयं हि ब्रह्मवित्तमाः॥ पिप्पलायनः॥ स्थित्युद्भवप्रल

पहेतुरहेतुरस्य पखम्नजागरसुषुप्तिपुसतबहिस्व॥देहेद्वियासुदद यासुरेचतं
तियेन:संजीवितानितमवेहिपरनुरेन्दु॥नेनम्मनोषिरातिवाळतचद्धुरात्माप्राणो
द्वियानिणचय.प्र ननमर्चिषस्वः॥राद्धोपिबोधकानिषेथतयात्मसूलमर्थीतामा
ह यद्वतेननिषेधस सिद्धिः॥सर्वरजस्तमइतिन्निहदे क मायेसुनम्महानहाम
तिप्रबदत्तिजीवं॥ज्ञा ज्ञानक्रियार्थफलद्रुपतयोस्त्ररा तिर्बद्धैवभातिसदसद्व
तयेःपरंयत्र॥नाम्ना जज्ञाननमरिष्यतिबैधतेसौनश्रीयतेसवनविद्युभिचारिणी
हि॥सर्वत्रराखदनपायुपलब्धिमात्रंप्राणोयधेद्विवबलेनविकल्पितस्त्व॥ॐ उडपुपेयि
पुतरूबुवनिसरिषतेपुप्राणोहिजीवमनुधाकतितचततञ॥राजेयपेद्वियगणोहमिवप

सु तेक ट स्थ भ्रा स य म्न ते त द नु स्मृ ति र्भिः॥ य द्वीज ना भ्र च र णो ष ण यो रु भ त्या चे तो म ला नि

वि ध मैं तिड णा क र्म्मि गा नि॥ त स्मिब वि रु द्ध ड प ल भ्य त त्या मि त त्वं सा क्षा द्य्य म न्र ह रा स्त्रीव

ट प्र का शः॥ वि दे हः ॥ क र्म्मि यो गं ब द त नः पु रु षो ये न सं स्कृ तः॥ वि ध ये हा रु का

र्म्मा णि ने ष र्म्य वि न्दते प रं॥ त वं प्र श्न म्र ष्वी ब्र पूर्व म पृ कं पि ठ र त्रि के॥ ना ब्रु व ब्रु

द्ध णः पु डा स्त्र व का र णा मु च्य तां॥ श्रा वि ठीं त्रः॥ क र्म्मि क र्म्मि वि क र्म्मे ति वे द वा दो न

लौ कि काः॥ वे द स्य चे स्व रा त्म त्वा त त्र मु द्य वि स र यः॥ प रा श्र वा दो वे दो यं बा ला ना म नु

शा स नं॥ क र्म्म मो क्षा य वा र्म्मी णि वि ध त्ते त्य ग द य था॥ ना चे रे द्य दि ते दो तां स्व य म ज्ञा नि ते द्वि यः॥

वि क र्म्मा णा द्य ध र्म्म णा म्र त्यों म्र —— त्यु मु पै ति सः॥ वे दो ता मे व कु र्वा णो नि सं गो र्पि त म।

ह रो नै क र्मा लभ ते सिद्धिं रो च ना र्थिः फल श्रुतिः॥ य त्रा रु द द्र य गं न्यो हिं अ ही षु र वा भि नः॥
व धि नो प च रे द्दे व ता वो तो न च के रा वं॥ मख्या नु ग्र ह श्री चा र्या तैं न सो ब र्धि ता ग मः॥ म
हा पु रु ष म न्य वैन्यू   तोभि म त या भि नहा रु द्धः स म्प्रु ख व्या सी नः प्रा णा सं यम श्री
बा दि मे ॥ पं डि त्रु गो   ष्टु त न्या स ह ता र दो र्ह यें द्र रि॥   त्र वी दी द्र द्र यें चा पिप
पा न ख्यो प वा र कैः   द व्य क्षि त्या न भिं गा नि विं पा द्य प्रा द्य   चा स नं॥ पा द्या दी क्र पक
ष्या य सं क्षि द्या प्प स   मोहि तः॥ द द या दि हा त ब्या सो म्न ल मंत्रे ण चा वे यें तु॥ सौ गो पी गाँ स्न पा
र्ध दां ता भा ष्मा तिं ख मं श्र तः॥ पा द्या र्थी च म ना या द्ये स्ना न वा सो वि भ्र ष णोः॥ गंध मा ल्या दा तै स्न विर्द्ध
प टी पा प हा र कैः॥ सांगी सं पू ज्य वि धि व त्स त्त्वै स्क स्वा न मे द्धा रिं॥ न्या त्मा न द्वन्द्व यें ध्या यन्

र्त्तिं सं पूजयेद्ध हरेः॥ दोषा माधा पति रसि स्वधा भ्युद्धास्य सत्व क्षतं॥ एवमग्यु कीर्त्तौ यादाव र्वि
पवद्दद्ये चयः॥ पर्वे स्वर्ण स्वमानमविराभ्युच्यते हि सः॥ ३ इति श्रीभागवते महापुराणे का
द रास्कंधे त्रितीयो ध्यायः॥ ३॥ राजा॥ यानि यानीह कर्म्माणि यै यैः स्वछंद जन्मभिः॥
म चक्रे करोति कर्त्ता वा हरिस्तानि ब्रुवन्तु नः॥ दुमिलः॥ यो वा अनन्तस्य गुणान
नन्ता ननु क्रमिष्य न्स तु बालबुद्धिः॥ रजांसि भूमेर्गु णा यः कथंचित्त कालेन
नैवाखिल शक्तिधाम्न. ॥ भूतैर्यदा पंचभिरात्मसृष्टैः पुरं विराजं विरचय्य तस्मिन॥
(७) स्वांशेन विष्टः पुरुषाभिधानमवाप नारायण आदिदेवः॥ यत्काय एष भुवनत्रय सन्निवेशो
यस्येंद्रियैस्तनुभृतामुभयेंद्रियाणि॥ ज्ञानं स्वतः श्वसनतो बलमोज ईहा सत्वादिभि

स्थिति लयो लेव ल्यादिः क की ॥ आ दा व क्ष क त धृ तिं रज सास्य स गैवि घ्युस्थितौ क्र तु पतिर्दि

जधृ र्मि से तुः॥ रुद्रो प्य यापत म सा पु रु षु स्य आ द्य ऽ त्पुभ वस्थिति ल यास्तत तं प्रजासु।

धर्मस्य दक्ष दुहित प्यजनि षृ मू र्त्यां ना रा य णो न र स खः पु रु षः प्र शा न्तः॥ नै क्र

र्म्यं ल क्ष णा भ्रु वो च च या र ध र्म्मे यो द्या पि चा स्त त्रा षिव र्यं नि षे वि तां ध्रिः॥ ऽ द्रो

विरी क्ष म म धा मंद्रि घृ द्व ती जि का म न्य पु क्ष स गं णा सब द द्धु पा ख्यां ग त्वा स्त रा ग णो

द स नं त सु म न्द वाते स्त्री प्र क्ष णो षु भि र वि द्या द तन्म हि शः॥ विशा य श क्रा स्ता त म क्र म मा

द टे वः प्रा हं प्र ह स्य ग त विस्मय ए ज मा ना व॥ मा मै वि भौ म द न मा स्यज दे व व ध्वो व्यल्लीत नो व नि

न द न्व भि मे क रु धी॥ ६ सं बु व त्यं रु भ दे न र दे व दे वें स ब्री ल न म रि र सः स द्द णा त मू

तुः॥ मै ता द्व भो त्व वि प रेः वि ह्य ति र्वि चि ञा ख्वा रां म धी र नि का रा न त पादपत्मो। वां सेव तां स्तु र ह्यता व
ह वो त रा या स्वो ग्रो षि लंह्य पर मं ब ज ता प द बें।। नो व्य स्यब हिं षि ब लिं द द तः स्व भा गं ध ते प दं त्व म (व
ङि ता य दि वि घ्व मा र्द्वी त्सु ढ़ त्र ढ़ छि का ल ७५ (ता मा रु त ग्रै ह्यु रो क्ष्या न स्मा न पा र ज ल धी व
म ति ती यि के वि त॥ ग्रो धस्य याति वि फु ल स्यव रां प दे गो मिञ्ज ति दु स्व र त प सहृपे
न स्तु ज ति॥ दृ ति पृ गृ ता तां म षां स्त्रि यो त्य त्मु त द शा नाः॥ द रां या मा स्त्र २५ स्तु षा म ह्व
वें कुवं तीर्वि कुः॥ से दे वा नु च रा ह्व ष्वा ख य थी रि क रू पिं (ाः॥ गी थे न मृ मृ हु स्तासोंद्र पृ
दा यी ह त स्नि यः॥ ता ना ह दे व दें वे राः प्र ए ता वि ह स ज्ञि व॥ श्रा सा मे क त मा हृ ङ छ्रु स व (ा
ढ़ि स्व भा ल प ता॥ श्रो मि त्या दे रा मा दा य न त्वा तं सु र वं ह्नि नः॥ ड र्व दी म स र ये षां पु र स्मृ

त्पदिवंयपुः॥इन्द्राया नम्य सदसिस्पतीन्द्रदिवौकसां॥उचुःश्रीरायणाब लैराक्रस्तन्ना सावस्मितः॥
हे ससखन्त प्यवदद च्युतश्रात्मयेगीदत्तः कुमार ज्ञ षभो भगवाक्षिता नः॥विश्वस्त्रिवाय
जगती कलयावत्तो पीसे नादृतामक श्रिदास्तुतयोहयास्य॥७५प्रोप्य येमनुरत्नो
पुधयस्वमात्स्यमो डे हतोदितिव ५ द्ध रतीभसः दम॥ कोमे धृतो द्रिरम्रतोव्म
पनेखक्षुणाहाप्र पन्नभिमराजमपुञ्चदातीं समुन्नु बुतोक्षिपतिताक्रमाणा
त्रुपीस्वराक्त सवृच वधतस्तमसः प्राविष्टं॥ देवस्त्रियोस्तरव्य हैपिडताण्य नापात्रधे
स्तरेद्रुमभयायसताश्च्रसिं हे॥ देवासुरेयुधिच दैत्यपतिं स्तराधैगताता रे षुभुवनान्यदधात
कालाग्निः॥शूता यवामनइमा महराखब लेः द्मांयाज्ञाकले नसमदादिते स्तुतेभ्यः॥नन्दनि

य भगवान्दास्यात्मानमप्यजः॥ सीनारदः॥ एवं सौनिमिना पृष्टा वसुदेव महत्तमाः॥ प्रतिपूज्या
ब्रुवन्प्रीत्या ससदस्यर्त्विजं नृपं॥ कविः॥ मन्येकुतश्चिद्भयमच्युतस्य पादांबुजोपासनमत्र
नित्यं॥ उद्विग्नबुद्धेर सदात्मभावाद्विश्वात्मना यत्र निवर्तते भीः॥ ये वै भगवता प्रो
कृ क्ता उपाया ह्यात्मलब्धये॥ अञ्जः पुंसामविदुषां विद्धि भागवतान्हि तान्॥ याना
स्थाय नरो राजन्न प्रमाद्येत कर्हिचित्॥ धावन्निमील्य वा नेत्रे न स्खलेन्न पते
दिह॥ कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावः॥ करोति यद्यत्सक
लं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्तत्॥ भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्यादीशादपेतस्य विपर्य
योस्मृतिः॥ तन्माययातो बुध आभजेत्तं भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा॥ अविद्यमानोप्य

प्रभाति हि द्वयोर्ध्यातुर्धिया स्वप्नमनोरथौ यथा॥ तत्कर्मसंकल्पविकल्पकं मनो बुधो नि
रुन्ध्यादभयं ततः स्यात्॥ शृण्वन् सुभद्राणि रथाङ्गपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि
लोके॥ गीतानि नामानि तदर्थकानि गायन् विलज्जो विचरेदसंगः॥ एवंव्रतः स्वप्रिय
नामकीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः॥ हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मा
दवन्नृत्यति लोकबाह्यः॥ खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो
द्रुमादीन्॥ सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः॥ भक्तिः परेशा
नुभवो विरक्तिरन्यत्र चैष त्रिक एककालः॥ प्रपद्यमानस्य यथाश्नतः स्युस्तुष्टिः पुष्टिः क्षुदपा
योऽनुघासं॥ इत्यच्युताङ्घ्रिं भजतोऽनुवृत्त्या भक्तिर्विरक्तिर्भगवत्प्रबोधः॥ भवन्ति वै भागवतस्य रा

ज्ञापयिष्याध रद्दिगगवाँअवनान्निकामं॥ त एकदा निमेस्सत्रमुपाजग्मुर्यदृच्छया॥ वितायमान
मृषिभिरजनाभे महात्मनः॥ तान्दृष्ट्वा देवसंकाशान्महाभागवतान्नृप॥ यजमानोग्नयो
विप्रास्सर्व एवोपतस्थिरे॥ विदेहस्तानभिप्रेत्य नारायणपरायणान्॥ प्रीतस्संपूजयां
चक्रे थासनस्थान्यथार्हतः॥ तान्रोचमानान्स्वरुचाब्रह्मपुत्रोपमान्नव॥ पप्र
च्छ परमप्रीतः प्रश्रयावनतो नृपः॥ विदेहः॥ मन्ये भगवतस्साक्षात्पार्षदान्वो
मधुद्विषः॥ विष्णोर्भूतानि लोकानां पावनाय चरन्ति हि॥ दुर्लभो मानुषो देहो देहिनां
क्षणभंगुरः॥ तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुण्ठप्रियदर्शनं॥ अथ आत्यन्तिकं क्षेमं पृच्छामो भवतोनघाः॥
संसारेस्मिन्क्षणार्द्धोपि सत्संगः शेवधिर्नृणां॥ धर्मान्भागवतान्ब्रूत यदि नः श्रुतये क्षमं॥ यैः प्रपन्न

...वक्षयाः॥ अनन्तशीर्षसत्तराः तत्तस्यासीत् बद्धा पारगं॥ तेषां वै भरतो ज्येष्ठो नारायण
परायणः॥ विख्यातं वर्षमेतद्धि नाम्ना भारतमुत्तमं॥ सभुक्तभोगास्त्यक्ते माण्डिगं तस्य प
श्री साहरिः॥ डपासीन्नस्त त्पद्वी लेभे वै जन्मभिस्त्रिभिः॥ तेषां चक्रवनवद्धीपपतयोस्य
न्य समप्रतः॥ कर्मतं त पुण्य रएकारीति द्विजातयः॥ नवाभव ब्रह्मधाभागमनुयोद्धू
ई मस्थिनः॥ समणा वातं रशनाश्रामविद्याविशारदाः॥ कविहरिरन्तरि
क्षः प्रबुद्धः पिप्पलायन नः श्राविहोत्रो पद्रुमिलश्चमस सः करभाजनः॥ एते
(6) वै भगवद्रूपं विश्वं सदसदात्मनः आत्मनाव्यतिरेकेण पश्यन्तो व्यचरन्महीं॥ अव्याहतेष्टग
तयः सुरसिद्धसाध्यगन्धर्वयक्षनरकिन्नरनागलोकान्॥ मुक्ताश्चरन्ति मुनिचारणभूत

हितोहं वमायया॥ यथाविचित्रव्यसनाभवेद्भिर्विश्वतोभयात्॥ मुच्येम ह्यंजसैवाद्धा तथा
न स्शाधि सुव्रत॥ श्रीशुकः॥ राजन्नेवं कृतप्रश्नो वसुदेवेन धीमता॥ प्रीतस्तमाह देवर्षिर्हरे
स्संस्मारितो गुणैः॥ ना रदः॥ सम्यगेतद्व्यवसितं भवता सात्वतर्षभ॥ यत्पृच्छसे
भागवतान्धर्म्मांस्त्वं विश्व भावनान्॥ श्रुतोनुपठितोध्यात आदृतो वानुमोदितः॥
सद्यः पुनाति सद्धर्मो देवविश्वद्रुहोपि हि त्वया परम कल्याणः पुण्यश्रवण
कीर्त्तनः॥ स्मारितो भगवानद्य देवो नारायणो मम॥ अत्राप्युदाहरंतीममिति
हासं पुरातनं॥ आर्षभाणां च संवादं विदेहस्य महात्मनः॥ प्रियव्रतो नाम सुतो मनोः स्वा
यंभुवस्य यः॥ तस्याग्नीध्रस्ततो नाभिरृषभस्तत्सुतः स्मृतः॥ तमाहुर्वासुदेवांशं मोक्षध

गु ण्मा या ह्ला र व त्यां कु रू द्व ह ॥ श्र मा त्सी ब्ना र दो भी द्यां क्रु य ट र्ल न ला ल स ः॥ को लु

रा जन्निद्धि य वा ब्ज कु ह्र च र ता बु जं ॥ न भ जे त्स र्व तो मृ त्यु रु पा स्य म म रो त मे ॥ त मे क

दा तु दे व र्भि व सु दे वो ग ट हा ग तां ॥ श्र र्द्धि तं सु ख मा सी न भ भि वा द्ये ट म ब वी र

भ ग व न भू व तो या न्ना स्व स्त ये स र्वे दे हि नी ॥ कृ प ण्णा नां य था पि वो रु त म द्यो

क व र्मि नां ॥ भ ता नां दे व च रि तं द्धु ख्वा य च स खा य च ॥ स स्वा ये व हि सा धू वां

वा द्र रा म च्यु तो त्म नां ॥ भ ज न्नि ये य था दे वा द्धे वा श्र पि त पै व ता र ॥ का पे व क र्म सं दि

वा स्रा ध वो दी न व त्स ना ः ॥ ब द्धं स्त था पि ए का मा च भा व भ ग व ता स्त व ॥ या त्कु वा स्र द्ध या म त्सी

मु च्य ते स र्व तो भ या त ॥ श्र हं कि न प्र रा न तां पु जा र्थे भ क्ति मु क्ति दं ॥ श्र पु ज य न्न मो दा य मो

रज्ञ आवेदयाञ्चक्रुस्सर्वयादवसन्निधौ॥ञ्ज्ञात्वामोघं विप्रशापं दृष्ट्वा च मुसलं नृप॥विस्मिता
भयसंत्रस्ता बभूवुर्द्वारकौकसः॥ संचूर्णयित्वा मुसलं यदुराजस्स आहुकः॥समुद्र
सलिले प्रास्यल्लोहं चास्यावशेषितं॥कश्चिन्मत्स्योग्रसील्लोहं चूर्णानि त
रलैः॥उह्यमानानि वेलायां लग्नान्यासन्किलैरकाः॥ मत्स्यो गृहीतो मत्स्य
घ्नैर्जालेनान्यैस्सहार्णवे॥तस्योदरगतं लोहं स शल्ये लुब्धको करोत्॥भगवान्ज्ञा
तसर्वार्थ ईश्वरोपि तदन्यथा॥कर्तुं नैच्छद्विप्रशापं कालरूप्यन्वमोदत॥ ॥
इति श्रीभागवते महापुराणे एकादशस्कन्धे प्रथमोध्यायः॥ ॥श्रीशुकः॥गोविंदभुजगु

सततः काल्ढोद्धवीराष्ट्र मुरं बिराः॥ कार्यप वामदेवोत्रि वसिष्ठोनारदोदयः॥ ओड
तत्त्रानुपश्च अकुमारयदुनन्दनाः॥ उपसंगृह्य पप्रच्छुरविनीताविजीतवत्॥ तेवेषाय
६७ ता स्त्रीचे षे सौवंजाँ बवतीसुतं॥ एषा प्रकृतिर्वोविपा थ्यहर्वे स्थ्यसितेनु ता॥
न पपुंविनउतीयुप्मा वप्रब्रूतामोवद शंनाः॥ प्रसोष्य तीपुत्र कामाकिंस्विरं
जनयिष्यति॥ एवं प्रलब्धामुनयस्सांब्रूचुः कुपितान्न प॥ जनयिष्यति वे
मुसलं कुलना शनं॥ सुतातेतीवसंत्रस्ताविमुच्यसहसोदरं॥ सांब
१ दहसंस्त्रस्मिन्मुसलं तदयस्मयं॥ किंकृतम्मन्दभाग्यैर्नः किंवदिष्यंति नो जनाः॥ इतिव
द्वलितागेहमादायमुसलं ययुः॥ तं च्योपनीयसदसि परिम्लानमुख्सियः॥

निभुकालोचनक्षुएँ॥जीर्णेस्तारमरताँचितँपदैस्तानीदताँक्रियाग॥ग्वाकेध [illegible]
वितत्यह्युजसाजुकौ॥तमोजयातरिषुत्तीत्यगास्तँपुदमीसरः॥यजा॥व्रहाएपावँ१द्
न्याजाञित्यैद्टढौप सेविजाँ॥विपुशापःकथमश्हृसोजोह्मभचेतसो॥यु
ञिभन्नस्तवैशापोया दशोदिगसतम॥कायमेका त्मगौगेदएततसाबँ
वदखमे॥सीसुकः ॥बिभ्रद्धप्रःसकलखन्दरसञि देशकम्मोचरत्नभ्र
विखमँगुलमात्तका मः॥ग्रास्यायथामरममाएउदारवीर्त्तिस्तँहर्तुमैकतर्धु
लस्थितत्तत्यशेषःकाम्मोणिपापनिवहानिस्तमँगलानिमायञ्जगवालिमलापहराणि
कत्ता॥कानात्मनालिनरतायद्देवगोहेपिळारवँसमगमभ्रुनयोनिसप्राःगवि स्वाँजे

स्वात्य सारस्वत्य रूप मत्य द्धुतं हरेः॥ विस्मयो में महाबानन्द ध्यामि वपुनः पुनः॥७७॥ यन्न
यो गे स्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्द्धरः॥ तत्र सीर्व्विजयो भूति र्ध्रुवा नीति र्म्मति र्म्मम॥
७८॥ इति श्रीभगव [illegible] द्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जु
न संवादे मोक्ष [illegible] योगो नाम अष्टादशोध्यायः॥ [illegible] रामाय नमो नमः
त्र परिचितो त्वा [illegible] लेख्य व पल [illegible] पोयद्यदर्शितं [illegible] लिखितं॥ नत्तका
तांजनिधे मातः दाताव्य मखिन वा ग नि पे॥ श्रीकृष्णाय नमः शुभमस्तु॥ रामरामरामः

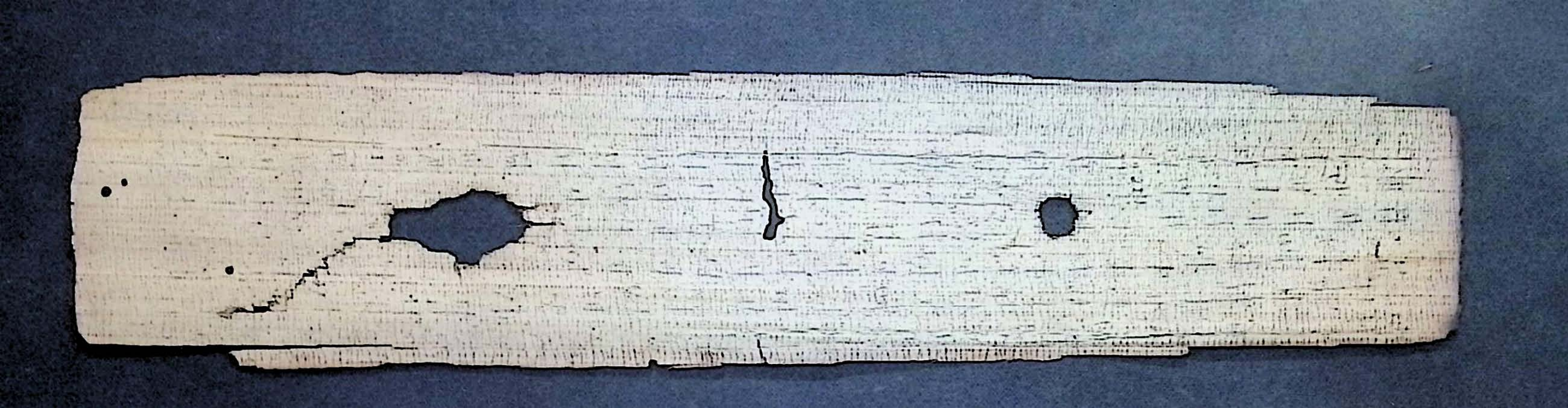

यो न रं१॥ सोपि मुक्तः शुभांल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणां॥७१॥ कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्र
॥ चेतसा कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनंजय॥७२॥ अर्जुन उवाच॥ नष्टो मोहः स्मृ
तिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत॥ स्थितोस्मि गतसंदेहः करिष्ये वचनं तव॥
७३॥ संजय उवाच॥ इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः॥ संवादमि
मम श्रौषमद्भुतं रोमहर्षणं॥७४॥ व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्य
महं परं॥ योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयं॥७५॥ राजन्संस्मृ
त्य संस्मृत्य संवादमिमम मद्भुतं॥ केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः॥७६॥ तच्च सं

भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ॥ मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥६५॥ सर्व
धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६॥
इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन ॥ न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसू
५ यति ॥६७॥ य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति ॥ भक्तिं मयि परां कृ
त्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥६८॥ न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ॥
6 भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥६९॥ अध्येष्यते च य इदं धर्म्यं संवादमावयोः
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥७०॥ श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि

गमि मन्यसे ॥ मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥ ५९ ॥ स्वभावजेन कौ
न्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ॥ कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोपि तत् ॥
६० ॥ ईश्वरः स र्वभूतानां हृद्देशेर्जुन तिष्ठति ॥ भ्रामयन्सर्वभूतानि
यंत्रारूढानि मा यया ॥ ६१ ॥ तमेव शरणं गच्छ स र्वभावेन भारत ॥
तत्प्रसादात्परांशा न्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतं ॥ ६२ ॥ इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गु
ह्यतरं मया ॥ विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६३ ॥ सर्वगुह्यतमं
भूयः शृणु मे परमं वचः ॥ इष्टोसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितं ॥ ६४ ॥ मन्मना

मुच्य निर्म्ममः शांतो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५३॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ॥
समः सर्व्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते परां ॥५४॥ भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि त
त्वतः ॥ ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरं ॥५५॥ सर्व्वकर्म्माण्यपि स
५८ दा कुर्व्वाणो मद्व्यपाश्रयः ॥ मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययं ॥५६॥
चेतसा सर्व्वकर्म्माणि मयि संन्यस्य मत्परः ॥ बुद्धियोगमुपाश्रित्य
मच्चित्तः सततं भव ॥५७॥ मच्चित्तः सर्व्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि ॥ अ
थ चेत्त्वमहंकारान्न श्रोष्यसि विनंक्ष्यसि ॥५८॥ यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य

नुष्ठितात्॥ स्वभावनियतं कर्म्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषं॥४७॥ सहजं कर्म कौंतेय सदोषम
पि न त्यजेत्॥ सर्वारंभा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः॥४८॥ असक्तबुद्धिः सर्वत्र जिता
त्मा विगतस्पृहः। नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां संन्यासेनाधिगच्छति॥४९॥ सिद्धिं प्रा
प्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे॥ समासेनैव कौंतेय निष्ठा ज्ञानस्य या
परा॥५०॥ बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च॥ शब्दादीन्विष
यांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च॥५१॥ विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः ध्यानयोग
परो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥५२॥ अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहं॥ वि

तपः॥ कर्म्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः॥४१॥ शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरा
र्जवमेव च॥ ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म्म स्वभावजं॥४२॥ शौर्य्यं तेजो धृतिर्द्दा
क्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनं॥ दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म्म स्वभावजं॥४३॥ कृ
षिगोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यं कर्म्म स्वभावजं॥ परिचर्य्यात्मकं कर्म्म शूद्रस्या
पि स्वभावजं॥४४॥ स्वे स्वे कर्म्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः॥ स्वकर्म्मनि
रतः सिद्धिं यथा विंदति तच्छृणु॥४५॥ यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्व्वमिदं ततं॥ स्व
कर्म्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विंदति मानवः॥४६॥ श्रेयान्स्वधर्म्मो विगुणः परधर्म्मात्स्व

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च ॥ न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी ॥३५॥ सु

खं त्विदानीं त्रिविधं शृणु मे भरतर्षभ ॥ अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति ॥३६॥

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमं ॥ तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसा

दजं ॥३७॥ विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमं ॥ परिणामे विषमि

व तत्सुखं राजसं स्मृतं ॥३८॥ यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः ॥ निद्रा

लस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतं ॥३९॥ न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ॥ सत्त्वं प्रकृति

जैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः ॥४०॥ ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परं

धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं शृणु ॥ प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय ॥ २९ ॥
प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये ॥ बंधं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्विकी ॥ ३० ॥
यया धर्म्ममधर्म्मं च कार्यं चाकार्यमेव च ॥ अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ
५५ राजसी ॥ ३१ ॥ अधर्म्मं धर्म्ममिति या मन्यते तमसावृता ॥ सर्वार्थान्वि
परीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ तामसी ॥ ३२ ॥ धृत्या यया धारयते मनःप्राणें
द्रियक्रियाः ॥ योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्विकी ॥ ३३ ॥ यया तु धर्म्म
कामार्थान्धृत्या धारयते ऽर्जुन ॥ प्रसंगेन फलाकांक्षी धृतिः सा पार्थ राजसी ॥ ३४ ॥

सँगरहितमरागद्वेषतः कृतं ॥ अफलप्रेप्सुना कर्म्म य त्तत्सात्विकमुच्यते ॥२३॥ यत्तु
कामेप्सुना कर्म्म साहंकारेण वा पुनः ॥ क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतं ॥
२४॥ अनुबन्धं क्ष यं हिंसामनपेक्ष्य च पौरुषं ॥ मोहादारभ्यते कर्म्म यत्तत्ताम
सामुदाहृतं ॥२५ ॥ मुक्तसंगोनहंवादी धृत्युत्साह समन्वितः ॥ सिद्ध्यसि
द्ध्योर्न्निर्विकारः क र्त्ता सात्विक उच्यते ॥२६॥ रागी कर्म्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिं
सात्मकोऽशुचिः हर्षशोकान्वितः कर्त्ता राजसः परिकीर्त्तितः ॥२७॥ अयुक्तः प्राकृतः स्त
ब्धः शठो नैष्कृतिकोलसः ॥ विषादी दीर्घसूत्री च कर्त्ता तामस उच्यते ॥२८॥ बुद्धेर्भेदं

तुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्म्मतिः ॥१६॥ यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ॥ हत्वापि स
इमांल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥१७॥ ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्म्मचोदना ॥ करणांकर्म
कर्तेति त्रिविधः कर्म संग्रहः ॥१८॥ ज्ञानं कर्म्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः ॥ प्रोच्यते
५७ गुणसंख्याने यथा वच्छृणु तान्यपि ॥१९॥ सर्वभू तेषु येनैकं भावमव्य
यमीक्षते ॥ अविभ क्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्वि कं ॥२०॥ पृथक्त्वेन तु य
ज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ॥ वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसं ॥२१॥ यत्तु कृत्स्नव
देकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकं ॥ अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतं ॥२२॥ नियतं

त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥१०॥ न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्म्माण्यशेषतः
यस्तु कर्म्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥११॥ अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं क
र्म्मणः फलं ॥ भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्न्यासिनां क्वचित् ॥१२॥ पंचैतानि
महाबाहो कारणानि निबोध मे ॥ सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्व
कर्म्मणां ॥१३॥ अधिष्ठानं तथा कर्त्ता करणं च पृथग्विधं ॥ विविधाश्च पृ
थक्चेष्टा दैवं चैवात्र पंचमं ॥१४॥ शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म्म प्रारभते नरः ॥ न्याय्यं वा विप
रीतं वा पंचैते तस्य हेतवः ॥१५॥ तत्रैवं सति कर्त्तारमात्मानं केवलं तु यः ॥ पश्यत्यकृत

पु।। यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।। यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनी-
षिणां ।।५।। एतान्यपि तु कर्माणि संगं त्यक्त्वा फलानि च ।। कर्तव्यानीति मे पार्थ नि-
श्चितं मतमुत्तमं ।।६।। नियतस्य तु सन्यासः कर्मणो नोपपद्यते ।। मोहा-
५२ त्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ।।७।। दुःखमित्येव यत्क-
र्म कायक्लेशभयात्यजेत् ।। स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं ल-
भेत् ।।८।। कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेर्जुन ।। संगं त्यक्त्वा फलं चैव स त्या-
गः सात्विको मतः ।।९।। न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ।। त्यागी स

गवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभा
गयोगो नाम सप्तदशोध्यायः॥ अर्ज्जुन उवाच॥ संन्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छा
मि वेदितुं॥ त्याग स्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिसूदन॥१॥ श्रीभग
वानुवाच॥ काम्या नां कर्म्मणां न्यासं संन्यासं कव यो विदुः॥ सर्वकर्म्म
फलत्यागं प्राहु स्त्यागं विचक्षणाः॥२॥ त्याज्यं दो षवदित्येके कर्म्म
प्राहुर्म्मनीषिणः॥ यज्ञदानतपःकर्म्म न त्याज्यमिति चापरे॥३॥ निश्चयं शृ
णु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम॥ त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः संप्रकीर्त्तितः

ॐ नो रस दि ति जिः ई शो ब हा रा खि बि धः रम्म तः॥ बा ह्म शा स न वे दा श्च य ना स्वि हि ताः प्र रा॥
२६ न्त स्आ दो मि त्य दा दृ त्य प न दा न त पः कि याः॥ प्र व र्त यो वि धा नो नाः स त तं ब्र ह्म वा
दि नां॥२४॥ त दि त्य जु भि सं धा य फ लं य का त पः क्रि याः॥ दा न क्रि या श्च वि वि
५२ धाः क्रि य न्ते मो क्ष कां क्षि भिः॥२५॥ स द्भा वे सा धु भा वे च स दि त्ये त त्प्र यु ज्य
ते॥ प्र श स्ते कर्म णि त था स च्छ ब्दः पा र्थ यु ज्य ते॥२६॥ य ज्ञे त प सि दा ने च स्थि
तिः स दि ति चो च्य ते॥ क र्म चै व त द र्थी यं स दि त्ये वा भि धी य ते॥२७॥ अ श्र द्ध या हु तं द
त्तं त प स्त प्तं कृ तं च य त्॥ अ स दि त्यु च्य ते पा र्थ न च त त्प्रे त्य नो इ ह॥२८॥ इ ति श्री भ

ततंतपस्तत्रिविधन्नरैः॥ अफलाकांक्षिभिर्युक्तैः सात्विकं परिचक्षते॥१७॥ सत्कारमा
नपूजार्थंतपोदंभेन चैव यत्॥ क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवं॥१८
मूढग्राहेणात्म नो यत्पीडया क्रियते तपः॥ परस्योत्सादनार्थंवा त
त्तामसमुदाहृ तं॥१९॥ दातव्यमिति यद्दानंदी यतेनुपकारिणे॥
देशेकालेचपा त्रेच तद्दानं सात्विकं स्मृतं॥२०॥ ॥यत्तु प्रत्युपकारा
र्थंफलमुद्दिश्यवापुनः॥ दीयते च परिक्लिष्टं तद्राजसमुदाहृतं॥२१॥अदेश
कालेयद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते॥ असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतं॥२२

ष्टव्यमेवेति मनःसमाधाय स सात्विकः ॥११॥ अभिसंधाय तु फलं दंभार्थमपि
चैव यत् । इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसं ॥१२॥ विधिहीनमसृष्टान्नं मंत्र
हीनमदक्षिणं । श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥१३॥ देवद्विज
५१ गुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवं । ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उ
च्यते ॥१४॥ अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् । स्वाध्याया
भ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥१५॥ मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमा
त्मविनिग्रहः ॥ भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥१६॥ श्रद्धया परया

तप्यन्ते ये तपो जनाः॥ दंभाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः॥५॥ कर्शयंतः शरीरस्थं
भूतग्राममचेतसः॥ मां चैवान्तः शरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्॥६॥ आहारस्त्वपि सर्व
स्य त्रिविधो भवति प्रि यः॥ यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु॥७॥ आयुः सत्वबला
रोग्यसुखप्रीतिविव र्द्धनाः॥ रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आ हाराः सात्विकप्रियाः॥ ८
कट्वम्ललवणात्यु ष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ॥ आहारा राजसस्ये
ष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥९॥ यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्॥ उच्छिष्ट
मपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियं॥१०॥ अफलाकांक्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते

र्मकर्तुमिहार्हसि ॥२५॥ इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्री
कृष्णार्जुनसंवादे दैवासुरसंपद्विभागयोगो नाम षोडशोऽध्यायः ॥ अर्जुन उवाच ॥
ये शास्त्रविधिमु त्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ॥ तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो
५ रजस्तमः ॥१॥ श्री भगवानुवाच ॥ त्रिविधा भवति श्र द्धा देहिनां सा स्वभावजा
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु ॥२॥ सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्र
द्धा भवति भारत ॥ श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥३॥ यजन्ते सात्त्विका देवान्य
क्षरक्षांसि राजसाः ॥ प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥४॥ अशास्त्रविहितं घोरं

।२॥ तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्॥ क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव
योनिषु॥१९॥ आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि॥ मामप्राप्यैव कौंतेय
ततो यान्त्यधमां गतिं॥२०॥ त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः॥ का
मः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्॥२१॥ एतैर्विमुक्तः कौंतेय
तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः॥ आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिं॥
२२॥ यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः॥ न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न प
रां गतिं॥२३॥ तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ॥ ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं क

इदमद्यमपालब्धमिं प्राश्येमनोरथं ।। इदमस्तीदमपिमभुविष्यातिपुनर्द्धनं ।।
१३ ।। असौमयाहतःशत्रुर्हनिष्येचापरानपि ईश्वरोहमहंभोगीसिद्धोहंबलवा
न्सुखी ।। १४ ।। आ ढ्योभिजनवानस्मिकोन्योस्तिसदृशोमया ।। यक्ष्येदास्या
मिमोदिष्यऽत्य ज्ञानविमोहिताः ।। १५ ।। अने कचित्तविभ्रान्तामो
हजालसमावृता ः ।। प्रसक्ताःकामभोगेषुपत्त न्तिनरकेऽशुचौ ।। १६ ।।
आत्मसँभावितास्तब्धाधनमानमदान्विताः ।। यजन्तेनामयज्ञैस्तेदंभेनाविधिपूर्वकं ।। १७ ।।
अहंकारंबलंदर्पंकामंक्रोधंचसंश्रिताः ।। मामात्मपरदेहेषुप्रद्विषन्तोभ्यसूयकाः ।।

वी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ॥ मा शुचः संपदं दैवीमभिजातोसि पांडव ॥५॥ द्वौ भूत
सर्गौ लोकेस्मिन्दैव आसुर एव च ॥ दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥६॥ प्रवृत्तिं च
निवृत्तिं च जना न वि दुरासुराः ॥ न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥७॥
असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरं ॥ अपरस्प रसंभूतं किमन्यत्काम
हैतुकं ॥८॥ एतां दृष्टि मवष्टभ्य नष्टात्मानोल्पबुद्धयः ॥ प्रभ वंत्युग्रकर्माणः क्षयाय
जगतोहिताः ॥ ९ ॥ काममाश्रित्य दुःपूरं दंभमानमदा[न्वि]ताः ॥ मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहा
न्प्रवर्तंते शुचिव्रताः ॥१०॥ चिंतामपरिमेयां च प्रलयांतामुपाश्रिताः ॥ कामोपभोगपरमा एतावदिति
निश्चिताः ॥११॥ आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ॥ ईहंते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचया ॥१२॥

सर्वभावेन भारत ॥१९॥ इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ॥ एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्य
श्च भारत ॥२०॥ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे
पुरुषोत्तमयोगो नाम पंचदशोध्यायः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयो
गव्यवस्थितिः ॥ दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवं ॥१॥ अहिंसा सत्यम-
क्रोधस्त्यागः शांतिरपैशुनं ॥ दया भूतेष्वलोलत्वं मार्दवं ह्रीरचापलं ॥
२॥ तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ॥ भवंति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥
३॥ दंभो दर्पोभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ॥ अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीं ॥४॥ दै

धीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥१३॥ अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ॥ प्राणापान

समायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधं ॥१४॥ सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं

च ॥ वेदैश्च सर्वैरह मेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहं ॥१५॥ द्वाविमौ पुरु

षौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ॥ क्षरः सर्वाणि भूता नि कूटस्थोऽक्षर उच्य

ते ॥१६॥ उत्तमः पुरु षस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ॥ यो लोकत्रयमाविश्य

बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥ यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ॥ अतोऽस्मि लोके वे

दे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥ यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमं ॥ स सर्वविद्भजति मां

पंतत् ॥५॥ न तद्भासयते सू[र्यो] न शशांको न पावकः । यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमम्म
मा ॥६॥ ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः । मनःषष्ठानींद्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति
॥७॥ शरीरं यदवाप्नो ति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः । गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गंधानिवा
शयात् ॥८॥ श्रोत्रं चक्षु स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च । अधिष्ठाय मनश्चायं
विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥ उत्क्रामंतं स्थितं वापि भुंजानं वा गुणान्वितं । विमूढा
नानुपश्यंति पश्यं ति ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥ यतंतो योगिनश्चैनं पश्यंत्यात्मन्यवस्थितं । य
तंतोप्यकृतात्मानो नैनं पश्यंत्यचेतसः ॥११॥ यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेखिलं । यच्चं
द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकं ॥१२॥ गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा । पुष्णामि चौ

यो [illegible] शा हा स्मा र्जु न सं वा दे गु रा त्र प वि भा गे [illegible] च तु द शा ध्या यः [illegible] श्री भ ग वा नु वा

ऊ [illegible] मू ल [illegible] धः शा ख म स त्थं प्रा हु र व्य यं ॥ [illegible] छं [illegible] य स्य प र्णा नि य स्तं वे [illegible] स वे द वि त् ॥ १ ॥

[illegible] सु ष्टं वं प्र सृ ता स्त [illegible] स्य शा खा गु [illegible] प्र वृ [illegible] द्धा वि ष य प्र वा लाः ॥ अ ध स्च मू ला न्य नु

त [illegible] नि बा नि नु बं [illegible] धी नि [illegible] म नु ष्य [illegible] लो के ॥ [illegible] न त्रू प म

ह त [illegible] प ल भ्य ते ना [illegible] न्तो न चा दि र्न च सं प्र ति ष्ठा ॥ अ स [illegible] मे नं सु वि रू ढ मू ल म स

[illegible] शा स्त्रे ढे न छि [illegible] त्वा ॥ ३ ॥ त तः प द न्त त्प रि मा र्गि त व्य [illegible] स्मि न्ग ता न नि [illegible] र्त न्ति भू

यः ॥ त मे व चा द्यं पु रु षं प्र प द्ये य तः प्र वृ त्तिः प्र सृ ता पु रा णी ॥ ४ ॥ नि र्मा न मो हा जि त सं ग दो

षा अ ध्या त्म नि त्या वि नि वृ त्त का मा ः ॥ द्व न्द्वै र्वि मु क्ताः सु ख दुः ख सं ज्ञै र्ग च्छ न्त्य मू ढाः प द म व्य

नेतानतीतो भवति प्रभो । किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥ २१ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्र
काशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ॥ न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति ॥ २२ ॥ उदासीन
वदासी[illegible]यो वतिष्ठ [illegible] ति नें गुणैर्यो न विचाल्यते ॥ गुणा वर्तन्त इत्येवं यो वतिष्ठति [illegible]
२३ ॥ सम[illegible]दुःखसुखः [illegible] स्वस्थः समलोष्टाश्मकांचनः ॥ तुल्य[illegible] प्रियाप्रियो धीरस्तुल्य
निन्दात्मसंस्तुतिः २४ [illegible] मानापमान[illegible]योस्तुल्यस्तुल्यो [illegible] मित्रारिपक्षयो ॥ स
र्वारम्भपरित्यागी गुणा [illegible] तीतः स उच्यते ॥ २५ ॥ मां च यो व्यभिचारेण भक्तियोगेन से
स गु[illegible]णान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ २६ ॥ ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च
श[illegible]धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥ २७ ॥ इति श्री[illegible]भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद

तं ... ॥ रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसंगि ... जा ... त आपलीन स म ... सि ... ढयोनि प्र आय

कर्म ... ऽसुकृतस्याहुः सात्विकं निर्मलं फलं ... ज स क्ष फलं दुःखम ज्ञा नम म राः फलं

मं जायते ज्ञानं र ... ज सो लोभ ए. व च॥ प्र ... द मो हौ त म सो भ व तोऽज्ञान मे व च॥१७॥ ऊ

सत्व स्था मध्ये ... ति ष्ठन्ति राज साः॥ ज ... न्य गु णा वृ त ... स्था अधो ग च्छन्ति ताम सा

... ज्ञं गुणेभ्य ... ः क र्ता रं य दा द्र ष्टा ... नु प श्यति॥ ग ... णो भ्य श्च प रं वेत्ति मद्भा

... कति॥१८ ... गु णा ने ता न ती त्य त्री न्दे ही दे ह स मु द्भ वान्॥ जन्म मृत्यु ज रा दुः

... मृत म श्नु ते॥ २०॥ अर्जु न उ वा च॥ कै र्लिं गै स्त्री न्गु णा

विद्धिं भो ह नँ स र्व ढे हि वाँ '' प्र गा दा ल स्यनि डामि स्तबि ब धाति भ र त '' ट '' स वँसु
त्तिर जः क गीरिा वां र त '' ज्ञा न मा हृ त्य ठ त मः प्रु भा के स ज्ञ य त्यु त '' ऽ '' र ज स्त ग घ्रा
त्वँ भ व ति भा र त '' र जः स क न म सै व त मः न वँ र ज स्त पा '' रा वद्धा
ऽ रिमन्प्रवाश रु प जा य ते '' ज्ञा नै य दा त दा वि द्यावि ह्र ढँ स त्वमि ष्ठत्त
भः प्र वृत्ति रा रँ भः क र्मे णा म शु म स्पृ हा '' र ज स्ये ता नि जा य ते वि
र त र्भ '' र '' अ प्र का शोऽप्र वृ ति श्च प्र मो दो मे ह ए व च '' त म स्ये ता वि जा य ते वि हृ
कु ज '' इ '' प दा स त्वे प्र वृ द्धे तु प्र ल यं पाति ह के त्व '' त दो त म वि दा लो का न म ला

प[रं] त्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥१॥ [इ]दं [ज्ञा]नमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः

स[र्गे]ऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥२॥ मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहं ॥ सं

भवः सर्वभूतानां   ततो भवति भारत ॥३॥ सर्वयोनिषु कौंतेय मूर्त्तयः संभवंति

याः ॥ तासां ब्रह्म   महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥४॥   सत्वं रजस्तम इति गु

णाः प्रकृतिसंभवा   ॥ निबध्नंति महाबाहो देहे देहि   नमव्ययं ॥५॥ तत्र स

त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयं ॥ सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेन चानघ ॥६॥ रजो रा

गात्मकं विद्धि तृष्णासंगसमुद्भवं ॥ तन्निबध्नाति कौंतेय कर्मसंगेन देहिनां ॥७॥ तम

रं स पश्यति ॥३०॥ यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ॥ तत एव च विस्तारं ब्रह्म सं
पद्यते तदा ॥३१॥ अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ॥ शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न क
रोति न लिप्यते ॥३२॥ यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ॥ स[illegible]
तो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३३॥ यथा प्रकाश[illegible] त्येकः कृत्स्नं लोकमि
मं रविः ॥ क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भार[illegible]त ॥३४॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयो
रेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ॥ भूतप्र[illegible]तिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परं ॥३५॥ इति
श्री[illegible]गवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशा[illegible]स्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसं[illegible]दे क्षेत्रक्षेत्रज्ञ[illegible]
[illegible]म [illegible]योदशोध्यायः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ परं भू[illegible]ः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमं

ति चाप्युक्तो देहेस्मिन्पुरुषः परः॥२३॥ य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह॥ सर्वथा वर्त
मानोपि न स भूयोभिजायते॥२४॥ ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना॥ अन्ये सांख्येन
योगेन कर्मयोगे न चापरे॥२५॥ अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते
तेपि चातितरन्त्ये व मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥२६॥ यावत्संजायते किंचि
त्सत्वं स्थावरजंग मं॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ॥२७॥ स
मं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरं॥ विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्य
ति॥२८॥ समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरं॥ न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां
गतिं॥२९॥ प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः॥ यः पश्यति तथात्मानमकर्ता

तं॥ भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥१७॥ ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ॥
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितं ॥१८॥ इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ॥ मद्भ
~~क्त एत~~द्विज्ञाय म द्भावायोपपद्यते ॥१९॥ प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभा
वपि । विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवा न्॥२०॥ कार्यकारणक
र्तृत्वे हेतुः प्रकृ तिरुच्यते ॥ पुरुषः सुखदुः खानां भोक्तृत्वे हेतुरु
च्यते ॥२१॥ पुरुषः प्रकृतिस्थोहि भुंक्ते प्रकृतिजान्गुणान् ॥ कारणं गुणसंगो
स्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२२॥ उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ॥ परमात्मे

न चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी॥ विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि॥११॥
अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनं॥ एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोन्यथा
॥१२॥ ज्ञेयं यत्त त्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमस्नुते॥ अनादिमत्परं ब्रह्म नस
त्तन्नासदुच्यते॥१३॥ सर्वतः पाणिपादन्तत्सर्वतोक्षिशिरोमुखं॥ सर्व
तः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥१४॥ सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियवि
वर्जितं॥ असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च॥१५॥ बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमे
व च॥ सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत्॥१६॥ अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थि

५॥ महाभूतान्यहंकारा बुद्धिरव्यक्तमेव च॥ इंद्रियाणि दशैकं च पंच चेन्द्रिय
गोचराः॥६॥ इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं संघातश्चेतना धृतिः॥ एतत्क्षेत्रं समासेन
सविकारमुदाहृ तं॥७॥ अमानित्वमदंभित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवं॥ आचार्यो
५२ पासनं शौचं स्थै र्यमात्मविनिग्रहः॥८॥ इंद्रियार्थेषु वैराग्यमनहं
कारएव च॥ जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनं॥९॥ असक्तिर
नभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु॥ नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु॥१०॥ मयि

पायोगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोध्यायः॥ अर्जुन उवाच॥ प्रकृतिं
पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च॥ एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव॥१॥ श्रीभग
वानुवाच॥ इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते॥ एतद्यो वेत्ति तं प्रा
हुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥२॥ क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रे
षु भारत॥ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम॥३॥ तत्क्षेत्रं य
च्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत्॥ स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु॥४॥ ऋषि
भिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्॥ ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः॥

जते च यः॥ हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः॥१५॥ अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासी
नो गतव्यथः॥ सर्वारंभपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥१६॥ यो न हृष्यति न द्वेष्टि
न शोचति न कांक्ष ति॥ शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥१७॥ समश्श
त्रौ च मित्रे च तथा मानावमानयोः॥ शीतोष्णसुखदुःखे षु समः संगविवर्जि
तः॥१८॥ तुल्यनि न्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ॥ अनिकेतस्थिरमति
र्भक्तिमान्मे प्रियो न रः॥१९॥ ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते॥ श्रद्दधा
नामत्परमा भक्तास्ते ऽतीव मे प्रियाः॥२०॥ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्या

नज्ञतो मामिछाप्तुं धनंजय ॥९॥ अभ्यासेप्यसमर्थोसि मत्कर्मपरमो भव ॥ मदर्थमपि
कर्म्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥१०॥ अथैतदप्यशक्तोसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ॥ सर्व
कर्म्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥ श्रेयोहि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं
विशिष्यते ॥ ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरं ॥१२॥ अ
द्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ॥ निर्म्ममो निर
हंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥१३॥ संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्च
र्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥ यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्वि

…रातोः स्त्र… रयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥२॥ ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं
…र्युपासते ॥ सर्वत्रगमचिंत्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवं ॥३॥ सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र सम
बुद्धयः ॥ ते प्राप्नु वन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥ क्लेशोधिकतरस्तेषाम
व्यक्तासक्तचेतसां अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिर वाप्यते ॥५॥ ये तु सर्वा
णि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ॥ अनन्येनैव यो गेन मां ध्यायन्त उपास
ते ॥६॥ तेषामहं स मुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ॥ भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशि
तचेतसां ॥७॥ म य्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ॥ निवसिष्यसि मय्ये
व अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥८॥ अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरं ॥ अभ्यासयोगे

र्शन कांक्षिणः ॥५१॥ नाहं वेदै र्न तपसा न दानेन न चेज्यया। शक्य एवं विधो द्रष्टुं दृष्ट
वानसि मां यथा ॥५३॥ भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवं विधोर्ज्जुन ॥ ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन
प्रवेष्टुं च परन्तप ॥५४॥ मत्कर्म्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ॥ निर्वैरः
सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ॥५५॥ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म
विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादे विश्वरूपदर्शन योगोनामएका
दशोध्यायः ॥ अर्ज्जुन उवाच ॥ एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ॥ ये चाप्य
क्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥१॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मय्यावेश्य मनो ये मां

नैवदानैर्न चेज्याभिः न क्रियाभि न तपोभिरुग्रैः ॥ एवंरूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कु
रुप्रवीर ॥ ४८ ॥ माते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदं ॥ व्यपेतभीः
प्रीतमनाः पुनस्त्वं तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥ ४९ ॥ संजय उवाच ॥ इत्यर्जु
नं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः ॥ आश्वासयामास च
भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥ ५० ॥ अर्जुन उवाच ॥ दृष्ट्वेदम्मानुषं
रूपं तव सौम्यं जनार्दन ॥ इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥ श्रीभ
गवानुवाच ॥ सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ॥ देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं द

महमीशमीड्यं॥ पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुं॥ ४४॥ अ
दृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे॥ तदेव मे दर्शय देव रूपं प्रसी
द देवेश जगन्निवास॥ ४५॥ किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं त
थैव॥ तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥ ४६॥ श्रीभग
वानुवाच॥ मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात्॥ ते
जोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वं॥ ४७॥ न वेदयज्ञाध्यय

पृष्ठतस्ते नमोस्तुते सर्वत एव सर्व॥ अनं
तावीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोसि सर्व॥ ४०॥ सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं
हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥ अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रण
येन वापि॥ ४१॥ यच्चावहासार्थमसत्कृतोसि विहार शय्यासन भोजनेषु
एको थवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयं॥ ४२॥ पिता
सि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्॥ न त्वत्समोस्त्यभ्यधिकः
कुतोन्यो लोकत्रयेप्यप्रतिमप्रभाव॥ ४३॥ तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वा

णा ॥ ३५॥ स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च॥ रक्षां
नि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः॥ ३६॥ कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन्
गरीयसे ब्रह्मणो प्यादिकर्त्रे॥ अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं स
दसत्तत्परं यत् ३७॥ त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य
परं निधानं॥ वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्त
रूप॥ ३८॥ वायुर्यमोग्निर्वरुणः शशीकः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च
नमो नमस्तेस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोपि नमो नमस्ते॥ ३९॥ नमः पुरस्तादथ

वप्रवृत्तिं॥३१॥ श्रीभगवानुवाच॥ कालोस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तु
मिह प्रवृत्तः॥ ऋतेपि त्वां नभविष्यंति सर्वे येवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥३२॥
तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून्भुंक्ष्व राज्यं समृद्धं॥ मयैवैते
निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्॥३३॥ द्रोणं च भीष्मं च
जयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्॥ मयाहतांस्त्वं जहि माव्यथिष्ठा
युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्॥३४॥ संजय उवाच॥ एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृतांजलिर्वेपमानः किरीटी॥ नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं सगद्गदं भीत

।।तैरेषुसंदृश्यन्तेचूर्णितैरुत्तमांगैः।।२७।।यथानदीनांबहवोम्बुवेगाः
मुद्रमेवाभिमुखाद्रवन्ति।।तथातवामीनरलोकवीराविशन्तिवक्त्राण्यभिविज्व
लन्ति।।२८।।यथा प्रदीप्तंज्वलनंपतंगाविशन्तिनाशायसमृद्धवेगाः
तथैवनाशायवि शन्तिलोकास्तवापिवक्त्राणिस समृद्धवेगाः।।२९।।ले
लिह्यसेग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्व लद्भिः।।तेजोभिरापूर्य
जगत्समग्रंभास स्तवोग्राःप्रतपन्तिविष्णो।।३०।।आख्याहिमेकोभवानुग्र
रूपोनमोस्तुतेदेववरप्रसीद।।विज्ञातुमिच्छामिभवंतमाद्यंनहिप्रजानामितव

ष्ठालोकाः प्रव्यथितास्तथाहं ॥ २३ ॥ नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं व्यात्ताननं दी
प्तविशालनेत्रं ॥ दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो
॥ २४ ॥ दंष्ट्राकराला   लानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव का   लानलसन्निभानि ।
दिशो न जाने न   लभे च शर्म प्रसीद देवेश   जगन्निवास ॥ २५ ॥
अमी च त्वां धृ   तराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहै   वावनिपालसंघैः ॥
भीष्मो द्रोणः सू   तपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः ॥ २६ ॥
वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि ॥ केचिद्विलग्ना द

दिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रं पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेज
साविश्वमिदं तपन्तं ॥१९॥ द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः ॥ दृ
ष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं म्महात्मन् ॥२०॥ अमी हि त्वां सुर
संघा विशन्ति केचिद्भीताः प्रांजलयो गृणन्ति ॥ स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसंघाः स्तुवन्ति
त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः ॥२१॥ रुद्रादित्या वसवो ये च साध्या विश्वेश्विनौ मरुतश्चो
ष्मपाश्च ॥ गंधर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥२२॥ रूपं म
हत्ते बहुवक्त्रनेत्रं म्महाबाहो बहुबाहूरुपादं ॥ बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृ

रसा देवं कृताञ्जलिरभाषत॥१४॥ अर्जुन उवाच॥ पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भू
तविशेषसंघान्॥ ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान्॥१५॥
अनेकबाहूदरव क्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोनन्तरूपं॥ नान्तं न मध्यं न पुन
स्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप॥१६॥ किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च
तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तं॥ पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्दीप्तानला
र्कद्युतिमप्रमेयं॥१७॥ त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं
निधानं॥ त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे॥१८॥ अना

परमं योगमैश्वरं॥८॥संजय उवाच॥ एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः॥ दर्शया
मास पार्थाय परमं रूपमैश्वरं॥९॥ अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनं॥ अने
कदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधं॥१०॥ दिव्यमाल्यांबरधरं दिव्यगं
धानुलेपनं॥ सर्वाश्चर्यमयं देवमनंतं विश्वतो मुखं॥११॥ दिवि सूर्य
सहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता॥ यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य म
हात्मनः॥१२॥ तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा॥ अपश्यद्देवदेवस्य
शरीरे पांडवस्तदा॥१३॥ ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनंजयः॥ प्रणम्य

गतो मम ॥१॥ भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया ॥ त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चा
व्ययं ॥२॥ एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर । द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषो
त्तम ॥३॥ मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो । योगेश्वर ततो मे त्वं
२५ दर्शयात्मानमव्ययं ॥४॥ श्रीभगवानुवाच ॥ पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशो
थ सहस्रशः ॥ नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥५॥ पश्या
दित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा ॥ बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि
भारत ॥६॥ इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरं ॥ मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्
द्रष्टुमिच्छसि ॥७॥ न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा ॥ दिव्यं ददामि ते चक्षुः

त्र दहमर्जुन॥ न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरं॥ ३९॥ नान्तोस्ति मम दिव्यानां विभू
तीनां परंतप॥ एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥ ४०॥ यद्यद्विभूतिमत्सत्वं
श्रीमदूर्जितमेव वा॥ तत्तदेवावगछ त्वं मम तेजोंशसंभवं॥ ४१॥ अथवा
बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन॥ विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थि
तो जगत्॥ ४२॥ ॐ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतिविस्तारयोगो नाम दशमोध्यायः॥ अर्जुन
उवाच॥ मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितं॥ यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोयं वि

सामासिकस्य च॥ अ्यहमेवाक्षयः कालोधाताहं विखतोमुखः॥३३॥ मृत्युः सर्वहरस्वाह
मुद्भव स्व भविष्यतां॥ कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा॥३४॥ बृहत्साम तथा
साम्नां गायत्री छन्द सामहं॥ मासानां मार्गशीर्षोहमृतूनां कुसुमाकरः॥३५॥ द्यू
३३ तं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहं॥ जयोस्मि व्यवसायोस्मि सत्वं
सत्ववतामहं॥३६॥ वृष्णीनां वासुदेवोस्मि पाण्डवानां धनंजयः॥ मुनीनां
मप्यहं व्यासः क वीनामुशना कविः॥३७॥ दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जि
गीषतां॥ मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहं॥३८॥ यच्चापि सर्वभूतानां बीजं

त्तते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः॥ प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥१९॥ अहमा
त्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः॥ अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥२०॥ आदित्यान
महंविष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान॥ मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी
३१ ॥२१॥ वेदानां साम वेदोस्मि देवानामस्मि वासवः॥ इन्द्रियाणां मनश्चास्मि
भूतानामस्मि चेतना॥२२॥ रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्ष
१० सां॥ वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहं॥२३॥ पुरोधसांच मुख्यं मांवि
द्धि पार्थ बृहस्पतिं॥ सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः॥२४॥ महर्षीणां भृगुरहं गि
रामस्म्येकमक्षरं॥ यज्ञानां जपयज्ञोस्मि स्थावराणां हिमालयः॥२५॥ अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां

नात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥११॥ अर्जुन उवाच ॥ परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् ॥ पु
रुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुं ॥१२॥ आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा ॥ असितो दे
वलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥१३॥ सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव ॥ न हि ते भ
गवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः ॥१४॥ स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्त
म ॥ भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते ॥१५॥ व[illegible]मर्हस्यशेषेण दिव्या
ह्यात्मविभूतयः ॥ याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य[illegible]ष्ठसि ॥१६॥ कथं विद्याम
हं योगिंस्त्वां सदा परिचिं[illegible]यन् ॥ केषु केषु च भावेषु चिंत्योसि भगवन्मया ॥१७॥ विस्तरेणात्मनो
योगं विभूतिं च ज[illegible]यः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेमृतं ॥१८॥ अर्जुन उवाच ॥ हे
श्रीभगवा

ओं नमस गोहः द्व... मः शामः॥ सुखं दुःखं भवो भावो भयं चा... पमेव च॥४॥ अहिंसा स
मता तुष्टिस्तपो दानं ... यशः॥ भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः॥५॥ महर्षयः
स प्त पूर्वे चत्वारो — मनवस्तथा॥ मद्भावा मानसा जा ... ाये षां लोक इमाः प्रजाः
२१ ६॥ एतां विभूतिं यो — गं च मम यो वेत्ति तत्वतः॥ सोवि ... कंपेन योगेन युज्यते
नात्र संशयः॥७॥ — अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं ... प्रवत्तते॥ इति मत्वा भ
जन्ते मां बुधा भावस — मन्विताः॥८॥ मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परं॥ कथय
न्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥९॥ तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकं॥ ददामि बु
द्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥१०॥ तेषामेवानुकंपार्थमहमज्ञानजं तमः॥ नाशयाम्यात्म

३१॥ मांहि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः॥ स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिं॥३२॥
किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा॥ अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व मां॥३३॥
मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मान्नमस्कुरु॥ मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्पराय
णाः॥३४॥ इति श्रीभग वद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां यो गशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसं
वादे राजगुह्य यो गो नाम नवमोध्यायः॥ श्रीभगवा नुवाच॥ भूय एव महा
बाहो शृणु मे परमं वचः॥ यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि[illegible]त काम्यया॥१॥ न मे विदुः
सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः॥ अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः॥२॥ यो मामज
नादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरं॥ असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥३॥ बुद्धि

...नाम तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥२४॥ यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः। भूतानि यान्ति
भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ॥२५॥ पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति। तदहं भक्त्युपहृतमश्ना
मि प्रयतात्मनः ॥२६॥ यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्। यत्तपस्यसि कौ
न्तेय तत्कुरुष्व मद र्पणम् ॥२७॥ शुभाशुभफलैरेवं मो क्ष्यसे कर्मबन्धनैः। स
३० न्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥२८॥ समो ऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वे
ष्योऽस्ति न प्रियः। ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ॥२९॥ अपि चेत्सुदुरा
चारो भजते माम नन्यभाक्। साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥३०॥
क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति। कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।

ओंकार ऋक् साम यजुरेव च ॥१७॥ गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत ॥ प्रभवः प्र
लयस्थानं निधानं बीजमव्ययं ॥१८॥ तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च ॥ अमृतं चैव
मृत्युश्च सदसच्चा हमर्जुन ॥१९॥ त्रैविद्या मांसोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रा
र्थयन्ते ॥ ते पुण्यमासा द्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥२०॥ ते तं भु
क्त्वा स्वर्गलोकं विशा लं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ॥ एवं त्रयीधर्ममनुप्रप
न्ना गतागतं काम कामा लभन्ते ॥२१॥ अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहं ॥२२॥ येप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः ॥ तेपि
मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकं ॥२३॥ अहं हि सर्वधर्म्माणां भोक्ता च प्रभुरेव च ॥ न तु माम
यज्ञा

रा प्रकृतिः सूयते सचराचरं हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्त्तते ॥१०॥ अवजान
न्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितं ॥ परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरं ॥११॥ मोघाशा मो
घकर्म्माणो मोघ ज्ञाना विचेतसः ॥ राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रि
२९ ताः ॥१२॥ महात्मान स्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ॥ भजन्त्यनन्यमनसो
ज्ञात्वा भूतादिमव्य यं ॥१३॥ सततं कीर्त्तयन्तो मां यतन्त श्च दृढव्रताः ॥ नमस्यन्त
श्च मां भक्त्या नित्ययु क्ता उपासते ॥१४॥ ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते ॥ ए
कत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखं ॥१५॥ अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधं ॥ मं
त्रोहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतं ॥१६॥ पितामहस्य जगतो माता धाता पितामहः ॥ वेद्यं पवित्र

द्यावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययं ॥२॥ अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परंतप । अप्रा
प्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥३॥ मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ॥ मत्स्था
नि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥ न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमै
श्वरं ॥ भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥५॥ यथाकाशस्थितो नित्यं वा
युः सर्वत्रगो महान् । तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥६॥ सर्वभूता
नि कौंतेय प्रकृतिं यांति मामिकां ॥ कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहं ॥७॥ प्रकृ
तिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ॥ भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥८॥ न च मां
तानि कर्माणि निबध्नंति धनंजय ॥ उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥९॥ मयाध्यक्षे

गती ह्येते जगतः शाश्वते मते ॥ एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्त्तते पुनः ॥२६॥ नैते
सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन ॥ तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥२७॥
श्री वेदेषु यज्ञेषु तपुस्सु दैव दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टं ॥ अत्येति तत्सर्वमि
१२ दं विदित्वा योगी परं स्थानमुपैति चाद्यं ॥२८॥ इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु
ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे महापुरुषयोगो नामाष्टमोध्या
यः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ॥ ज्ञानं विज्ञान
सहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसे शुभात् ॥१॥ राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमं ॥ प्रत्य

शः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥१९॥ परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ॥ यः स सर्वेषु

भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति ॥२०॥ अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिं ॥ यं प्राप्य न नि

वर्तन्ते तद्धाम पर मं मम ॥२१॥ पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वन

न्यया ॥ यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततं ॥२२॥ यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं

चैव योगिनः ॥ प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥२३॥ अग्निर्ज्योतिरहः

शुक्लः षण्मासा उत्तरायणं ॥ तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥२४॥ धूमो रात्रिस्तथा

कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनं ॥ तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते ॥२५॥ शुक्लकृष्णे

याति त्यजन्देहं स याति परमां गतिं ॥१३॥ अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नि
त्यशः ॥ तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥१४॥ मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखाल
यमशाश्वतं ॥ नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः ॥१५॥ आब्रह्मभुवना
ल्लोकाः पुनरावर्तिनोर्जुन ॥ मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥१६॥
सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः ॥ रात्रिं युगसहस्रान्तां तेहोरा
त्रविदो जनाः ॥१७॥ अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ॥ रात्र्यागमे प्र
लीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥१८॥ भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ॥ रात्र्यागमेऽव

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयः॥७॥ अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसानान्यगामिना
परमंपुरुषंदिव्यंयातिपार्थानुचिंतयन्॥८॥ कविंपुराणमनुशासितारमणोरणीयां
समनुस्मरेद्यः॥ सर्वस्यधातारमचिंत्यरूपमादित्यवर्णंतमसःपर
स्तात्॥९॥ प्रयाणकालेमनसाचलेनभक्त्या युक्तोयोगबलेनचैव॥
भ्रुवोर्मध्येप्राणामावेश्यसम्यक्सतंपरंपुरुषं मुपैतिदिव्यं॥१०॥ यदक्ष
रंवेदविदोवदंति विशंतियद्यतयोवीतरागाः॥ यदिच्छंतोब्रह्मचर्यंचरंति
तत्तेपदंसंग्रहेणप्रवक्ष्ये॥११॥ सर्वद्वाराणिसंयम्यमनोहृदिनिरुध्यच॥ मूर्द्ध्न्याधाया
त्मनःप्राणमास्थितोयोगधारणां॥१२॥ ॐमित्येकाक्षरंब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन्॥ यःप्र

गोनाम सप्तमोध्यायः ॥ अर्जुन उवाच ॥ किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम । अधिभू
तं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥१॥ अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन । प्रयाणकाले
च कथं ज्ञेयोसि नियतात्मभिः ॥२॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावो
ध्यात्ममुच्यते ॥ भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्म्मसंज्ञितः ॥३॥ अधिभू
6) तं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतं । अधियज्ञोहमेवात्र देहे देह
भृतां वर ॥४॥ अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरं । यः प्रयाति स म
द्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥५॥ यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरं । तं तमेवैति
कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥६॥ तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध च ॥

द्धयः॥ परंभावमजानन्तो ममा व्ययमनुत्तमं॥२४॥ नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमा
वृतः॥ मूढोयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययं॥२५॥ वेदाहं समतीतानि वर्त्तमानानि
चार्जुन॥ भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥२६॥ इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमो
हेन भारत॥ सर्वभूतानि संमोहं सर्गे यान्ति परन्तप॥२७॥ येषां त्वन्तगतं पापं
जनानां पुण्यकर्मणां ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः॥२८॥ जराम र
णमोक्षाय मामाश्रि त्य यतन्ति ये॥ ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलं॥२९॥
साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः॥ प्रयाणकालेपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः॥३०॥ इति
श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञानविज्ञानयो

तिनोर्ज्जन॥ आर्त्तो जिज्ञासुरर्त्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥१६॥ तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते॥ प्र
योहि ज्ञानिनोत्यर्थमहं स च मम प्रियः॥१७॥ उदाराः सर्व्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतं॥ आस्थितः स हि यु
क्तात्मा मामेवानुत्तमां ग तिं॥१८॥ बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते॥ वासुदेवः सर्व्वमि
२५ ति स महात्मा सुदुर्ल्लभः॥१९॥ कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्ते न्यदेवताः॥ तं तं नियम
मास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया॥२०॥ यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्च्चितुमिच्छति॥ त
स्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहं॥२१॥ स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमी
हते॥ लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान्॥२२॥ अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेध
सां॥ देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि॥२३॥ अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबु

स्मि शशिसूर्ययोः प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥ ८ ॥ पुण्यो गंधः पृथिव्यां च तेजश्चा-
स्मि विभावसौ । जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ९ ॥ बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातं
नं । बुद्धिर्बुद्धिमताम् अस्मि तेजस्तेजस्विनामहं ॥ १० ॥ बलं बलवतां चाहं कामरागविव-
र्जितं । धर्माविरुद्धो भू- तेषु कामोस्मि भरतर्षभ ॥ ११ ॥ ये चैव सात्विका भावा राजसा-
स्तामसाश्च ये । मत्ता एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि ॥ १२ ॥ त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरे-
भिः सर्वमिदं जगत् । मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययं ॥ १३ ॥ दैवी ह्येषा गुण-
मयी मम माया दुरत्यया । मामेव ये प्रपद्यंते मायामेतां तरंति ते ॥ १४ ॥ न मां दुःकृतिनो मूढाः प्र-
पद्यंते नराधमाः । माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥ १५ ॥ चतुर्विधा भजंते मां जनाः सुकृ-

यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥ १ ॥ ज्ञानं तेहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः ॥ यज्ज्ञात्वा नेह भूयो
न्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥ २ ॥ मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यततिसिद्धये ॥ यततामपि सिद्धानां कश्चि
७३ न्मां वेत्ति तत्वतः ॥ ३ ॥ भूमिरापोनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ॥ अहंकार इतीयं
२५ मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥ ४ ॥ अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे परां ॥
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ५ ॥ एतद्योनीनि भूतानि सर्वा
ण णीत्युपधारय ॥ अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥ ६ ॥ मत्तः परतरं नान्य
त्किंचिदस्ति धनंजय ॥ मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥ ७ ॥ रसोहमप्सु कौंतेय प्रभा

तत्रतं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकं॥ यततेच ततोभूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥४३॥ पूर्वाभ्यासेन तेनैव
ह्रियतेह्यवशोपि सः॥ जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्त्तते॥४४॥ प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्ध
किल्विषः॥ अनेकजन्म संसिद्धस्ततो याति परां गतिं॥४५॥ तपस्विभ्योधिको योगी ज्ञानि
भ्योपि मतोधिकः॥ कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥४६॥ योगिनामपि
सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना॥ श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः॥४७॥ इति
श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अभ्यासयोगो नाम षष्ठोध्या
यः॥६॥ श्रीभगवानुवाच॥ मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युंजन्मदाश्रयः॥ असंशयं समग्रं मां

प इति मे मतिः॥ वश्यात्मना तु यतता शक्योवाप्तुमुपायतः॥३६॥ अर्जुन उवाच॥ अयति श्र
द्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः॥ अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति॥३७॥ कच्चिन्नोभयविभ्रष्ट
श्छिन्नाभ्रमिव नश्यति॥ अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि॥३८॥ एतन्मे संश
२३ यं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः॥ त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते॥३९॥
श्रीभगवानुवाच॥ पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते॥ नहि कल्याणकृत्कश्चिद्दु
र्गतिं तात गच्छति॥४०॥ प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः॥ शुचीनां श्रीमतां गेहे योग
भ्रष्टोभिजायते॥४१॥ अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमतां॥ एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशं॥४२॥

मानं सर्वभूतानि चात्मनि ॥ ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ २९ ॥ यो मां पश्यति सर्व
त्र सर्वं च मयि पश्यति ॥ तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥ ३० ॥ सर्वभूतस्थि
तं यो मां भजत्ये कत्वमास्थितः ॥ सर्वथा वर्तमानोपि स योगी मयि वर्त्तते ॥
३१ ॥ आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योर्जुन ॥ सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी
परमो मतः ॥ ३२ ॥ अर्जुन उवाच ॥ यो यं योगस्त्वया प्रो क्तः साम्येन मधुसूदन ॥
एतस्याहं न पश्या मि चंचलत्वात्स्थितिं स्थिरां ॥ ३३ ॥ चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बल
वद्दृढं ॥ तस्याहं निग्रहं म[illegible] वायोरिव सुदुष्करं ॥ ३४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ असंशयं महाबाहो म
नो दुर्निग्रहं चलं ॥ अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ ३५ ॥ असंयतात्मना योगो दुष्प्रा

ल्यते नाधिकं ततः॥ यस्मिंस्थितो नदुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥ २२॥ तंविद्याद्दुःखसंयो
गवियोगं योगसंज्ञितं॥ सनिश्चयेन योक्तव्यो योगोनिर्विण्णचेतसा॥ २३॥ संकल्पप्रभवाकामांस्त्यक्त्वा
सर्वानशेषतः॥ मन सैवेन्द्रियग्रामंविनियम्यसमंततः॥ २४॥ शनैः शनैरुपरमेद्बु
२२ द्ध्याधृतिगृहीतया॥ आत्मसंस्थंमनःकृत्वानकिंचिदपि चिंतयेत्॥ २५॥ यतोयतो
निश्चरतिमनश्चंचल मस्थिरं॥ ततस्ततोनियम्यैतदात्मन्येव वशंनयेत्॥ २६॥ प्रशां
तमनसंह्येनंयोगिनं सुखमुत्तमं॥ उपैतिशांतरजसंब्रह्मभूतमकल्मषं॥ २७॥ युंजन्नेवं
सदात्मानंयोगीविगतकल्मषः॥ सुखेनब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतंसुखमश्नुते॥ २८॥ सर्वभूतस्थमा

परमाम्मत्संस्थामधिगछति ॥१५॥ नात्यश्नतस्तु योगोस्ति न चैकान्तमनश्नतः ॥ न चातिस्व
प्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्ज्जुन ॥१६॥ युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्म्मसु युक्तस्वप्नाव
बोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥१७॥ यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ॥ नि
स्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥१८॥ यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सो
पमा स्मृता ॥ योगिनो यतचित्तस्य युंजतो योगमात्मनः ॥१९॥ यत्रोपरमते
चित्तं निरुद्धं योगसेवया ॥ यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥२०॥ सुखमात्यन्तिकं य
त्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियं ॥ वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्वतः ॥२१॥ यं लब्ध्वा चापरं लाभं म्म

द्वेष्यबंधुषु॥ साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥९॥ योगी युंजीत सततमात्मानं रहसि स्थि
तः॥ एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥१०॥ शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्म
नः॥ नात्युछ्रितं ना तिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरं॥११॥ तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा य
२१ तचित्तेंद्रियक्रियः॥ उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥१२॥ स
मं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः॥ संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चा
नवलोकयन्॥१३॥ प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः॥ मनः संयम्य मच्चित्तो
युक्त आसीत मत्परः॥१४॥ युंजन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः॥ शांतिं निर्वा

ति काश्चन ॥ २॥ आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म्म कारणमुच्यते ॥ योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्य
ते ॥ ३॥ यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्म्मस्वनुषज्जते ॥ सर्व्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्त
दोच्यते ॥ ४॥ उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ॥ आत्मैव ह्यात्मनो बंधु
रात्मैव रिपुरात्मनः ॥ ५॥ बंधुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ॥ अ
नात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्त्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ ६॥ जितात्मनः प्रशान्तस्य परमा
त्मा समाहितः ॥ शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥ ७॥ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो
विजितेन्द्रियः ॥ युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥ ८॥ सुहृन्मित्रार्य्युदासीनमध्यस्थ

कल्मषाः ॥ छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥२५॥ कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसा
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्त्तते विदितात्मनां ॥२६॥ स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः ॥ प्राणापा
नौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥२७॥ यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्म्मोक्षपरायणः
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥२८॥ भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहे
श्वरं सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥२९॥ इति श्रीभगवद्गीतासूप
निषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे संन्यासयोगो नाम पंच
मोध्यायः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अनाश्रितः कर्म्मफलं कार्यं कर्म्म करोति यः ॥ स संन्यासी च योगी च न नि
रग्निर्न चाक्रियः ॥१॥ यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव ॥ न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भव

त्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥१७॥ विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ॥ शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः

समदर्शिनः ॥१८॥ इहैव तैर्जितः स्वर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते

स्थिताः ॥१९॥ न प्रहृष्ये त्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियं ॥ स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद्ब्रह्म

णि स्थितः ॥२०॥ बाह्य स्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखं ॥ स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सु

खमक्षयमश्नुते ॥२१॥ ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ॥ आद्यन्तवन्तः कौन्तेय

न तेषु रमते बुधः ॥२२॥ शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् ॥ कामक्रोधोद्भवं वेगं स

युक्तः स सुखी नरः ॥२३॥ लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः छिन्नद्वैधा यो ऽन्तःसुखो ऽन्तरारामस्त

थान्तर्ज्योतिरेव यः ॥ स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतो ऽधिगच्छति ॥२४॥ लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीण

न्त्ववित् ॥ पश्यञ् शृण्वन् स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन् ॥८॥ प्रलपन् विसृजन् गृह्णन्नुन्मिषन्निमि
षन्नपि ॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेषु वर्तंत इति धारयन् ॥९॥ ब्रह्मण्याधाय कर्म्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः
५ लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवांभसा ॥१०॥ कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिंद्रियैरपि ॥ यो
१० गिनः कर्म्म कुर्वंति संगं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥११॥ युक्तः कर्म्मफलं त्यक्त्वा शांतिमाप्नोति नै
ष्ठिकीं ॥ अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥१२॥ सर्वकर्म्माणि मनसा संन्यस्या
स्ते सुखं वशी ॥ नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥१३॥ न कर्तृत्वं न कर्म्माणि लोक
१५. स्य सृजति प्रभुः ॥ न कर्म्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥१४॥ नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव
सुकृतं विभुः ॥ अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यंति जंतवः ॥१५॥ ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः ॥ ते
षामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परं ॥१६॥ तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ॥ गच्छंत्यपुनरावृ

उवाच॥ सन्यासं कर्म्मणां कृष्ण पुनर्य्योगं च शंससि॥ यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितं॥ १॥ श्रीभ
गवानुवाच॥ सन्यासः कर्म्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ॥ तयोस्तु कर्म्मसन्यासात्कर्म्मयोगो विशि
ष्यते॥ २॥ ज्ञेयः स नि सः त्यसन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति॥ निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं
बंधात्प्रमुच्यते॥ ३॥ सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदंति न पण्डिताः॥ एकमप्या
स्थितस्सम्यगुभयो र्विन्दते फलं॥ ४॥ यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि ग
म्यते॥ एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति॥ ५॥ सन्यासस्तु महाबाहो दुःखमा
प्तुमयोगतः॥ योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म न चिरेणाधिगच्छति॥ ६॥ योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजि
तात्मा जितेंद्रियः सर्वभूता त्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते॥ ७॥ नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत

ज्ञानाग्निः सर्वकर्म्माणि भस्म[illegible] कुरुते तथा ॥३७॥ नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ॥ तत्स्वयं यो
गसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥३८॥ श्रद्धावाल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ॥ ज्ञानं लब्ध्वा परां शांति
मचिरेणाधिगच्छ ति ॥३९॥ अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ॥ नायं लो
१८ कोस्ति न परो न सु खं संशयात्मनः ॥४०॥ योगसन्न्य स्तकर्म्माणं ज्ञानसंछिन्न
संशयं ॥ आत्मवं तं न कर्म्माणि बध्नन्ति धनंज यं ॥४१॥ तस्मादज्ञानसं
भूतं हृत्स्थं ज्ञाना सिनात्मनः ॥ छित्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥४२॥ इ
ति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे चतुर्थोध्यायः ॥ [illegible]

षाः ॥३०॥ यज्ञशिष्टामृतभुजो यांति ब्रह्म सनातनं ॥ नायं लोकोस्त्ययज्ञस्य कुतोन्यः कुरुसत्तम ॥३१॥ एवं ब
हुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ॥ कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥३२॥ श्रेयान्द्रव्य
मयाद्यज्ञाज्ज्ञानय ज्ञः परंतप ॥ सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥३३॥
तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ॥ उपदेक्ष्य न्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्व
दर्शिनः ॥३४॥ यज्ज्ञा त्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पा ण्डव ॥ येन भूतान्यशे
षेण द्रक्ष्यस्यात्म न्यथो मयि ॥३५॥ अपि चेदसि पापे भ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ॥३६॥ यथैधांसि समिद्धोग्निर्भस्मसात्कुरुतेर्जुन ॥

ब्रह्मार्प्पणं ब्रह्म हवि ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतं। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म्मसमाधिना ॥२४॥ दैवमे
वापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते। ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥२५॥ श्रोत्रादीनी
9 न्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति। शब्दादीन्विषयानन्ये इंद्रियाग्निषु जुह्वति ॥२६॥
10 सर्व्वाणीन्द्रियकर्म्माणि प्राणकर्म्माणि चापरे। आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्व
ति ज्ञानदीपिते ॥२७॥ द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे। स्वाध्यायज्ञानयज्ञा
श्च यतयः संशितव्रताः ॥२८॥ अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे। प्राणापानगती रुध्वा प्राणाया
मपरायणाः ॥२९॥ अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति। सर्व्वेप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्म

णो गतिः॥१७॥ कर्म्मण्यकर्म्म यः पश्येदकर्म्मणि च कर्म्म यः॥ स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः
कृत्स्नकर्म्मकृत॥१८॥ यस्य सर्व्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्ज्जिताः॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्म्माणं त
माहुः पण्डितं बुधाः॥१९॥ त्यक्त्वा कर्म्मफलासंगं नित्यतृप्तो निराश्रयः॥ कर्म्मण्यभि
प्रवृत्तोपि नैव किंचि त्करोति सः॥२०॥ निराशीर्यत चित्तात्मा त्यक्तसर्व्वप
रिग्रहः॥ शारीरं केवलं कर्म्म कुर्व्वन्नाप्नोति किल्बि षं॥२१॥ यदृच्छाला
भसंतुष्टो द्वंद्वातीतो विमत्सरः॥ समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते॥
२२॥ गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः॥ यज्ञायाचरतः कर्म्म समग्रं प्रविलीयते॥२३॥

वर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्व्वशः ॥११॥ कांक्षन्तः कर्म्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः । क्षिप्रं हि मा-
नुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्म्मजा ॥१२॥ चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म्मविभागशः । तस्य कर्त्ता-
रमपि मां विद्ध्यक- र्त्तारमव्ययं ॥१३॥ न मां कर्म्माणि लिंपन्ति न मे कर्मफले स्पृहा । इ-
१८ ति मां योभिजानाति कर्म्मभिर्न्न स बध्यते ॥१४॥ एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म्म पूर्वैरपि
मुमुक्षुभिः ॥ कुरु कर्म्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतं ॥१५॥ किं कर्म्म किमक-
र्म्मेति कवयोप्यत्र मोहिताः ॥ तत्ते कर्म्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥
१६ ॥ कर्म्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्म्मणः ॥ अकर्म्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्म्म

ॐ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्ज्जुनसंवादे कर्म्मयोगोना-
म तृतीयोध्यायः ॥३॥ श्रीभगवानुवाच ॥ इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययं ॥ विवस्वान्मन-
वे प्राह मनुरिक्ष्वा कवेऽब्रवीत ॥१॥ एवं परंपराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ॥
१५ स कालेनेह मह ता योगो नष्टः परंतप ॥२॥ स एवायम्मया तेद्य योगः
प्रोक्तः पुरातनः ॥ भक्तोसि मे सखा चेति रहस्यंह्ये तदुत्तमं ॥३॥ अर्ज्जुन उ-
वाच ॥ अपरं भव तो जन्म परं जन्म विवस्वतः ॥ कथमेतद्विजानीयां त्वमा-
दौ प्रोक्तवानिति ॥४॥ श्रीभगवानुवाच ॥ बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्ज्जुन ॥ ताव्य

र्ह्निर्यथादर्शो मलेन च॥ यथोल्वेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतं॥३८॥ आवृ
तं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा॥ कामरूपेण कौंतेय दुष्पूरेणानलेन च॥३९॥
इंद्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते॥ एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमा
वृत्य देहिनं॥४०॥ तस्मात्वमिंद्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ॥ पाप्मा
नं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनं॥४१॥ इंद्रियाणि पराण्याहु
रिंद्रियेभ्यः परं मनः॥ मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः॥४२॥
एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना॥ जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदं॥४३॥

विमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥३२॥ सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ॥ प
कृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥३३॥ इंद्रियस्येंद्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थि
ठी तौ ॥ तयोर्न्न वश मागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपंथिनौ ॥३४॥ श्रेयान्स्वधर्म्मो विगु
णः परधर्म्मात्स्व नुष्ठितात् ॥ स्वधर्म्मे निधनं श्रे यः परधर्म्मो भयावहः
१४ ॥३५॥ अर्जुन उवा च ॥ अथ केन प्रयुक्तोयं पापं चरति पूरुषः ॥ अनिच्छन्न
6 पि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः ॥३६॥ श्रीभगवानुवाच ॥ काम एष क्रोध एष रजोगु
णसमुद्भवः ॥ महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणं ॥३७॥ धूमेनाव्रियते

युक्तः समाचरन ॥२६॥ प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्म्माणि सर्व्वशः अहंकारविमूढात्मा
कर्त्ताहमिति मन्यते ॥२७॥ तत्ववित्तु महाबाहो गुणकर्म्मविभागयोः॥ गुणा गुणेषु व
र्त्तन्त इति मत्वा न स ज्जते॥२८॥ प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्ते गुणकर्म्मसु॥ ता
नकृत्स्नविदो मन्दा न्कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥२९॥ मयि सर्व्वाणि कर्म्मा
णि संन्यस्याध्यात्म चेतसा॥ निराशीर्न्निर्म्ममो भू त्वा युध्यस्व विगत
ज्वरः ॥३०॥ ये मे म[illegible]मिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः॥ श्रद्धावन्तोनसूयन्तो
मुच्यन्ते तेपि कर्म्मभिः ॥३१॥ ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतं॥ सर्व्वज्ञान

णैवहि संसिद्धिमास्थ्य॥ जनकादयः॥ लोकसंग्रहमेवापि संपश्य कर्तुमर्हसि॥२०॥ यद्य
दाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः॥ स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥२१॥ न मे पार्थास्ति कर्त
२ व्यं त्रिषु लोकेषु किंच न॥ नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि॥२२॥ यदि ह्यहं न
१२ वर्तेयं जातु कर्मण्य तन्द्रितः॥ मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥२३॥ उत्सी
देयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहं॥ संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्याम
मिमाः प्रजाः॥२४॥ सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत॥ कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षु
र्लोकसंग्रहं॥२५॥ न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनां॥ जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्

त सर्वकिल्बिषैः भुंजते ते त्वघं पापा ये पचंत्यात्मकारणात्॥१३॥ अन्नाद्भवंति भूतानि पर्ज
न्यादन्नसंभवः॥ यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥१४॥ कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि
ब्रह्माक्षरसमु द्भवं॥ तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितं॥१५॥
एवं प्रवर्तितं च क्रं नानुवर्तयतीह यः॥ अघायुरिंद्रियारामो
मोघं पार्थ स जी वति॥१६॥ यस्त्वात्मरतिरेव स्या दात्मतृप्तश्च मानवः
आत्मन्येव च स तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते॥१७॥ नैव तस्य कृतेनार्थो ना
कृतेनेह कश्चन॥ न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः॥१८॥ तस्मादसक्तः स
ततं कार्यं कर्म समाचर॥ असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥१९॥ कर्म

मूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥६॥ यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ॥ कर्म्मे-
न्द्रियैः कर्म्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥७॥ नियतं कुरु कर्म्म त्वं कर्म्म ज्यायो ह्य-
७ कर्म्मणः ॥ शरी रयात्रापि च ते न प्रसिध्येदकर्म्मणः ॥८॥ यज्ञार्थात्कर्म्म-
११ णोन्यत्र लोकोयं कर्म्मबंधनः ॥ तदर्थं कर्म्म कौंतेय मुक्तसंगः
समाचर ॥९॥ स हयज्ञैः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ॥ अनेन
श्री प्रसविष्यध्वमे ष वोस्त्विष्टकामधुक् ॥१०॥ देवान्भावयतानेन ते देवा भा-
वयन्तु वः ॥ परस्परंभावयंतः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥११॥ इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते य-
ज्ञभाविताः ॥ तैर्द्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥१२॥ यज्ञशिष्टाशिनः संतो मुच्यं-

संवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोध्यायः॥ अर्जुन उवाच॥ ॐ
ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन। तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव॥
व्यामिश्रेणेव वाक्ये न बुद्धिं मोहयसीव मे॥ तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोह
माप्नुयां॥ २॥ श्रीभ गवानुवाच॥ लोकेस्मि द्विविधा नि ष्ठा पुरा प्रोक्ता मया
नघ॥ ज्ञानयोगे न सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनां॥ ३॥ न कर्मणा
मनारंभान्नैष्कर्म्यं पुरुषोश्नुते॥ न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति॥
४॥ न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्टत्यकर्मकृत्॥ कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वःप्र
कृतिजैर्गुणैः॥ ५॥ कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्॥ इन्द्रियार्थान्वि

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥६८॥
या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी॥ यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥६९॥
७ आपूर्यमाणम चलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशंति यद्वत्॥ तद्वत्कामा यं प्र
११ विशंति सर्व स शांतिमा प्नोति न कामकामी॥७०॥ विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्च
७ रति निस्पृहः नि र्ममो निरहंकारः स शांतिम धिगच्छति॥७१॥ ए
षा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनं प्राप्य विमुह्यति॥ स्थित्वास्यामंतकालेपि ब्रह्मनिर्वाण
मृच्छति॥७२॥ इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन

अर्जुन उवाच॥ स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव॥ स्थितधीः किं प्रभाषे
त किमासीत व्रजेत किं॥५४ श्रीभगवानुवाच॥ प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान्॥
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥५५॥ दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु
१० विगतस्पृहः॥ वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥५६॥ यः सर्वत्रानभिस्ने
हस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभं॥ नाभिनंदति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५७॥ य
दा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः॥ इंद्रियाणींद्रियार्थेभ्यस्त
स्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥५८॥ विषया विनिवर्तंते निराहारस्य देहिनः॥ रसवर्जं रसोप्य
स्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥५९॥ यततो ह्यपि कौंतेय पुरुषस्य विपश्चितः॥ इंद्रियाणि

प्रमाथीनि हरंति प्रसभम्मनः ॥६०॥ तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ॥ वशे हि य
स्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥६१॥ ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते ॥ संगात्सं
जायते कामः कामा त्क्रोधोभिजायते ॥६२॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिना शो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥६३॥ राग द्वेषवियुक्तैस्तु विषया
णींद्रियैश्चरन् ॥ आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसाद मधिगच्छति ॥६४॥ प्रसा
दे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते ॥ प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठ
ते ॥६५॥ नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ॥ न चाभावयतः शांतिरशांतस्य कुतः सु
खं ॥६६॥ इंद्रियाणांहि चरतां यन्मनोनुविधीयते ॥ तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवांभसि ॥६७॥

णि त संगो स्त्व कर्म्माणि ॥४७॥ योगस्थः कुरु कर्म्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय ॥ सिद्ध्यासिद्ध्योः समो भू

त्वा समत्वं योग उच्यते ॥४८॥ दूरेण ह्य वरं कर्म्म बुद्धि योगाद्धनंजय ॥ बुद्धौ शरण

मन्विच्छ कृपणा ः फल हेतवः ॥४९॥ बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदु

ष्कृते तस्माद्योगा य युज्यस्व योगः कर्म्मसु कौश लं ॥५०॥ कर्म्मजं बुद्धि

युक्ता हि फलं त्य क्त्वा मनीषिणः ॥ जन्मबंधविनिर्मु क्ताः पदं गछंत्यनाम

यं ॥५१॥ यदा ते मोहकलि बुद्धि र्व्यतितरिष्यति ॥ तदा गंतासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥५२॥

श्रुति विप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ॥ समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥५३॥

वसायिनां॥४१॥ यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदंत्यविपश्चितः॥ वेदवादरताः पार्थ
नान्यदस्तीति वादिनः॥४२॥ कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदां॥ क्रियाविशेषब
हुलां भोगैश्वर्य गतिं प्रति॥४३॥ भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेत
सां॥ व्यवसाया त्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीय ते॥४४॥ त्रैगुण्यविष
या वेदा निस्त्रैगु ण्यो भवार्जुन॥ निर्द्वंद्वो नित्य सत्वस्थो निर्योगक्षे
म आत्मवान॥४५॥ यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके॥ तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्म
णस्य विजानतः॥४६॥ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन॥ मा कर्मफलहेतुर्भू

यास्यसि॥ अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः॥ निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं त
तो दुःखतरन्नु किं ॥३६॥ हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीं॥ तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय
युद्धाय कृतनिश्च यः॥३७॥ सुखदुःखे लाभालाभौ जयाजयौ॥ ततो युद्धाय युज्य
स्व नैवं पापम वाप्स्यसि ॥३८॥ एषा तेभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्वि
मां शृणु॥ बुद्ध्या तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहा स्यसि ॥३९॥ नेहाभि
क्रमनाशोस्ति प्रत्यवायो न विद्यते॥ स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्
४०॥ व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन॥ बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोव्य

२९॥ देही नित्यमवध्यो यं देहे सर्व्वस्य भारत तस्मात्सर्व्वाणि भूतानि न त्वं शोचितु
मर्हसि॥३०॥ स्वधर्म्ममपि चावेक्ष्य न विकंपितुमर्हसि॥ धर्म्याद्धि युद्धाछ्रेयोन्यत्
६७ क्षत्रियस्य न वि द्यते॥३१॥ यदृछया चोपपन्नं स्वर्ग्गद्वारमपावृतं॥
८ सुखिनः क्षत्रिया ः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशं ॥३२॥ अथ चेत्त्वमिमं ध
र्म्यं संग्राममन्न क रिष्यसि॥ ततः स्वधर्म्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि॥
३३॥ अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेव्ययां॥ संभावितस्य चाकीर्त्तिर्म्मरणादतिरि
च्यते॥३४॥ भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः॥ येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा

स्थाणुरचलोयं सनातनः॥२४॥ अव्यक्तोयमचिं त्योयमविकार्योयमु
च्यते॥ तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥२५॥ अथ चैनं नित्यजातं नि
त्यं वा मन्यसे मृ तं॥ तथापि त्वं महाबाहो नैनं शोचितुमर्हसि॥२६॥ जा
तस्य हि ध्रुवो मृत्यु र्ध्रुवं जन्म मृतस्य च॥ तस्मा दपरिहार्येर्थे न त्वं शो
चितुमर्हसि॥२७॥ अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तम ध्यानि भारत॥ अव्यक्ता
निधनान्येव तत्र का रिदेवना॥२८॥ आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्व
दति तथैव चान्यः॥ आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्

ते हतं । उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥ १९ ॥ न जायते म्रियते वा कदाचिन्ना
यं भूत्वा भविता वा न भूयः ॥ अजो नित्यः शाश्वतो यं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरी
रे ॥ २० ॥ वेदाविना शिनं नित्यं य एनमजमव्ययं कथं स पुरुषः पार्थ कं
७ घातयति हन्ति कं ॥ २१ ॥ वासांसि जीर्णानि यथा वि हाय नवानि गृह्णाति
नरोऽपराणि त थाशरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति न
वानि देही ॥ २२ ॥ नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ॥ न चैनं क्लेदयन्त्यापो न
शोषयति मारुतः ॥ २३ ॥ अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्य एव च ॥ नित्यः सर्वगतः

था देहे कौमारं यौवनं जरा॥ तथा देहान्तरप्राप्ति र्धीरस्तत्र न मुह्यति॥१३॥ मात्रास्प
र्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः॥ आगमापायिनोनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत॥१४॥ यं
हि न व्यथयंत्येते पुरुषं पुरुषर्षभ॥ समदुःखसुखं धीरं सोमृतत्वाय क
ल्पते॥१५॥ नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः॥ उभयोरपि
दृष्टोन्तस्त्वनयोस्त त्त्वदर्शिभिः॥१६॥ अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततं॥ विनाश
मव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति॥१७॥ अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः॥
अनाशिनोप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत॥१८॥ य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्य

णोगतिः॥१७॥ कर्म्मण्यकर्म्म यः पश्येदकर्म्मणि च कर्म्म यः॥ स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः
कृत्स्नकर्म्मकृत॥१८॥ यस्य सर्व्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्ज्जिताः॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्म्माणं त
माहुः पण्डितं बुधाः॥१९॥ त्यक्त्वा कर्म्मफलासंगं नित्यतृप्तो निराश्रयः॥ कर्म्मण्यभि
प्रवृत्तोपि नैव किंचित्करोति सः॥२०॥ निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्व्वप
रिग्रहः॥ शारीरं केवलं कर्म्म कुर्व्वन्नाप्नोति किल्बिषं॥२१॥ यदृच्छाला
भसंतुष्टो द्वंद्वातीतो विमत्सरः॥ समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि स निबध्यते॥
२२॥ गतसंगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः॥ यज्ञायाचरतः कर्म्म समग्रं प्रविलीयते॥२३॥

अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्त्तिकरमर्जुन ॥२॥ क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्वय्युपपद्यते
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥३॥ अर्जुन उवाच ॥ कथं भीष्ममहं संख्ये द्रो
णं च मधुसूदन ॥ इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥४॥ गुरूनह
त्वा हि महानुभावा श्रेयो भोक्तुं भैक्षमपीह लोके ॥ हत्वार्थकामांस्तु गुरूनि
हैव भुंजीय भोगा न्रुधिरप्रदिग्धान् ॥५॥ न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो य
द्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः ॥ यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेवस्थिताः प्रमुखे धार्तरा
ष्ट्राः ॥६॥ कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेताः ॥ यच्छ्रेयः स्यान्नि

अहो वत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयं॥ यद्राज्यसुखलोभेन हंतुं स्वजनमुद्यताः॥४५॥ य
दि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः॥ धार्त्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत्॥४६॥
संजय उवाच॥ एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्॥ विसृज्य सशरं चा
पं शोकसंविग्नमा नसः॥४७॥ इति श्रीभगवद्गीतासू पनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां
योगशास्त्रे श्रीकृ ष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषाद योगो नाम प्रथमोध्यायः॥
संजय उवाच॥ तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणं॥ विषीदंतमिदं वाक्यमुवाच म
धुसूदनः॥१॥ श्रीभगवानुवाच॥ कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितं॥

श्यंति लोभोपहतचेतसः ॥ कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकं ॥ ३८ ॥ कथं न ज्ञेयमस्माभिः पा
पादस्मान्निवर्तितुं ॥ कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥ ३९ ॥ कुलक्षये प्रणश्यंति कुल
धर्माः सनातनाः ॥ ध र्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोभिभवत्युत ॥ ४० ॥ अधर्माभिभवात्कृ
ष्ण प्रदुष्यंति कुल स्त्रियः ॥ स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जाय तेवर्णसंकरः ॥ ४१ ॥ सं
करो नरकायैव कु लघ्नानां कुलस्य च ॥ पतंति पितरो ह्येषां लुप्तपिंडोदकक्रि
याः ॥ ४२ ॥ दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः ॥ उत्साद्यंते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्व
ताः ॥ ४३ ॥ उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन ॥ नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥

ष्णस न च राज्यं सुखानि च ॥ किं नो राज्येन गोविंद किं भोगैर्जीवितेन वा ॥ ३२ ॥ येषामर्थे कांक्षितं नो राज्य
भोगाः सुखानि च ॥ त इमेवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥ ३३ ॥ आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः संबंधिनस्तथा ॥ ३४ ॥ एतान्न हंतुमिच्छामि घ्नतोपि मधु
४ सूदन ॥ अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किंनु महीकृते ॥ ३५ ॥ निहत्य धार्तराष्ट्रा
न्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ॥ पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥ तस्मान्नार्हा
वयं हंतुं धार्तराष्ट्रान्स्वबांधवान् ॥ स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥ ३७ ॥ यद्यप्येतेन प

हाब आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥२६॥ श्वशुरान्सुहृदश्चैव
सेनयोरुभयोरपि ॥ तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान् बन्धूनवस्थितान् ॥२७॥ कृपया परया
विष्टो विषीदन्निदम ब्रवीत् ॥ अर्जुन उवाच ॥ दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितं ॥
॥२८॥ सीदन्ति मम गात्रा णि मुखं च परिशुष्यति वेपथुश्च श रीरे मे रोमहर्षश्च जाय
ते ॥२९॥ गांडीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ॥ न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥३०॥ निमि
त्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ॥ न च श्रेयोनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥३१॥ न कांक्षे विजयं

सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेच्युत ॥२१॥ यावदेतान्निरीक्षेहं योद्धुकामान
वस्थितान् ॥ कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे ॥२२॥ योत्स्यमानानवेक्षेहं य ये
७ तेऽत्र समागताः धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥२३॥ संजय उवा
३ च ॥ एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत ॥ सेनयोरुभयोर्मध्ये
८ स्थापयित्वा रथोत्तमं ॥२४॥ भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षितां ॥ उवा
च पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति ॥२५॥ तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथ पितामह

लः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥१६॥ काश्यश्च परमेष्वासः शिख
ण्डी च महारथः धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥१७॥ द्रुपदो द्रौपदेयाश्च स
र्वशः पृथिवीपते । सौभद्रश्च महाबाहुः शंखान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥१८॥
स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्य
नुनादयन् ॥१९॥ अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनु
रुद्यम्य पाण्डवः ॥२०॥ हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ॥ अर्जुन उवाच ॥

वाभिरक्षंतु भवंतः सर्व एवहि ॥११॥ तस्य संजनयन् हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ॥
सिंहनादं विनद्योच्चैः शंखं दध्मौ प्रतापवान् ॥१२॥ ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानक
गोमुखाः सहसैवाभ्यहन्यंत स शब्दस्तुमुलोभवत् ॥१३॥ ततः श्वेतै
र्हयैर्युक्ते महतिस्यंदने स्थितौ ॥ माधवः पांडवश्चैव दिव्यौ शंखौ प्रदध्म
तुः ॥१४॥ पांचजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनंजयः पौंड्रं दध्मौ महाशंखं
भीमकर्मा वृकोदरः ॥१५॥ अनंतविजयं राजा कुंतीपुत्रो युधिष्ठिरः नकु

वान् सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्वएवमहारथाः ॥६॥ अस्माकं तु विशिष्टा ये ताञ्चिबोध द्वि
जोत्तम ॥ नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥७॥ भवान्भीष्मश्च कर्ण
श्च कृपश्च समि तिंजयः ॥ अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥८॥
न्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ना नाशस्त्रप्रहरणाः
सर्वे युद्धविशारदाः ॥९॥ अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितं ॥ पर्याप्तं त्विद
मेतेषां बलं भीमाभिरक्षितं ॥१०॥ अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः भीष्मे

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीरामाय नमः ॥ धृतराष्ट्र उवाच ॥ धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ॥
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ १ ॥ संजय उवाच ॥ दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्त
दा ॥ आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥ पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं च
मूं ॥ व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥ अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनस
मा युधि ॥ युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥ ४ ॥ धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराज
श्च वीर्यवान् ॥ पुरुजित्कुंतिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंगवः ॥ ५ ॥ युधामन्युश्च विक्रांत उत्तमौजाश्च वीर्यवा

ष दै गी पक्षि यं सा म गः ।। ध्याना वस्थित तद्ग तेन मन सा प श्यन्ति यं योगि नो
य स्वा स न्न वि दुः सु रा सु र ग णा दे वा य त स्मै न मः ।। ॐ ।। इति न्यास समाप्तः

दुर्योधनावर्त्तिनी सोत्तीर्णा खलु पाण्डवै रणनदी कैवर्त्तकः केशवः ॥६॥ पाराश
र्यवचः सरोजममलं गीतार्थगंधोत्कटं नानाख्यानककेसरं हरिकथासंबोधना
बोधितं ॥ लोकेस ज्जनषट्पदैरहरहः पेपी यमानं मुदा भूया
द्भारतपंकजं क लिमलप्रध्वंसिनः श्रेयसे ॥ ७॥ मूकं करोति वा
चालं पंगुं लंघय ते गिरिं ॥ यत्कृपा तमहं वंदे परमानंदमाधवं ॥
८॥ यं ब्रह्मा वरुणेंद्ररुद्रमरुतः स्तुन्वंति दिव्यैः स्तवैर्वेदैः सांगपदक्रमोपनि

त तैं लं पू र्णीः प्र क्षा लि तो ज्ञा न म पः प्र दी पः ॥ २ ॥ प्र प न्न पा रि जा ता य तो त्र वे त्रै क पा णा

ये ॥ ज्ञा न मु द्रा य कृ ष्णा य गी ता मृ त दु हे न मः ॥ ३ ॥ स र्वो प नि ष दो गा वो

दो ग्धा गो पा ल न न्द नः ॥ पा र्थो व त्स स्सु धी र्भो क्ता दु ग्धं गी ता मृ त म्म ह त्

४ ॥ व सु दे व सु तं दे वं कं स चा णू र म र्द नं ॥ दे व की प र मा न न्दं कृ

ष्णं वं न्दे ज ग द्गु रुं ५ ॥ भी ष्म द्रो णा त टा ज य द्र थ ज ला गां धा र नी लो त्प ला श

ल्य ग्रा ह व ती कृ पे णा व हि नी क र्णे न वे ला कु ला ॥ अ श्व त्था म वि क र्ण घो र म क रा

यः सर्वगतस्थाएरिंतिकं वचायहुँ ॥ पश्यमे पार्थिरूपा शाातने न्नं न्नं याप
वोधु ॥ नानाविधानिदिव्यानीत्यस्त्रायपद्दृ ॥ सीक्ष्मपीत्यर्थं जपेविनि योगः अथध्या
६ नँ ॥ पार्थाय प्रति बोधिताम्भगवताना सायसोन स्वयं व्यासेनग्रथिता प्र
नु राााम्रुनिनामध्ये महाभारतं ॥ अद्वैतामृत वर्षिणीं भगवतीम
६ शादशाध्यायिनीम म्बत्वामनुसन्दधामि भग वज्ञीतं भवद्वेषिणीं
॥ नमो स्तुते व्यासविशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ॥ येनत्वया भार

इति तर्जनीभ्यां नमः॥ अकेद्योयमदाह्यायमलोद्योशोष्य एव च इति मध्यमाभ्यां नमः॥ नि
त्यः सर्वगतस्था णुरचलोयं सनातन इति अनामिकाभ्यां नमः॥ पश्य
मे पार्थ रूपाणि शतशोथ सहस्रशः इति कनिष्ठि—काभ्यां न
मः॥ नानाविधा नि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि नि वेति करतलक
रपृष्ठाभ्यां नमः बैनंकिछत्ति शस्त्राणि इति हृदयाय नमः॥ न चैनं क्ले
दयन्त्यापइति शिरसे स्वाहा॥ अकेद्योयमदाह्यायमिति शिखायै वौषट्॥ नि
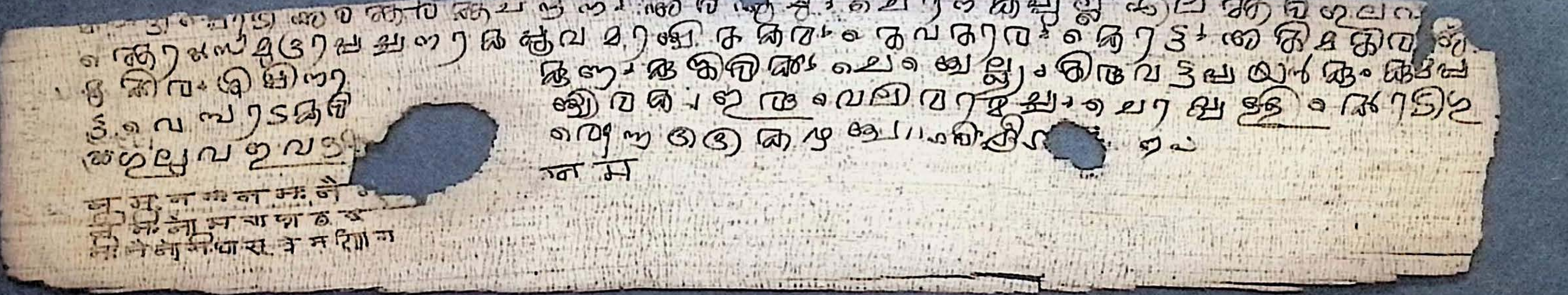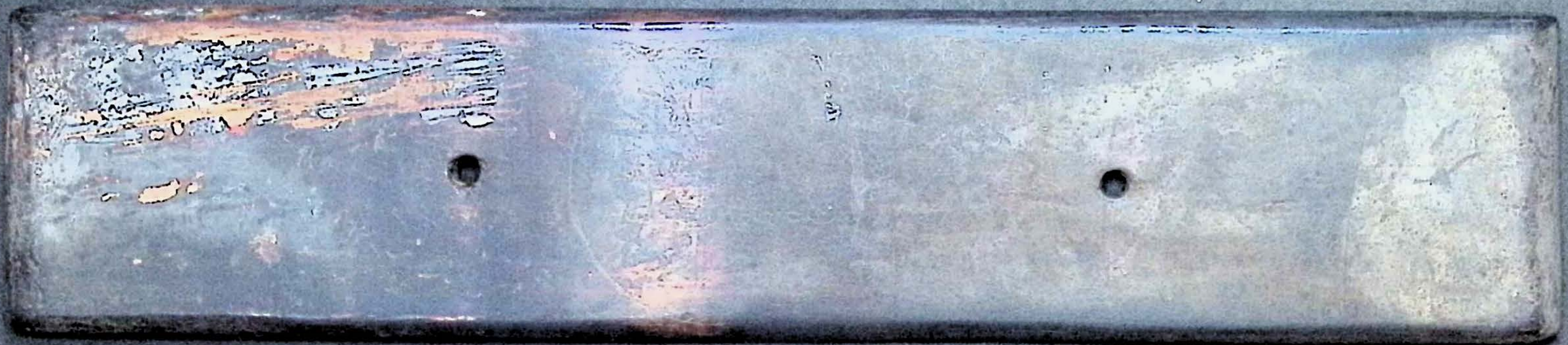
श्रीगणेशाय नमः॥ श्रीरामाय नमः॥ ॐ अस्य श्रीभगवद्गीतामंत्रस्य भगवान्वे
दव्यास ऋषिरनुष्टुप् छंदः श्रीकृष्णः परमात्मा देवता॥ अशोच्यानन्वशोच
स्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे इति बीजं॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मा
मेकं शरणं व्रज इति शक्तिः॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्या
मि मा शुचः इति कीलकं॥ नैनं छिंदंति शस्त्राणि नैनं दहति
पावक इति अंगुष्ठाभ्यां नमः॥ न चैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुत